अचल मेरा कोई

(सामाजिक उपन्यास)

वृन्दावनलाल वर्मा, एडवोकेट

(लेखक—झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, प्रेम की भेंट, मुसाहिबजू,
गढ़-कुण्डार, विराटा की पद्मिनी, राखी की लाज, लगन,
कचनार, कुण्डली-चक्र, हँस मयूर आदि)

प्रथम संस्करण

'मयूर-प्रकाशन'
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

मूल्य ३।।।)

प्रकाशक—
सत्यदेव वर्मा बी. ए., एल-एल. बी.
मयूर-प्रकाशन, झाँसी।

प्रथमबार—१९४८

मूल्य ३।।।) रुपया

मुद्रक—
द्वारिकाप्रसाद मिश्र 'द्वारिकेश'
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

परिचय

इस उपन्यास का परिचय उपन्यास के भीतर है। जो लोग दैनिक या साप्ताहिक पत्र पढ़ते रहते हैं उन्हें १९४५ के दिसम्बर से लेकर १९४८ तक की विशेष घटनाओं पर कल्पना को घुमाने से उपन्यास की मुख्य-मुख्य घटनाओं का स्मरण हो आवेगा। यदि घटनाएँ याद न आरही हों तो सिनेमा घरों, सड़कों और घरों में उन घटनाओं को ढूँढ़लें। नगरों और गांवों में, अपनी और अपने से बाहर के मानव की, प्रकृति में, ऊपरी टटोल का प्रश्रय कुछ अधिक सहायता न देगा, परन्तु ज़रा भीतर झांकने से प्रतीति हो जायगी कि कथानक का आधार तथ्य पर है। थोड़ा और भीतर झांका जायगा तो जो कुछ दिखलाई पड़ेगा वह दैनिकों या साप्ताहिकों के समाचार स्तम्भों में नहीं मिलता है, इसलिए यदि १९४५ से १९४८ तक के या किसी भी काल के पत्रों में या उनकी स्मृति में कुछ प्राप्त न हो सके तो न तो अश्चर्य होना चाहिए और न परिताप ही। जो कुछ बाहर या भीतर होता रहता है उसीको समाज के सामने लाने का प्रयत्न 'अचल मेरा कोई ~~~~~~ ' में है।

कुन्ती 'अचल मेरा कोई ~~~~~~ ' के आगे कुछ लिखना चाहती थी, परन्तु नहीं लिख पाई, या नहीं लिख सकी। मैं भी कुछ और अधिक नहीं लिखूँगा।

वृन्दावनलाल वर्मा

अचल मेरा कोई

[१]

जेल की दीवारों के भीतर काफ़ी चहल-पहल थी। सिपाही अपने बटन और जूते पोछ रहे थे। वार्डर तौलिया को फटकार कर कन्धे पर सफ़ाई के साथ रखने के उद्योग में थे। जेलर चैन की सांस के साथ अधैर्य का बर्ताव करते हुए झट झट रजिस्टर लौट रहा था—लौटते लौटते घड़ी को भी देखता जाता था।

उसको ज़िला मैजिस्ट्रेट का फ़ोन मिला था, 'ठीक चार बजे छोड़ देना,' क़ायदे की आज्ञा—लिखी हुई आज्ञा नहीं मिली थी। परन्तु ज़िला मैजिस्ट्रेट की फ़ोन पर आज्ञा! लिखी हुई से किस बात में कम थी? ज़िला मैजिस्ट्रेट क़ायदे के शब्दों का पुजारी था और अपनी धुन का अनुरागी। प्रान्तीय सरकार का आदेश तार से मिला। उसने जेलर को फ़ोन कर दिया। लिखी हुई आज्ञा कहीं भी न थी। परन्तु मैजिस्ट्रेट अवज्ञा नहीं कर सकता था। फिर जेलर की कैसे हिम्मत पड़ती?

जितने दिनों वे राजनैतिक क़ैदी जेल में रहे जेलर ने अपना समय राम राम करके काटा। ठीक चार बजे वे बाहर होने को थे। जेलर उनकी निकासी के लिए रजिस्टर लौटने पौटने में व्यस्त था। और प्रसन्न भी।

अचलकुमार, सुधाकर और उनके साथी छूटने के लिए व्यग्र नहीं दिखलाई पड़ रहे थे। सामान उनका प्रस्तुत था, चेहरे पर हँसी–मुस्कराहट थी, पर बाहरी संसार के सम्पर्क में आने का कोई मोह उनके चेहरों पर व्यक्त नहीं हो रहा था।

अचल ने हँसकर कहा, 'जेलर यह सब सामान यहीं कहीं रखले तो अच्छा होगा, दो एक दिन में फिर लौटना पड़ेगा—क्या ठीक है !'

सुधाकर भी हँसा। उसने अपने सामान पर घूमती हुई दृष्टि डाली। उसमें मसहरी तकिए इत्यादि थे। उसके ओठों तक शब्द आए, 'वाह ! यहां सड़ने के लिए सामान क्यों छोड़ूँ ?' पर बोला, 'ठीक कहते हो। दो दिन बाद बापू यदि भिड़ गए, तो फिर जहां के तहां।'

अचल ने बी० ए० पास कर लिया था। एम० ए० की तय्यारी कर रहा था कि सत्याग्रह छिड़ गया और उसको जेल में आना पड़ा। सुधाकर ने बी० ए० की परीक्षा नहीं दे पाई थी। देता भी तो इसमें सन्देह है कि कालेज की दीवारें और खेल के मैदान अभी कई बरस उसका पल्ला छोड़ते भी या नहीं। उसको विश्वास था कि एक न एक विषय न जानें कितनी बार उसकी जान को भारी हो हो जायगा। एक साल तो सत्याग्रह की छाँह में किसी तरह खिसक गया। आगे के लिए उसके मन में राजनीति या अध्ययन नीति के लिए उतना ही स्थान था जितना तांगे के लंगड़े घोड़े के मनमें ठीक समय पर स्टेशन पहुंचने का।

अचल के भीतर कोई कह रहा था—जल्दी लौटकर नहीं आना है, इतना समय मिल जायगा कि एम० ए० पास कर लोगे, उसके बाद फिर जेल आने में गौरव कुछ ज्यादा बढ़ जायगा। पर उसको जेल से घृणा नहीं थी। उसको यातनाओं से स्नेह नहीं था, परन्तु यातनाओं के सामने उसने जो अदम्यता अनुभव की थी और जो शूरता प्रकट की थी उसका स्मरण उमंगें भर देता था। वे परिस्थितियाँ जेल के बाहर मिलने को न थीं, इसलिए जेल की दीवारों के भीतरी जीवन से उसका मन नहीं उचटा

था। प्रातःकाल सवेरे उठकर अपने मधुर स्वरों में गाई हुई भैरवी से अपने कानों को मीठा करना, दूसरों के ऊँचे नीचे सुरीले और बेसुरे गलों की तौल में अपनी तानों की निराली मन्जुलता को पहिचानते रहना—और बीच बीच में साथियों को बतलाते रहना, ऐसे नहीं, इस तरह कहो; और, अपनी तानों के बीच बीच में कनसुरे गलेबाज़ों के बेतुकेपन पर हँस देना—ये उस पीड़ासदन से चिपकी हुई सुखद स्मृतियां थीं। साथ ही,—एक दिन एक नेता ने कहा था, 'सोमवार की परेड में खड़े हुआ करो,' और वे स्वयं नहीं खड़े हुए प्रत्युत मौनव्रत धारण कर, पद्मासन जमाकर बैठ गए थे; तब अचल ने निश्चय प्रकट किया था—'हम सब सोमवार को मौनव्रत धारण कर लिया करेंगे, परेड का सवाल ही पैदा न होगा, नेताजी घबराए—'तो परेड मंगल या बुध को होने लगेगी,ऐसा मत करो, तोप के मुहरे पर सिपाहियों को कर देने वाले सेनानायक थे वे। अचल इत्यादि सब हँस पड़े, क्यों कि नेताजी कुछ झेंप गए थे,—यह सब मसखरापन जेलजीवन की स्मृतियों के साथ अटका हुआ था।

और, जिन क़ैदियों को इन लोगों ने अपने पैसों में से बचा बचा कर कभी मीठा और कभी नमकीन खाने को दिया था, पिटने से बचाया था, संसार की विलक्षण बातें सुनाई थीं और भविष्य के समाज के नए रंगरूप बतलाए थे, वे, यह सुनते ही कि 'बाबू लोग' जाने वाले हैं, रोपड़े। बहुत दिनों उनका साथ रहा था। साथ छूटने के स्मारक या परतन्त्र और स्वतन्त्र जगत के विभाजक उन आंसुओं ने एक आह पैदा की, परन्तु पन्चम और गिरधारी, दो, ऐसे भी थे जिनके चेहरों पर बहुत मोद था—पन्चम को एक बलवे के मुक़द्दमे में सज़ा हुई थी और गिरधारी को चोरी में। दोनों के मोद की तली में कभी कभी एक निर्णय खेल जाता था—अबकी बार राजनैतिक मामले में लौटकर आयंगे, 'बाबुओं' का साथ होगा और जेलर के दांत खट्टे करेंगे। उन दोनों के छूटने की अवधि आज ही थी।

गिरधारी सुधाकर के सामने आपड़ा। बोला, 'बाबू जी, अबकी बार के आन्दोलन में, मैं अपने बहुत से साथियों को लेकर आऊँगा। आप लोगों की सेवा करूँगा और कुछ सीखूंगा भी। अचल बाबू से भैरवी की तानें याद करनी हैं।'

सुधाकर को ग्लानि हुई। परन्तु घर जाने की खुशी में वह वहीं की वहीं घुल गई।

'देश के काम के लिए बहुत लोगों की ज़रूरत पड़ेगी। आना—ज़रूर आना।' सुधाकर ने कहा।

सामने से अचल आ गया।

गिरधारी ने उत्साह प्रकट किया, 'बाबूजी, मैं भैरवी सीखूंगा—'

अचल ने टोका, 'यह समय भैरवी सीखने का है!'

'लौटकर सीखूंगा।'

'गांव से भैरवी सीखने आओगे!'

'आप समझे नहीं बाबूजी। जब फिर सत्याग्रह छिड़ेगा, जब आप फिर यहां आएंगे, तब मैं भी आऊँगा और भैरवी सीखूंगा।'

अचल हँसा।

'भैरवी सीखने के लिए यहां आओगे! एक बाजा लेलो और भातखंडे की पहली पुस्तक। सीखलो, आजायगी। गला भी अच्छा है तुम्हारा।'

'बाबूजी, आपका जैसा गला कहां से कोई पाएगा?'

फाटक खुलने वाला था। गिरधारी फाटक की ओर चला गया। पद्मम वहां पहले ही जा चुका था।

सुधाकर ने हँसकर कहा, 'अचल, यार तुम्हारी भैरवी तो बहुत मशहूर हो गई है।'

अचल मुस्कराते हुए बोला, 'तुम लोग जेल के बाहर उसको और मशहूर करोगे।'

मन उमंग पर था। अचल ने गायन, वादन, नृत्य—और तबले—का बहुत अभ्यास किया था। पुस्तकें भी पढ़ी थीं। इस कारण पांडित्य-प्रदर्शन किए बिना उसका मन न माना।

कहता गया, 'तंजोर में एक गवैया था। उसका नाम टोड़ी रामैया पड़ गया था। कर्नाटक—संगीत में भैरवी को टोड़ी कहते हैं। रामैया की 'टोड़ी' इतनी विख्यात थी कि वह टोड़ी रामैया कहलाने लगा। एक बार रामैया को रुपया उधार लेने की ज़रूरत पड़ी। फ़ाक़ेमस्त था, इसलिए किसी ने ऋण देना मंज़ूर नहीं किया। केवल एक 'टोड़ी' प्रेमी ने रुपए देना स्वीकार किया—इस शर्त पर कि रामैया अपनी टोड़ी उसके यहां गहने रखदे, उसके यहां के सिवाय और किसी जगह टोड़ी न गावे—'

सुधाकर ने हँसकर कहा, 'विलक्षण शौक़ीन रहा होगा वह भैरवी का। अपने शहर में भी संगीत प्रेमियों की कमी नहीं है, भैरवी का पागल भी एकाध निकल आवे, परन्तु तुम्हारे ऊपर वैसा बन्धेज कोई लगा ही कैसे पावेगा!'

अचल मुस्कराते हुए भी कुढ़न के साथ बोला, 'जिसने टोड़ी को गिरवी रख लिया था वह संगीत का शौक़ीन तो जैसा कुछ भी रहा हो, ब्याज खोर, खूनचट, एक नम्बर का रहा होगा। तन्जोर के संगीत व्यसनी उस साहूकार के घर भैरवी सुनने के लिए इकट्ठे होते होंगे और वह उनसे पैसे उगाहता होगा, रामैया से ब्याज अलग।'

सुधाकर के घर साहूकारी होती थी। वह साहूकारी की निन्दा में हां में हां मिलाया करता था, परन्तु समझता उसको अच्छा था, क्योंकि बिना किसी विशेष परिश्रम के इसी एक व्यवसाय से काफ़ी रुपया जमा हो सकता था।

एक तरफ़ से उसका मन हां करने को हुआ और दूसरी तरफ़ से बहस करने को।

उसी समय जेल के बाहर एकत्र हुई भीड़ का जय-जयकार सुनाई पड़ा।

उन दोनों के मन प्रसन्न हुए। जेल के बाहर होने वाले स्वागत की कल्पना ने उनके दिलों को धड़काया।

अचल ने उस धड़कन को दबाने के लिए कहा, 'तुम नियम पूर्वक मेहनत करो तो गायन या वादन तुमको भी आ सकता है।'

सुधाकर की धड़कन ने उल्लास का रूप लिया। बोला, 'यार मेरे, गाना-वाना मुझको नहीं आयगा। सुनने के लिए ज़रूर मन चाहता है, परन्तु तानों की कारीगरी से मेरे कान खिसिया से जाते हैं। माफ़ करना अचल—परन्तु भाई, तुम्हारा गला तो रूखी तानों को भी सरस कर देता है। कभी कभी सुनाया करोगे न ?'

जेल के बाहर फिर जय-जयकार हुआ। अचल ने कहा, 'ये लोग नाहक यह हल्ला गुल्ला करने आगए हैं। अपने बड़े लोग कितना मना करते हैं, परन्तु ये मानते ही नहीं !'

बड़े लोगों के मना करने पर भी जनता अपने नगर नेताओं या प्रियपात्रों का जेल के बाहर स्वागत करने के लिए उमड़ पड़ती है और जय-जयकार करती है; यह बात अचल को पसन्द थी; वह मन ही मन उसको जनता का स्वाभाविक उत्साह कहता था, पर ऊपर से भर्त्सना करने के लोभ का संवरण नहीं कर पा रहा था।

उसी बात को सुधाकर ने स्पष्ट कर दिया, 'जनता अपने हृदय की हिलोरों को गांठों में कैसे बांधकर रख सकती है ? यह उसका अधिकार है।'

अचल के मुँह से भी सकार निकल पड़ी, 'हां—कहते तो ठीक हो।'

सुधाकर ने कहा, 'सरकार हम लोगों को जेल से चुपचाप निकाल देना चाहती थी। इसीलिए उसने, मालूम होता है कि लिखी हुई आज्ञा नहीं भेजी। तार दिया, मैजिस्ट्रेट ने जेलर को फ़ोन किया—जिसमें जनता न जान पावे। दुष्टता देखो, उसकी दुष्टता।'

अचल ने पूरी सहमति प्रकट की, 'ठीक कहते हो सुधाकर। सरकार की इसमें कोई दुष्टता हो या न हो, परन्तु उसका डर अवश्य ज़ाहिर होता

है। भीड़ भाड़ होगी, राष्ट्रीय नारे लगेंगे, लोगों में उत्साह की उमङ्ग दौड़ेगी—जो बात सरकार नहीं चाहती वह सब अनायास हो जायगा, यह उसको क्यों रुचने लगा? इसीलिए यह सब तार और फ़ोन द्वारा किया गया है। परन्तु जनता भी कितनी चतुर और प्रबल है! उसने सब जान लिया। अभी फाटक भी नहीं खुले और वह नारे लगाती हुई आ डटी!'

फिर जय-जयकार हुआ। और, अब की बार फाटक खोल दिए गए।

बाहर पुलिस का कड़ा प्रबन्ध था। कहीं जनता जेल के भीतर न घुस पड़े—मैजिस्ट्रेट को इसका सही या ग़लत भ्रम था।

अचल और सुधाकर अपने साथियों के साथ फाटक से बाहर हुए। जिन दूसरे क़ैदियों की मियाद पूरी हो गई थी, वे भी छोड़े गए। उनमें गिरधारी और पञ्चम भी थे।

अचल और सुधाकर ने देखा, पुलिस की क़तारों से कुछ दूर नगर के नर नारियों का एक काफ़ी बड़ा दल खड़ा है। साथ में एक बैंड भी। नारियों में लड़कियां भी थीं। हार लिए खड़ी थीं। कुछ लड़के भी हार लिए थे। परन्तु अचल की दृष्टि लड़कियों की ओर पहले गई। सुधाकर की भी। कुछ लड़कियां उन लोगों की पहिचानी हुई थीं। कुन्ती के हाथ में विविध रङ्ग के फूलों का हार था, और निशा के हाथ में केवल गुलाब का। दोनों कालेज में पढ़ती थीं। दोनों अगले साल बी० ए० की परीक्षा में बैठने को थीं।

उस स्वागत की प्रेरणा का ध्यान करके सुधाकर गद्‌गद् होने को हुआ। उसने एक डग बढ़ाकर अचल के कान के पास कहा, 'स्त्रियों की स्वाधीनता के दिन दूर नहीं हैं। ठीक अर्थ में इस देश को स्वाधीन उस दिन कहा जायगा जिस दिन यहां की स्त्रियां स्वतन्त्र हो जायंगी।'

'ठीक कहते हो', गले की किसी फांस को साफ़ करके अचल बोला।

उन लोगों के बाहर निकलते ही जनता उमङ्ग से उद्वेलित हो उठी और उन दोनों के रोमों में फुरेरू लहराने लगी। नर नारियों के हाथों में हार ऊँचे हो होकर नाचने से लगे।

उनके पीछे मैले कुचैले कपड़े पहिने कुछ देहाती स्त्री पुरुष खड़े थे— वे गिरधारी और पञ्चम की ओर टकटकी लगाए थे। 'बाबू लोगों' पर उनकी आंख कम जा रही थी। उनकी बग़ल में छोटी छोटी पोटलियां थीं। किसी में घर की बनी पूड़ी और किसी में बाज़ार की मिठाई। गिरधारी और पञ्चम ने भी उन देहातियों को देख लिया। परन्तु उनकी आंख फिसल फिसल कर नगर के जन–समूह, नारियों की स्वच्छ आभा और फूलों के सौन्दर्य पर जा रही थी।

'देश पर बलिदान होने का पुरस्कार है यह।' उनका मन कह रहा था।

अपने नातेदारों की बग़ल में पोटलियों को देखकर वे स्नेह मुग्ध भी हो रहे थे, परन्तु स्वच्छ मनोहर साड़ियां पहिने हुए लड़कियों के हाथ में फूल मालाओं को देखकर वे कुछ और आगे की बात सोचने में देहातियों की बग़ल वाली पोटलियों को एक क्षण के लिए भूल जाते थे।

भीनी भीनी सुगन्धि वाले वे सुन्दर फूल उन कोमल करों द्वारा गले में पहिनाए जाने वाले हैं—परन्तु अचल ने इस कल्पना को झटका देकर मन से हटा दिया। वह कल्पना केवल एक प्रश्न भीतर छोड़ गई—पहले किसके गले में माला पड़ेगी?

पहले सुधाकर के गले में—अचल ने उत्तर दे लिया, और वह आगे बढ़ते बढ़ते, धीरे धीरे पिछलने लगा। सुधाकर ज़रा आगे निकल गया। पुलिस की कतारें समाप्त हुई। सुधाकर ने ज़रा सा पीछे मुड़कर देखा। अचल मुस्कराता हुआ धीरे धीरे आ रहा था। इतने में लड़के लड़कियां ने दौड़कर हार डालने शुरू करदिए। पहला हार सुधाकर के गले में पड़ा। फिर एक और, एक और। उसके पीछे अचल था। कुन्ती विविध रङ्ग के फूलों वाला हार लिए दौड़ी। अचल ने हाथ जोड़कर सर नीचा कर लिया। कुन्ती ने लपक कर उसके गले में हार डाल दिया। नमस्ते की।

अचल ने पूछा, 'पढ़ना लिखना ठीक चल रहा है?'

कुन्ती ने हँसकर कहा, 'अब आप आ गए हैं आपसे पढ़ूंगी और 'वर्सिटी में अच्छे नम्बरों से पास होऊँगी।'

उत्तर जल्दी दिया गया था, भीड़ की ध्वनियों में समा गया।

'आपसे पढ़ूंगी' ये शब्द अचल के कान में पहुंच गए। गले में माला डालने के समय कुन्ती का सौन्दर्य आकर्षक प्रतीत हुआ था, उन शब्दों ने उसको कुछ और गहरा कर दिया। वह कुन्ती को पहले से जानता था। मुहल्ले में ही कुछ फ़ासले पर रहती थी।

कुन्ती ने एक हार सुधाकर के गले में भी डाला। निशा उसके गले में पहले ही डाल चुकी थी और अब अचल को लाद रही थी। निशा की आंखों में कोई वैसी गहराई या मादकता न थी—सरल भोली चितवन मुस्कान से खिल रही थी और संकोच से दब रही थी। कुन्ती का अल्हड़-पन मुक्त था। वह कुछ आतुरता के साथ हारों का वितरण कर रही थी। जब उसने सुधाकर के गले में माला डाली थी तब अचल ने ज़रा कनखियां देखा। मुस्कराहट उतनी ही थी, या, कम-बढ़, जितनी मेरे गले में डालने के समय थी! मन ने थोड़ी सी उथल-पुथल की। कुछ अधिक प्रशस्त थी मुस्कराहट, पलकें कुछ अधिक उघर गई थीं! फिर वह किसी और के गले में पहिनाने के लिए दूसरी ओर मुड़ी। अचल ने निशा की ओर ज़रा सा देखा,—और फिर कुन्ती की ओर। उसको केवल उसके खुले हुए सिर के पिछले हिस्से से पीठ पर लहराती हुई काले चिकने बालों की मोटी लट दिखलाई दी। मन ने समाधान किया,—नहीं तो, सुधाकर को फूल पहिनाते समय वह उतनी भी तो नहीं मुस्कराई थी, उसकी खुली हुई बरौनियों को तुमने अच्छी तरह देखा ही कब था! तुम तो सिर झुकाए हुए नमस्ते में लिपटे हुए थे! फिर कुन्ती को देखा। वह उतनी ही मुस्कराहट और उतावली के साथ दूसरे लोगों को अपना आदर दे रही थी जो उसने सुधाकर को दिया था। मेरे साथ कुछ और ही हुआ था—उसने सोचा।

शोरग़ुल तो काफ़ी हो ही रहा था--अब बैंड बज उठा। उसकी तुमुल ध्वनि ने कान फोड़ना आरम्भ कर दिया—कम से कम अचल को ऐसा ही लगा। रास्तों में, दूकानों पर, हँसते मुस्कराते हुए चेहरे और फूलों की वर्षा के लिए उठे हुए हाथ उस कनफोड़ू क्रिया पर कुछ मरहम का काम कर रहे थे। बच्चे दाएं से बाएं और बाएं से दाएं दौड़ दौड़ पड़ रहे थे। बुड्ढे और जवान सब उत्सुकता के साथ जलूस को देखने में निरत थे—लोगों ने अचल, सुधाकर इत्यादि को अनेक बार देखा था, किसी किसी ने तो छुटपन से ही। परन्तु फिर भी वे किसी उद्दीपन के साथ निहार रहे थे। ये लड़के उस दो हड्डी वाले, दुबले पतले बूढ़े के सिपाही हैं जिसने अपनी नीची दृष्टि, खुली मुस्कराहट और खनकती हुई आवाज़ से महान समुद्री और हवाई बेड़े वाले साम्राज्य के घुटने नवा दिए! जिस साम्राज्य के एक छोटे से गोरे के बंगले पर बड़े बड़े हिन्दुस्थानियों को अहाते के बाहर तांगा छोड़कर पीठ झुकाकर जाना पड़ता था!!

बैंड की तुमुलध्वनि में वे लड़के अपना एक उग्र रूप देखते थे—किसी दिन वर्दी पहिने हुए, क़तार बांधे हुए, ठट के ठट हिन्दुस्थानी आज़ादी की लड़ाई के लिए आज़ादी के मोर्चे पर जा रहे होंगे—और हम उनके नायक बनकर आगे होंगे। बन्दूकें लिए होंगे और संगीनें चढ़ाए होंगे। ऐं! बन्दूकें!! बूढ़े बापू की वही खुली मुस्कराहट सामने, वही खनकती हुई आवाज़ कान में। बन्दूकें और संगीनें मनके किसी कोने में जा समाईं। अचल ने पीछे मुड़कर देखा कुन्ती और निशा धीरे धीरे चली आरही हैं। उनका मुँह पसीने से स्पंदित हो गया है। कहीं कहीं धूल ने लकीरें तक बना दी हैं। मन चाहा–इनसे कहदें घर जाओ, और अधिक धूल धूसरित मत होओ। परन्तु और नर नारी भी तो थे। पसीने और धूल ने उनके साथ कोई रियायत नहीं की थी। सब अपने अपने घर चले जायं तो अकेला बैंड और वे थोड़े से रह जायंगे। इधर उधर कुछ भीड़, दूकानों पर कुछ लोग। फिर और क्या रह जायगा? और,

जब जलूस ही न रहेगा तो अकेले बैंड को कौन देखने दौड़ेगा ? परन्तु बापू के सिपाहियों को, भविष्य के नेताओं को, देखने के लिए तो लोग उमगेंगे ? लेकिन उनको तो छुटपन से नगर-निवासिओं ने देखा था। पर इस तरह तो नहीं देखा था। इसलिए जलूस को बिखेरना नहीं चाहिए और न उसको बिखरना चाहिए। बिना भीड़-भाड़ के, बिना जलूस के राजनैतिक क्षेत्र के मूल्य कितने रह जायंगे ? तो भी उन दोनों लड़कियों पर अचल को तरस आ रहा था। फिर भी, वह अकेले उनसे क्या कह सकता था ! और उनके चेहरों पर दूसरों की अपेक्षा उल्लास भी कहां कम था ? बैंड वाले समझते थे जलूस की शोभा वे हैं, पुरुष वृद्ध और लड़के—अनुभव कर रहे थे जलूस उन्हीं की दौड़-धूप और उपस्थिति के कारण महानता पा रहा है, और स्त्रियां समझती थीं—शायद—वे जलूस में न होतीं तो इतनी भारी भीड़ इकट्ठी होती ही क्यों ?

और, बाज़ार के कुछ पके पकाए लोग सोचते थे, हम न हों तो यह सब कितने दिन चलेगा ? हम चन्दा न दें तो यह बैंड ऐंड कैसे बजेगा ? फिर दें कैसे नहीं ? ये चन्दा बकोटने वाले फिर जेल से बाहर आगए ! परन्तु जब ये भीतर थे, तब भी तो चन्दा वसूल किया जाता था। इनके भाई बन्द—वसूल करते थे। परन्तु कष्ट सहकर आए हैं, त्याग करके आए हैं। नगर का नाम किया इन्होंने। और अपने ही तो हैं।

अचल ने देखा, जो कम पढ़े लिखे उसके साथ जेल से लौटे हैं उनकी ओर जनता का उतना ध्यान नहीं जा रहा है, यद्यपि वे उझक उझककर, गर्दन को झटके दे दे कर भी उस ध्यान को आकृष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। उसने सोचा कठिन से कठिन परीक्षा को पास करके अपने को और भी अधिक निखारूँगा संवारूँगा। उसके बाद जो कुछ त्याग करूँगा उसका मूल्य बहुत बड़ा होगा,—भीतर ही भीतर एक कल्पना बिजली सी करवट लेगई: इसी नगर का क्या—सारे देश का ध्यान मेरी तरफ़ खिंचेगा।

परन्तु दूकानदारों और दूकानों पर जमी हुई या चंचल भीड़ का ध्यान उस पर से रिपट रिपट कर सुधाकर पर अधिक ठहर रहा था। वह लखपती घराने का है। लखपती का लड़का जेल गया! इससे बढ़कर त्याग और क्या हो सकता है?

अचल की समझ में बात आगई—और समाज में धनियों की इस प्रतिष्ठा से उसका जी कुढ़ गया। आदर सम्मान, विराम विश्राम के लिए धन ज़रूरी है। पर बड़ा कौन है? सरस्वती और लक्ष्मी की वही पुरानी लड़ाई। किन्तु उल्लू पर लक्ष्मी की सवारी की कल्पना करते ही उसको सान्त्वना मिल गई—और फिर वह ऐसा दरिद्र भी न था। उसके घर में भी पैसा था और वह लेन-देन या किसी ऐसे उपायों से नहीं आया था।

स्वास्थ्य उसका अच्छा था। वह सीधा चल रहा था। मार्ग पर उसके पैर फूल की तरह पड़ रहे थे। सुधाकर की आकृति कुछ अधिक सुन्दर होने पर भी देह उतनी स्वस्थ न थी। यह अन्तर तुरन्त उसको एक ऊँचे स्तर पर ले गया, परन्तु उसी क्षण उसके जी में अनुकम्पा का प्रवाह आया। तुलना ने ग्लानि उत्पन्न की और उसने भीतर ही भीतर मनाया, 'सुधाकर का स्वास्थ्य अच्छा हो जाय, उससे इस विषय पर कभी चर्चा करूँगा।'

अचल ने निश्चय किया, 'धन को बढ़ाऊँगा। देश के कामों पर ख़र्च करूँगा, क्यों कि किसी कवि ने ठीक कहा है, 'भूखे भगत न होय भुआलू।'

जलूस ने समय आने पर अपनी शक्ति ख़र्च करदी और सब लोग अपनी अपनी धुन में लग गए।

[२]

पञ्चम और गिरधारी अपने गांव में पहुंचे। जेल के भीतर जब 'बाबुओं' के बर्ताव से उनको आल्हाद मिलता था तब कभी कभी गांव के महुए, आम, करोंदी की झाड़ी, नाला और उसके छोटे छोटे झरके याद आजाते थे। जिन गवाहों के बयानों पर उनको सज़ा हुई थी उनकी शकलें भी कल्पना में घूम जाती थीं। तब उस आल्हाद से एक प्रेरणा मिलती, 'देखेंगे इन लोगों को।'

तो भी गांव के पास पहुंचने पर वे शकलें क़रीब क़रीब धुंधली हो गईं और ज़मीन, ढोर और घर तथा वे लोग जिनके साथ बैठकर तम्बाकू की चिलमों पर चिलमें चलती थीं, अधिक स्पष्टता के साथ दिखलाई पड़े और उन गवाहों के प्रति उपेक्षा—और, थोड़ी सी, सहिष्णुता—ने स्थान पालिया।

गांव के भीतर पहुँचते ही पञ्चम ने सूरमाओं जैसी निगाह दौड़ाई। उसको आशा थी कि उसके दल के लोग उसका कुछ न कुछ स्वागत करेंगे—फूल-मालाएं, आरती, बैंड, जलूस न सही, परन्तु उनकी मुस्कराहट, ज़ोरदार राम राम, ठठ बांधकर तम्बाकू पीने पिलाने के लिए आना—यह सब तो होना ही चाहिए था। परन्तु वह सब कुछ न हुआ। वे लोग किसी काम से दूसरे गांव को गए हुए थे। जब लौटकर आयेंगे, तब सही। परन्तु तब तक स्वागत पाने की इच्छा कितनी कुंठित न हो जायगी। और, उन नेताओं का कितना स्वागत हुआ था, यद्यपि थे वे लड़के ही—बीस बीस, बाईस बाईस साल की उमर के! परन्तु वे बहुत पढ़े लिखे थे। लेकिन बहुत पढ़ने लिखने से क्या? उनका काम बड़ा था। पढ़े लिखे तो और भी बहुत होते हैं।

स्त्रियां दिखलाई पड़ीं—किसी ने घूंघट डाल लिया, कोई घर में चली गई। धूल में खेलते हुए बच्चों ने अपना खेल छोड़ दिया।

और उस जलूस में सुन्दर लड़कियां किस तरह नंगा सिर किए चल रही थीं।

इतने में थोबन माते दिखलाई पड़ा। दूसरे दल का! बलवे के मुक़द्दमें में उसने खिलाफ़ गवाही भी दी थी!! ज़रा सा देखकर गर्दन अकड़ाता हुआ दूसरी ओर चला गया।

पञ्चम ने दांत पीसे। सोचा, 'जेल गए तो गए, इसका खोपड़ा न खोल पाया। ख़ैर, देखा जायगा।'

गिरधारी का घर पहले पड़ता था। वह सिर झुकाए हुए घर में घुस गया। उसको गांव में किसी भी प्रकार के स्वागत की आशा न थी, इसलिए मन में कोई निराशा नहीं हुई। सुधाकर जैसे बड़े बाबू ने उससे कहा था, 'देश के काम के लिए बहुत लोगों की ज़रूरत पड़ेगी। आना —जरूर आना। जाऊँगा और जब उस बार लौटूंगा, तब कोई स्वागत करे या न करे, सिर उठाकर तो गांव में आऊँगा, और, लोग स्वागत भी करेंगे।

पञ्चम और गिरधारी को अलग अलग अपराधों के लिए भिन्न भिन्न समय पर सज़ा हुई थी। वे लोग एक ही जेल में रहे थे। संध्या के समय जब मेल मुलाक़ाती इकठ्ठे हुए तब खेती–बारी की चर्चा के साथ साथ 'नेताओं' की दिनचर्या, जैसी कुछ पञ्चम और गिरधारी की समझ में आई थी, लम्बी चौड़ी बातों का विषय बनी।

राष्ट्रीय आन्दोलन का कुछ न कुछ रूप इस गांव में भी मौजूद था। उस रूप को पूरी और गहरी रेखाएं नहीं मिल पाई थीं, पर वह था।

पञ्चम ने एकान्त पाकर अपनी पत्नी से कहा, 'स्त्रियां झंडे लिए हुई थीं। उन्होंने बाबुओं के गले में हार डाले थे। वे जलूस में गाती हुई चली जा रही थीं।'

'गाती तो हम लोग भी हैं अपने गांव में' उसकी पत्नी ने उत्तर दिया।

'तुम खाक गाती हो। इतना आयं बायं शायं कि जिसका ठिकाना नहीं।'

'वे सड़कों पर गाती हैं और हम खेतों पर।'

'तुम लोग जितना भयानक गाती हो उसकी बराबरी वे बिचारीं क्या कर सकती हैं।'

'हमने भी सुना है। सिर उघाड़े, बालों का जूड़ा लहराये, कन्धे तक नंगे हाथ किए सड़कों पर फिरना हम लोग भला क्या जानें? उन स्त्रियों को और काम भी क्या है? ज़रा हँसिया खुरपी हाथ में पकड़ें तब पता लगे।'

'तुम फूहड़ हो।'

'तभी तो पूरा एक बीघा खेत काटकर रख देती हूँ।'

दूसरे दिन पञ्चम और गिरधारी मिले। पञ्चम को अपना दल बढ़ाने की हविस थी। और गिरधारी को अधिक विस्तृत संसार में आने की।

पञ्चम—'थोबन माने पड़े पड़े खाता है, ग़रीबों को तंग करता है, मज़दूरों का खून चूसता है।'

गिरधारी—'भगवान ने उसको पैसा दिया है।'

पञ्चम—'भगवान ने नहीं दिया है। अचल बाबू कहते थे मुफ्त की कमाई को ग़रीबों से पुजवाने के लिए ही भगवान के नाम की आड़ लेली जाती है जिसमें हम लोग इनको काम करने के लिए मजबूर न कर सकें।'

गिरधारी—'ग़रीबी आजाय तो शायद काम कर उठें।

पञ्चम—'इनको ग़रीब बनानें की केवल दो क्रियाएँ हैं। एक, तुम्हारी वाली: रात को गए, चुपचाप जोड़ को बाक़ी किया और रफ़ूचक्कर हो गए। दूसरी हमारी है। लाठी उठाई, खोपड़े पर झाड़ी और—'

इसके आगे पञ्चम की कल्पना ने सहायता नहीं की।

गिरधारी नीची निगाहों मुस्कराने लगा। बोला, 'पर सुभीता दोनों में बहुत नहीं है।'

'न सही। थोबन को कुछ दिनों सिकना तो पड़ेगा।'

'कुछ और सोचना पड़ेगा भाई। साँप मरे और लाठी न टूटे।'

'थोड़ा सा सोचा है। कांग्रेस के सेवादल में भर्ती हो जायं तो कैसा रहे? केवल एक बाधा है, थोबन माते का लड़का भी उस दल में है, और, और—'

और शायद वे लोग मुझको या किसी सज़ा खाए हुए को भर्ती भी न करें।'

'नहीं यह तो कोई बड़ी बात नहीं। तगड़े गवाही हम लोगों को मिल जायं तो आधे गांव को जेल में चल देना पड़े। सेवादल का काम लगन के साथ करें तो उनको भर्ती करने में कोई उज़्र न होगा। यदि मीनमेख निकालेंगे तो अचल बाबू के पास चले चलेंगे। उनकी चिट्ठी से काम चल जायगा।'

'पर सेवा-दल में रहकर वह सब कैसे हो सकेगा? दूसरे को नुक़सान मत पहुंचाओ, किसी की बदी मत करो, कोई पीटने आवे तो पिटलो और मोर्चे पर डटे रहो! बस की बात नहीं जान पड़ती।'

'तुमने उन लोगों की बातें अच्छी तरह नहीं सुनीं। अपने बचाव में, स्त्रियों और बच्चों की रक्षा में, अपने—वग़ैरह वग़ैरह के लिए, मारदेने में कोई बुराई नहीं।'

'तो भर्ती होने की करो कोशिश!'

[३]

जियाराम के छः लड़के थे और एक लड़की। लड़के सब वय-प्राप्त और ब्याहे थ्याहे। लड़की अविवाहित थी। बी० ए० की परीक्षा उसको अगले साल देनी थी। पिता को उसके विवाह की चिन्ता हो चली थी और उसको तो परीक्षा पास करने को थी ही। छः लड़के और एक लड़की के भी ऊपर जियालाल के पास दस लाख रुपए थे। पर ये नक़दी में नहीं थे। कारख़ानों में नहीं थे—कारख़ानों के प्रबन्ध की चिन्ता में न थे वरन् बड़ी बड़ी कम्पनियों के शेयरों में—जिनका स्वामित्व और प्रबन्ध अंग्रेज़ों के हाथ में था। शेयरों का इतना मुनाफ़ा आता था कि तीन मोटरें, नौकर चाकर, यात्रा, राजनीति, धर्म-दानपुण्य—इहलोक और परलोक—सब सुलभ थे। लड़कों को दोनों ही में कम विश्वास था। किसी न किसी दिन हिस्सा बाँट होगा,—उनका भी अपना अपना कुटुम्ब बन चला था,—मकान बड़ा होने पर भी छः कुटुम्बों को नहीं झेल पायगा। और सब कुछ बांट लेने पर भी रहन-सहन, जिसका अभ्यास जीवन का बहुत बड़ा अंग बन चुका था, कैसे बांटा जायगा? यह समस्या उन छहों के सामने सिमट सिमट कर आती थी। पढ़े लिखे थे, नौकरी मज़दूरी से कोई सरोकार ही न होना था, किसी नए कारखाने के खोलने की, कोई बड़ी दलाली हाथ में लेने की बात सोचते थे। जियाराम भी उनके लिए कभी कभी सोच विचार किया करता था, परन्तु उसको चिन्ता नहीं थी। कुछ भी न करें तो इनके लिए आराम के साथ ज़िन्दगी बिताने के लिए काफ़ी है।

जिस दिन लड़की जलूस से लौटी उस दिन जियाराम के मन में एक बात विशेषता के साथ गड़ी—सयानी हो गई है, बर बहुत जल्दी ढूंढ़ना होगा।

पसीने और धूल से भरी हुई वह सीधी आई। उसके चेहरे पर तेज था। वह ओज में थी। बड़े आदमी की लड़की। उससे स्थानिक कांग्रेस-

समिति को गौरव मिला और जियाराम को भी। जियाराम सोचा करता था गौरव चन्दा देने से मिला है। लड़की के कारण भी महत्व मिला—मनके किसी कोने से ध्वनि निकली और वहीं दब गई—लड़कों के कन्धों से इसके कन्धे कभी कभी लग जाते होंगे। परन्तु वह तो कुन्ती इत्यादि लड़कियों के साथ रहती है, असंभव है। सन्देह को किसी जगह गाड़ देने में देर नहीं लगी, परन्तु उसने फिर सिर उठाया- भीड़–भाड़ में धक्का मुश्ती हो सकती है—लेकिन वह बड़ी सावधान लड़की है। सन्देह तो चला गया, एक निश्चय ने उसकी जगह लेली—इस साल विवाह अवश्य कर दूँगा।

जियारान ने कहा, 'निशा, देख, कितनी थकी जान पड़ती है। देर भी काफ़ी हो गई है।'

निशा बोली, 'अभी अभी तो जलूस खतम हुआ। वे लोग बिचारे बहुत थके से थे।'

'जेल का जीवन कठोर होता है।'

'जेल से निकलने पर तो वे लोग स्वस्थ और प्रफुल्ल दिखलाई पड़ते थे। रास्ते में थक गए। स्वागत उनका बहुत बड़ा हुआ। इतनी मालाएँ तो हमीं लोगों ने पहिनाईं कि उनके चेहरे तक नहीं दिखलाई पड़ते थे। फिर धूल और पसीने ने दुर्गति करदी। एकाध दिन में व्याख्यान भी होंगे।'

पिता की कुढ़न उभरी। बोला, 'व्याख्यान तो बहुत सुन लिए, अब कुछ पढ़ो। जलूस–वलूस की बात पास करने के बाद सोचना।'

'अभी तो लगभग साल भर रक्खा है।'

'ऐसे ही ऐसे में निकल जायगा।'

'पर यह काम पढ़ने से कम ज़रूरी नहीं है।'

जियाराम सोचने लगा—'इतना बड़ा जलूस निकलने के बाद अब और कोई जलूस निकट भविष्य में नहीं निकलेगा, व्याख्यान भी एकाध दिन से ज्यादा नहीं लेंगे, लड़की के उत्साह को क्यों भंग किया जाय?'

एक बात और सूझी, इन लोगों को निमन्त्रण दिया जाय, बातचीत में शायद किसी अच्छे लड़के का पता लग जाय; इनके मेल जोल वालों में अवश्य कोई न कोई होगा, नहीं तो ये तलाश में रहने लगेंगे। राष्ट्रवादी विचार वाला लड़का सस्ता भी रहेगा; देने लेने का सवाल ही खड़ा न हो पावेगा यदि मां बाप भी कुछ मुलायम हों तो।

ज़िले के अफ़सरों की नाराज़ी का उसको कोई डर न था, क्यों कि उस नाराज़ी का कोई प्रभाव शेयरों के मुनाफ़े पर नहीं पड़ सकता था।

जियाराम वैसे भी उनमें से कई को किसी दिन बुलाकर चर्चा छेड़ सकता था—स्थानिक कांग्रेस वर्ग उसका आदर करता था चन्दा देते रहने के कारण, मूक सहानुभूति के कारण और निशा के सहयोग के कारण।

परन्तु उसने भोज को ज्यादा अच्छा साधन समझा। उसमें सफलता के अधिक लक्षण थे।

जियाराम ने कहा, 'इसमें सन्देह नहीं कि वर्तमान अवस्था में देश के लिए यह काम काफ़ी ज़रूरी है। मैं सोचता हूँ इन लोगों को एक भोज दूँ और उनसे राजनैतिक प्रसंगों पर चर्चा करवाऊँ। सार्वजनिक सभा में एक दोष होता है। व्याख्यान—देने वाला बोलकर चला जाता है। लोगों को हल्ले गुल्ले के मारे सवाल करने का अवसर नहीं मिल पाता। प्रश्नोत्तर की परिपाटी दूसरे देशों में है। उससे शंका समाधान होता है और जानकारी बढ़ती है। ठीक है न निशा!'

निशा हर्षोत्फुल्ल हो गई। हँसी। पतले ओठों के पीछे चमकते हुए दांत खिल से गए।

बोली, 'पिता जी, आपने बहुत अच्छा सोचा। क्या मैं एक संशोधन पेश कर सकती हूँ?'

सभा समितियों की यह भाषा जियाराम को बुरी नहीं लगी। जियाराम ने कहा, 'क्या?'

'भोज के दिन गायन वादन भी हो। कुन्ती बहुत अच्छा गाती है। हम लोगों में सब से अच्छा। वह नृत्य भी करती है। जो लोग आयंगे उनमें अचलकुमार बहुत अच्छे जानकार हैं। और लोगों का भी मनोरञ्जन होगा। भोज, राजनीति और ललित कला का सम्मेलन सा।' निशा को जियाराम ने गाना बजाना भी सिखवाया था। वह इस कला को स्त्री शिक्षा का अनिवार्य अंग मानता था, परन्तु सयानी लड़कियों का भोजों या मजलिसों में नाचना, (भोज, राजनीति और ललित कला का सम्मेलन) उसको नहीं रुचा। कल कुन्ती हमारे यहां के भोज में नाचेगी! परन्तु निशा को नाचना नहीं सिखलाया गया था। तब हर्ज भी क्या है? कुन्ती को उसने कभी नाचते नहीं देखा था। क्या वह अकेले नाचने की हिम्मत कर जायगी? इतने लड़कों और अन्य मनुष्यों के सामने! परन्तु वे परिमार्जित रुचि के लोग होंगे, ऊँचे विचारों वाले। कोई कुत्सित कल्पना उनके मनमें नहीं उठ सकती। परन्तु क्या कुन्ती अकेले नाच लेगी? इतने लोगों के सामने!

जियाराम ने यही प्रश्न निशा से किया।

'कुन्ती इतने लोगों के सामने नाचने में झिझकेगी नहीं?'

'नहीं, झिझकेगी क्यों? वह गाएगी भी। कुछ छोटी छोटी लड़कियाँ उसके साथ शामिल होंगी।'

छोटी लड़कियों के शामिल होने की बात सुनते ही कुन्ती के नृत्य पर का मानसिक आक्षेप बिलकुल हल होगया, भोज के अवसर पर होने वाले नृत्य के चित्र में से कुन्ती मानो निकल गई।

'बाजे कौन कौन से होंगे? बजायगा कौन?' जियाराम ने पूछा।

निशा ने उत्तर दिया 'मैं बजा लेती हूँ। कालेज के संगीत मास्टर होंगे। कोई बेला ले लेगा, कोई इसराज और कोई तबला। अचल कुमार बहुत अच्छा बजाते हैं तबला। तबला मास्टर से भी अच्छा।'

इस प्रकार के समूह के चित्र ने जियाराम के मन को कोई चमक, विनोद या उत्सुकता नहीं दी। परन्तु निशा सीखती तो इन्हीं लोगों से रहती है। तो भी घर में एक रंगमंच सा बनेगा—कुछ नाटक सा होगा। जियाराम को अखरा, परन्तु आक्षेप को प्रकट करना बहुत असंगत प्रतीत हुआ। मनको अचल कुमार एक आसरा सा मिल गया।

बोला, 'अचल से नहीं बजवाना चाहिए। वह उस भोज का एक खास मिहमान होगा।'

सवाल था, 'बजायगा कौन?' एक सहज हल निकल आया। जियाराम ने कहा, 'उसी समय देखा जायगा।' यह हल निशा को भी पसन्द आया।

[४]

एक खासे भोज का आयोजन हुआ। एक दूसरे बड़े कमरे में मञ्च, पार्श्व और एक रंगीन पर्दे का भी प्रबन्ध किया गया। भोज मेज़ कुर्सियों पर हुआ। स्त्रियां एक ओर अलग बैठी थीं। वे लोग खाते खाते धीरे धीरे बातें कर रही थीं और पुरुष ज़ोर के साथ। पुरुष खाना खाते खाते स्त्रियों की ओर कनखियां देख लेते थे। उनकी साड़ियां इत्यादि रङ्ग बिरंगी थीं। पुरुष और अधिक कुछ नहीं देख पाते थे। यदि वे उनके नज़दीक बैठी होतीं तो शायद उत्सुकता जाग्रत भी न होती। यह अलग बैठना पुराने घूंघट का कुछ नया संस्करण सा था। कम से कम सुधाकर ऐसा ही सोच रहा था। संगीत के समय, शायद, अन्वेषण और विश्लेषण ज्यादा आसानी के साथ हो सकेगा, यह धारणा अचल की थी। जियाराम अपना मोह बिखेरने में व्यस्त था। छोटी छोटी लड़कियां एक ओर चहल पहल कर रही थीं—कुछ सोचते थे, क्या गाना नाचना इन्हीं तक सीमित रहेगा? परन्तु उन लोगों ने सुन लिया था कुन्ती का भी नृत्य होगा। वह इस समय स्त्रियों में बैठी हुई थी।

भोजन की समाप्ति पर सब लोग रङ्गमञ्च वाले कमरे में चले गए। वहां सोफ़े थे, आराम कुर्सियां थीं और बेन वाली सीधी भी। जब तक पर्दा नहीं खुला रङ्गमञ्च पर हलचल जारी रही और रङ्गमञ्च के बाहर तो बिलकुल हाट सी जान पड़ती थी—मानो थोड़ी देर में होने वाले संगीत के समय जो ख़ामोशी छा जायगी उसके स्वागत के लिए इतना गुल गपाड़ा हो रहा हो।

आगे की क़तार में अचल और सुधाकर बैठे हुए थे। अचल संगीत के किसी शास्त्रीय अङ्ग पर चर्चा कर रहा था। सुधाकर का एक कान उस चर्चा की ओर था और दूसरा रङ्गमञ्च की ओर। आंखें कभी कभी अचल की ओर, कभी इधर उधर बैठे स्त्री पुरुषों की ओर; अधिकांश बार रङ्गमञ्च के पर्दे पर। पर्दे के पीछे तेज़ रोशनी थी। चलते फिरते हुए

लोगों के छाया-चित्र उस पर बन बन जाते थे और पर्दे के नीचे से उनके पैर स्पष्ट दिखलाई दे जाते थे। कुछ छोटी लड़कियों के पैर दिखलाई पड़े। उनके पैर में घुंघरू थी। बाजे बजने शुरू हुए। दर्शक उत्सुक हो उठे। निदान पर्दा उठा। लड़कियों ने देवपूजा का नृत्य किया। काफ़ी देर तक होता रहा। आरम्भ में लोग बहुत प्रभावित हुए। तालियां बजीं। वाह, वाह हुए। फिर उकताहट आई। बड़ी लड़कियां पार्श्वों से कभी कभी उस प्रदर्शन के प्रभाव की मात्रा जांचने के लिए झांक लेती थीं। निशा ने झांका, कुन्ती ने भी झांका। अचल और सुधाकर का ध्यान उचट उचट कर पार्श्वों की ओर जाने लगा। कुन्ती उत्कृष्ट वेश भूषा में थी। सुधाकर को लगा उससे बढ़कर सुन्दर स्त्री और कोई शायद ही संभव हो। ऊँचा माथा, चमकते हुए बाल, दमकता हुआ गले का हार और कसी हुई कंचुकी। चेहरे पर पाउडर था और ओठों पर रंजन, (जो अपने मूल स्थान की भाषा में लिपस्टिक कहलाता है) बड़ी आंखों पर लम्बी भौंहे, हटीली सीधी नाक और दृढ़ गोल ठोड़ी। उस क्षण कुन्ती सुधाकर की ओर नहीं देख रही थी और न अचल की ओर। सुधाकर की आंख से आंख मिलते ही वह पार्श्व के पीछे छिप गई। निशा भी सुसज्जित थी, परन्तु उसकी बड़ी आंखों में मादकता न थी, और न ठोड़ी में दृढ़ता। नाक और आंखें मिलकर सौन्दर्य की कल्पना देती थीं, परन्तु बाहरी सरलता और भीतरी नियन्त्रण की भी। पाउडर का उसने भी प्रयोग किया था, पर ओठों पर राग–रञ्जन न था। अचल ने मन में निर्णय किया, चितवन सीधी है, इतनी कि उसके स्वभाविक सौन्दर्य को पूरा विकास नहीं पाने देती, मन रीति रिवाजो के बन्धनों में चपलता को बांधे हुए है, और—असाधारण वर्ग की नहीं है। जब अचल और निशा की आंखें मिलीं, अचल छोटी लड़कियों में कोई नई बात खोजने के लिए देखने लगा, निशा दूसरी दिशा में देखने लगी। वह पार्श्व के पीछे नहीं छिपी। अचल का आकर्पण और भी कम हो गया। सुधाकर कुन्ती के

छिपे हुए चेहरे के ताक में था। उसने एकाधबार फिर झांका। सुधाकर ने फिर देखा—कुन्ती ने भी देख लिया, और वह पीछे हट गई।

छोटी लड़कियों का नृत्य समाप्त हो गया। उन्होंने नमस्कार किया। पर्दा गिरा। वे पार्श्वों के पीछे चली गईं। रंगमंच के बाहर बात-चीत शोर-गुल तुरन्त शुरू हुआ और बढ़ गया। पर्दे के पीछे आहट हुई। निशा गाने के लिए आ बैठी। बेला, इसराज और तबले कॉलेज के संगीत शिक्षकों ने लिए। पर्दा खुला और गायन आरंभ हो गया।

जियाराम ज़रा पीछे बैठा था। कनखियों देख रहा था कि निशा को पुरुष किस दृष्टि से देख रहे हैं। वह किसी की भी आंख में कोई मैल नहीं पा रहा था। लड़की भोली है, बहुत अच्छा गाती है और साल पीछे बी० ए० पास हो जायगी। उसने स्त्रियों की ओर देखा। कुछ धीरे धीरे बातें कर रही थीं। कोई कोई निशा के मुँह को परख रही थीं।

गाते समय निशा का मुँह कुछ बिगड़ जाता था। तानों के लेने के प्रयास में ख़ास तौर पर।

अचल ने धीरे से सुधाकर के कान के पास कहा, 'मुँह बिगाड़ना गाने का एक बहुत बड़ा दोष है।'

सुधाकर को निशा का गला अच्छा मालूम हो रहा था, और उसका ख्याल था कि गाने के समय गवैए तक अपनी आकृति को बिजका लेते हैं। जेल से छूटने पर जब निशा ने मुस्कराते मुस्कराते उसके गले में हार डाला था तब उसका सौन्दर्य मनको चुभा था। इस समय का विकृत चेहरा उस समय की मुस्कान में समा गया। सुधाकर धीरे से बोला, 'ऐसा कुछ बहुत तो नहीं है। कान को अच्छा लग रहा है, अधिक तो मैं समझता नहीं।'

अचल ने न माना।

कहा, 'राग के रूप को ज़रूर सही रख रही है। ताल में भी है। स्त्रीकंठ है इसलिए भले ही कह लो, वैसे सुरीली नहीं है।'

'सुना है चित्रकारी भी जानती है।'

'देखा जायगा। इस समय प्रसंग संगीत का है। शायद नाचती भी हो।'

'नाचना जानती होगी तो नाचेगी भी।'

जियाराम ने देखा वे दोनों बहुत रुचि के साथ बातें कर रहे हैं, बातें करते करते सिर भी हिला रहे हैं, विषय लड़की के गाने के सिवाय और हो ही क्या सकता है? इन लोगों को उसका गायन बहुत पसन्द आ रहा है।

'यह तान निशा ने ग़लत ली,' अचल ने कहा।

सुधाकर को ग़लत या सही तान का बोध न था। निशा का गाना उसको अच्छा लग रहा था। छोटी लड़कियों के नाच से ऊब उठा था। निशा युवती थी, सुन्दरी थी, और गले के स्वर अच्छे लग रहे थे। तान ग़लत कैसे? परन्तु अचल की ग़लत बतलाई हुई तान को सही कहने का साहस भी कैसे करता? उसको एक सामञ्जस्य सूझा।

'मुझको तो भला लग रहा है।'

'या भली लग रही है?'

'स्वर मीठा और तान भली।' सुधाकर मुस्करा कर रह गया।

जियाराम ने दूर से देखा। सुधाकर की मुस्कराहट उसको गड़ी। परन्तु वह किसी तरह की निन्दावृत्ति के कारण नहीं मुस्कराया होगा। और, न किसी—किसी, मैले मन से। धनाढ्य, पढ़ा लिखा और फिर तपा तपाया।

'स्वस्थ है—नथने ज़रूर कुछ फैले हुए हैं, पर वैसे सुपात्र है। निशा के लिए अच्छा वर हो सकता है। निशा उसके घर में सुखी रह सकती है।'

निशा गाते गाते किसी को भी विशेष प्रकार से नहीं लख रही थी। यदि कभी कहीं उसकी आंख कुछ देर तक ठहरती थी तो स्त्रियों के ऊपर—खास तौर पर जमुहाईयाँ लेने वाली कुछ स्त्रियों पर। और उनसे भी अधिक उन बच्चों पर जो प्रत्येक जलसे में रौग करने, रोने चिल्लाने और, अन्त में, सो जाने के लिए ही लाए जाते हैं।

निशा के गायन की समाप्ति पर लोगों ने तालियां बजाईं। जियाराम का ध्यान अचल और सुधाकर पर केन्द्रित था। उन लोगों ने तालियां बजाईं। अचल ने धीरे से और सुधाकर ने वेग के साथ। जियाराम को सन्तोष हुआ।

पर्दा गिरा। थोड़ी देर के लिए रंगमंच पर शान्ति हुई और बाहर बलवा सा। लोगों के कंठ वार्तालाप में फूट पड़े, सोते बच्चे जाग पड़े और रोने चिल्लाने लगे। उनकी माताओं की जमुहाईयां खतम होगई और वे सचेत होकर बच्चों को पुचकारने या डाटने लगीं। अचल ने सोचा, 'ये इनको यहां लाती ही क्यों हैं? छोटी लड़कियों का नाच देखकर शायद 'प्रारम्भिक चिकित्सा' के लिए!' परन्तु पर्दा जल्दी खुल गया। नत-मस्तक नमस्ते की टार में कुन्ती खड़ी थी। अब उसको पार्श्व के पीछे छिपने की ज़रूरत न थी। जो लोग उसके नृत्य को पहले कभी देख चुके थे उन्होंने स्वागत में ताली बजाई। कुन्ती ने फिर नमस्ते किया। चित्रपट की कोई भी बड़ी अभिनेत्री—तारिका—जिस प्रकार का टार दिखला सकती थी ठीक वैसा ही।

अचल ने उसको एक बार अच्छी तरह देखा, दूसरी बार बाजे वालों को देखने लगा। कैसा बेला है, कैसी इसराज और कैसे तबले? निशा के गायन के समय भी देखा था, परन्तु अबकी बार देख नहीं रहा था, उनका निरीक्षण कर रहा था। थोड़ी देर पहले भोजन के समय, दूसरे कमरे में जहां स्त्रियां अलग बैठी हुई थीं, आंख साड़ियों के पल्लों को छूकर लौट लौट आती थी। रंगमंच पर किसी तरह भी और कितने भी समय तक

एकटक देखते रहने में कोई भी बाधा नहीं थी। फिर भी आंख बाजों के निरीक्षण पर आगई और ध्यान उस फूलमाला पर भंवर खाने लगा जो कुन्ती ने जेल के फाटक के बाहर उसके गले में डाली थी। जब जलूस सड़कों पर जा रहा था उसने पीछे मुड़कर देखा था, उसके चेहरे पर पसीना था और धूल की रेखाएँ। आज पसीना न था, धूल की रेखाएँ भी न थीं। उनकी जगह पाउडर ने ले ली थी। रंगमंच ने पाउडर और राग रंजन को क्या लाज़मी कर दिया है! यह अभिनय है, वह अभिनय न था। वह सच्चा था, यह बनावटी है। यदि यह बनावटी न किए होती तो कितनी अधिक सुन्दर दिखती। इसको पाउडर की क्यों ज़रूरत पड़ी? रंचमंच के कोई लिखे या बिना लिखे नियम हैं क्या? यह सब फ़िल्म का दिया हुआ या उत्पन्न किया हुआ उत्पात है। साड़ी, कंचुकी इसकी बहुत सुहावनी है। अभिनेत्रियां भी लगभग इसी प्रकार की सजावट करती हैं। ये वस्त्र उसको भी दिपते हैं। और पाउडर क्यों नहीं? पाउडर ही ने कौन सा क़सूर किया है? चित्रपट की तड़क भड़क को जीवन में उतारने का प्रयत्न। परन्तु क्या जीवन को उससे कोई भी वास्तविक चमत्कार मिलता है? वह सोच रहा था। अचल की आंख बाजों पर से हट कर अपने कपड़ों की ओर गई। अपनी खादी पर उसको अभिमान हुआ। देह को चमत्कार यही दे सकती है। परन्तु क्या स्त्रियों के कोमल मन्जुल सौन्दर्य को भी? क्यों नहीं? अचल की तपस्या ने हट किया। क्यों लोग नाहक़ इतना पैसा इन कपड़ों पर फेकते हैं?

अचल की आंख फिर कुन्ती की ओर गई।

कुन्ती ने गाना शुरू कर दिया था। अचल ध्यान के साथ सुनने लगा और एकटक देखने लगा। कुन्ती का गला मीठा था। गाने के लिए जो राग उसने चुना था वह टीस पैदा करने वाला था, परन्तु साहित्य कबीर का था—

'चादर झीनी भई झीनी······' जो उस वातावरण में विरक्ति या वैराग्य तो उत्पन्न नहीं कर रहा था, पर कुन्ती का कंठ कारुणिक हो गया था।

सुधाकर को उसका गला इतना मीठा लगा कि वह मुग्धसा हो गया। वह राग को नहीं पहिचानता था और न वह जानना चाहता था। कबीर की 'झीनी चादर' में होकर वह अपने जीवन को, आगे धन बढ़ाकर समाज में और भी बड़ा पद पाने को और--अन्त में--कुन्ती के अंगों को देख रहा था।

कुन्ती की आंख पहले ज़रा लजाई, परन्तु जैसे जैसे उसने राग के रूप को उभारने का प्रयत्न किया तैसे तैसे लाज गलती चली गई। फिर वह कभी ऊपर की ओर और कभी कभी सामने दाएँ और बाएँ भी देखने लगी। उसकी पुतलियां काली और बरोनियां लम्बी थीं और उस समय वह अपनी कला में मग्न थी और गीत के साहित्य के सांसारिक पहलू में संलग्न--पारलौकिक पहलू में नहीं। जैसे उसका कोई अनिश्चित, अदृष्ट, अस्पष्ट आराध्य उसके लिए सब कुछ करने को तैयार हो। सुधाकर से न रहा गया। धीरे से अचल के कान में कहा, 'कितना मधुर कंठ है! बहुत अच्छा गा रही है।' अचल को असहमति प्रकट करनी थी। यदि सुधाकर ने कहा होता--अच्छा नहीं गा रही है, तो वह कहता--तुमको कुछ तमीज़ भी है?

अचल बोला, 'हां गला बहुत अच्छा है, परन्तु ताल में नहीं है। देखो, तबला मास्टर उसको ताल में रहने का संकेत करता चला जाता है।'

'ताल में नहीं है! शायद।' सुधाकर ने कहा। और मन ही मन कुढ़कर कुन्ती का गाना सुनता रहा।

जब इन लोगों ने बातचीत की, तब कुन्ती का ध्यान इन दोनों की ओर खास तौर पर खिंचा था। 'शायद कहते समय सुधाकर की गर्दन कुछ ग्लानि के साथ मुड़ी थी। आंख के एक कोने से कुन्ती ने देखा। उसने समझा सुधाकर शायद गाने में कोर कसर का अनुमान कर रहा है। कुन्ती ने और भी अधिक घुल घुलकर गाने का प्रयास किया।

सुधाकर के मुँह से कई बार अनायास ही 'वाह, वाह !' निकला। एकाध बार धीरे से अचल के मुँह से भी। कुन्ती ने सोचा, फिर सुधाकर ने उस तरह से गर्दन क्यों मोड़ी थी ? परन्तु उसकी शंका को अन्तिम 'वाह वाह' में समाधान मिल गया। और लोगों ने भी 'वाह वाह' की। तालियां भी बजाईं। जियाराम ने देखा निशा की अपेक्षा इसको अधिक नम्बर मिल रहे हैं। मनमें कुछ कसक हुई। परन्तु इससे क्या होता है ? अच्छे घर में ब्याहे जाने से निशा को इस सम्मेलन की परीक्षा का फल तो रोकेगा नहीं। और यह कोई स्वयम्बर का क्षेत्र भी नहीं जहां अच्छे गाने नाचने से ही बर का निर्णय हो।

कुन्ती का गाना रुका। रुकते ही बेला मास्टर ने कहा, 'अभी जो गीत मिस कुन्ती ने गाया है, उसी का सार्थक प्रदर्शन वह नृत्य में करेंगी। इसको कत्थक परिपाटी का नृत्य कहते हैं। उसमें कुछ पुट आप शान्ति निकेतन की भी पायंगे।'

कुन्ती घुंघरू बांधे हुए थी। नाचने को उद्यत हुई थी कि तबले वाले को थोड़ी सी ठक ठक की ज़रूरत पड़गई।

अचल ने कहा, 'देखूं नृत्य में पदचालन की बारीकी ताल की परनों के साथ रहती है या नहीं, क्यों कि कत्थक नृत्य में उधर तबले या मृदंग की परनें, इधर पैर के सूक्ष्मतम उद्योग और गीत के बोलों के सार्थक ठाठ, जिन्हें हाव भाव कहते हैं, बहुत ही ज़रूरी है।'

अचल ने वाक्य का अन्तिम खंड बहुत उत्साह के साथ कहा। मन के भीतर उतने ही उत्साह के साथ एक अनुरोध जागा, 'इस उद्योग में अवश्य सफल हो। मुझको इसके किसी भी पदचालन या हाव भाव को ग़लत कहने का मौक़ा न मिले।'

एक क्षण बाद बोला, 'शायद नाचेगी अच्छा।' और उसने एक दबी दृष्टि से कुन्ती की ओर देखा, वह उस समय तबले वाले की 'ठक ठक' को देख रही थी।

कुन्ती का नृत्य शुरू होगया।

एक पार्श्व से निशा भी उसको देखने लगी। वह कुन्ती के गायन और नृत्य को उस उत्सव का बहुत महत्वपूर्ण भाग समझती थी—कभी कभी तो उत्सव की शान और पराकाष्ठा तक। उसकी आंख अचल और सुधाकर की प्रशंसापूर्ण दृष्टि पर भी आती जाती थी। वह समझती थी उसका आयोजन सफल हो गया।

कुन्ती की स्वस्थ और छरेरी देह में हाथ कम सुन्दर न थे, और उँगलियां, नृत्य के हाव भाव में, कमल की पखुरियों का अनुकरण कर रही थीं।

अचल ने सोचा, 'ओठों पर लिपस्टिक लगाए है, तो कौनसी बुराई की? जो कुछ भी है बहुत अच्छा है, ज़रा काँपते कलेजे से वह ताल की परनों का साथ पैर की बारीक भंवरों और छमाकों के साथ कर रहा था। कहीं ग़लत न हो जाय। कहीं सम पर भूल न जाय। परन्तु तबले वाला अधिक बारीकियों के घुमाव फिराव में नहीं जारहा था और कुन्ती के पैर जो काम कर रहे थे उनके पीछे काफ़ी परिश्रम और अभ्यास का इतिहास था। पहले तो अचल चुराई हुई सी निगाहों से कुन्ती को देखता रहा। फिर मुक्त होकर।

'झीनी चादर' के भाव को व्यक्त करने के लिए कुन्ती ने अपनी साड़ी का एक छोर ज़रा सा—बहुत थोड़ा सा उंगलियों को कमल का आकार देकर पकड़ा, और ताना। दूसरे हाथ से उसने 'झीनी' बतलाने के लिए वृत्त बनाए। वक्षस्थल उभर उठा। फिर ताल के संग की ठमक ने उसकी सारी देह को लहरा दिया। वह लहर सिर तक जाकर लौटी और वक्षस्थल पर जाकर सिमटी, और हिल गई। कुन्ती तुरन्त द्रुतलय पर पैरों को छमाके देने लगी।

अचल के मुँह से सहसा निकल पड़ा, 'वाह!' उसने अपने स्वर को संयत भी नहीं किया। ताली भी ज़ोर से बजाई। कुन्ती ने हर्ष के साथ

देखा। कुन्ती अपने पारखी के संगीत ज्ञान की कीर्ति सुने हुए थी। उमङ्ग से भर गई। उसने अपने नृत्य को और भी रसीला बनाया। अचल ध्यानपूर्वक, बारीकी के साथ, उसके अंग अंग की ठवन, सँवार और क्रिया को देखने लगा। ताल में नाच रही है या बेताली है, इस पर उसका ध्यान न रहा।

सुधाकर ने कहा, 'ताल में तो है न ?'

अचल जैसे जाग सा पड़ा हो। उसको सुधाकर का प्रश्न रोकटोक सा प्रतीत हुआ। कोई झटके की बात कहना चाहता था। परन्तु केवल इतना ही कह कर रह गया,

'देख रहा हूं। थोड़ी देर में बतलाऊँगा।'

कुन्ती का ध्यान सुधाकर की ओर भी गया। उसकी आंखें प्यास भरी सी थीं। कुन्ती को अपनी कला का मनोमूल्य मिल गया। अचल से भी बढ़कर सुधाकर ने पसन्द किया। इतना बड़ा आदमी ! परन्तु जानकार अचल बहुत बड़ा है। अचल को बहुत रुचा है। दोनों मित्र हैं। दोनों को कला ने मुग्ध किया है—मानो दोनों के मोह का योगफल दुगुना वज़नदार हो गया हो। हर हालत में कुन्ती को मन में बहुत मोद था।

अचल के मन में सहसा एक तुलना आई—उन छोटी लड़कियों ने भी नाचा था जो पार्श्व की एक बग़ल में गठरी सी बनकर बैठी थीं और जमुहाई पर जमुहाई ले रही थीं। ये लड़कियां भी क्या ऐसा नाच सकेंगी ? क्यों नहीं ? इनको अभ्यास और परिश्रम करना पड़े तो कुछ बरसों में इसी तरह नाचने लगेंगीं। ये भी इसी तरह की स्वस्थ देह वाली हो जायंगी। और—और। बीच में ग्लानि ने एक क्षण के लिए मन को जकड़ा। एक सवाल उठा—क्या लड़कियों के लिए नाच की शिक्षा बहुत ज़रूरी है ? क्या उनके स्वास्थ्य के लिए यही एक बड़ा महत्वपूर्ण व्यायाम है ? उसी समय कुन्ती पर ध्यान पहुंचा।

कुन्ती ने समाज के नृत्य को सुहावना बना दिया है। उसी समय कहीं पीछे से ताली बजी। नृत्य मनोरंजन के लिए बहुत बड़ा साधन है। स्त्री और पुरुषों को निकट लाने का महान आयोजन।

कुन्ती ने नाचे हुए नाच को दुहराया। उसी ताल में वे ही परनें। वही पद चारण। वही हाव भाव। 'चादर भई झीनी' का वही प्रदर्शन। उसमें एक ताज़ापन भी था—वही लहर, देहलता उसी तरह हिली, कमल के पत्तों पर जैसे कमल लहरा जाय उसी प्रकार उसके उभरे हुए अंग लहराए। नृत्य के इस भाग को अचल उस रात भर क्या, शायद हफ्तों देखता रहता, और जैसी कि उसको प्रतीति थी, वह देखते देखते कभी न थकता।

नृत्य अनोखा है, परन्तु गाना ताल में नहीं है। मैं इसको सिखला सकता हूँ? गायन और विवध प्रकार का नृत्य भी। परन्तु यदि वह सीखे, तो। मन के एक गहरे पर्त से इशारा मिला—इसके अभिभावकों से कहलाओ न किसी के द्वारा; मुहल्ले में थोड़े से फ़ासले पर रहते हो, बहुत मुश्किल नहीं है। इस इशारे ने किसी संकल्प या विचार का रूप ग्रहण नहीं किया, परन्तु अचल को वह इशारा लगा बहुत मधुर।

कुन्ती का नृत्य समाप्त हुआ। 'वाह वाह' और करतल ध्वनियों की बाढ़ सी आ गई। साफ़ था लोगों को कुन्ती की कला बहुत प्यारी लगी। 'पुनः पुनः' 'वन्समोर' की चीखें बढ़ी। कुन्ती ने मुस्कराकर नमस्ते के रूप में धन्यवाद दिया और वह फिर नाचने लगी।

अचल देह की उस लहर की फिर प्रतीक्षा करने लगा। कुन्ती को मालूम था उसके नृत्य का कौनसा भाग दर्शकों के पुरुष भाग को बहुत पसन्द आया है। उसने उत्कृष्टता के साथ अपनी उस कला को परिपाक दिया था, अब, जब तक उसकी अपेक्षा कुछ और अधिक मनोहर—या उत्तेजक न हो—तब तक अधिक सराहना पल्ले नहीं पड़ सकती थी। गांठ में आई हुई कमाई को और उस कमाई के सन्तोष को वह कम नहीं

होने देना चाहती थी। इसलिए वह थोड़ा सा प्रदर्शन करके पार्श्व के पीछे चली गई। दर्शकों ने—विशेष कर पुरुषों ने—खूब तालियां बजाईं; जो कुछ अबकी बार पाया था उसके लिये नहीं, बल्कि जो कुछ पहले मिला था और अबकी बार आशा में अटका रहा, और, जो अतृप्त आशा के भीतर एक खरखांचसी छोड़ गया, उसके लिए।

सुधाकर ने अचल से कहा, 'कुन्ती की कला में ग़ज़ब का सौन्दर्य है। मैंने ऐसी करामात पहले कभी नहीं देखी।' अचल के मन में किसी ने झटसे कहा, 'तुमने देखा ही क्या है!' और वह कहकर तुरन्त कहीं ग़ायब हो गया।

अचल बोला, 'यदि उसमें कसर है तो उसका कोई दोष नहीं, सिखलाने वाले की कचाई समझो।'

सुधाकर को आश्चर्य हुआ। उसने कहा 'क्या कसर थी, अचल, उसकी कला में?'

अचल ने कहा, 'कसर नहीं थी। नृत्य में थोड़ी सी अनेकता और पैदा की जा सकती थी, परन्तु सिखाने वाले भी न जानते हों तो वह क्या करे!'

उसी समय पर्दा गिरा और कार्य—क्रम समाप्त हो गया। पान बंटने थे और जियाराम ने कहलवा दिया था कि कुछ बात करनी है, इसलिये वे दोनों अपनी जगहों पर बैठे रहे। शायद निशा और कुन्ती दिखलाई पड़ें, कुछ यह भी कल्पना थी।

सुधाकर बोला, 'कालेज में जैसे संगीत शिक्षक हैं सो तो जानते ही हो। तुमने यदि इन्हीं से सीखने का सन्तोष कर लिया होता तो कितना बढ़ पाते?'

अचल को यह अच्छा लगा।

'ठीक कहते हो भाई! बहुत परिश्रम करना पड़ता है। अबतो कुन्ती थोड़े से परिश्रम से बहुत सीख सकती है। परीक्षा के विषयों में से संगीत वह लिए होगी, यदि अच्छा सिखलाने वाला मिल जाय तो बहुत नंबरों से पास हो सकती है।'

'तुमसे बढ़कर तो यहां कोई और है नहीं। मेरा तात्पर्य है अपने शिष्ट सम्प्रदाय में। वैसे बाज़ारू उस्ताद तो कई मिल जायंगे।'

अचल ने अपना निश्चय सुनाया, 'मुझसे यदि वह कुछ सीखना चाहे तो मुझको कोई इनकार नहीं होगा। मैं कुछ समय दे सकता हूँ।'

निशा और कुन्ती उस बड़े कमरे में एक ओर खड़े होकर बातें करने लगीं। जियाराम आगतों को बिदा कर रहा था। कुन्ती को भी जाना था, परन्तु वह सबसे पीछे जाना चाहती थी। आगत नर—नारियां बिदा होते होते उसकी ओर दृष्टिपात करते जाते थे। वह निशा से बातें करती करती भी सब किसी को शील के साथ नमस्ते करती जाती थी। अपनी कलाका प्रभाव सबपर अनुभव कर रही थी, और वह प्रसन्न थी।

जियाराम आगतों को बिदा करके इन लड़कियों के पास आया।

'इधर आओ', जियाराम ने कहा: 'ज़रा इन लोगों से पूछें तुम दोनों का गाना कैसा रहा!'

जियाराम ने नृत्य का ज़िकर नहीं किया। कुन्ती के चेहरे पर लाज उमड़ आई। निशा की भोली चितवन संकोच पूर्ण हो गई।

निशा बोली, 'पूछ न लीजिये। हम लोग इधर ही बात कर रहे हैं। आकर बतला दीजिएगा।'

'पागल हो क्या?' जियाराम ने ज़िद की: 'कौन सी शास्त्रचर्चा कर रही हो? यहां आओ।'

जियाराम आगे हो गया। वे दोनों उसके पीछे। जियाराम एक सोफ़े पर बैठ गया। वे दोनों उसके पीछे खड़ी हो गईं। अचल और सुधाकर दूसरी कुर्सियां लेकर उसके सामने बैठ गए। बातचीत होने लगी। जियाराम की भाषा में तीन चौथाई अंग्रेज़ी एक बटे आठ अरबी फ़ारसी और बाक़ी के शब्द हिन्दी के थे—अर्थात अधिकांश क्रियाएं और प्रत्यय। सुधाकर की भाषा दो तिहाई अंग्रेजी बाक़ी कड़ी उर्दू और सहज हिन्दी की खिचड़ी। अचल की भाषा एक चौथाई अंग्रेजी, एक चौथाई

उर्दू और बाक़ी हिन्दी थी।

निशा और कुन्ती संकोच के साथ रंगमंच के पर्दे को देख रही थीं।

जो बात सुधाकर के मन के ऊपर उतरा रही थी उसको उसने तुरंत प्रकट किया, 'मिसकुन्ती ने बहुत अच्छा गाया और···'

जियाराम ने तुरन्त टोका, 'घर में तो उसको कुमारी कुन्ती या केवल कुन्ती ही कहते हैं।' 'मिस' के संयोग से कुन्ती का चेहरा शरम के मारे लाल हो गया—वह गड़ सी गई। 'मिस' शब्द ने कई चित्र आंखों के सामने घुमा दिए—घुटनों तक के विलायती घांघरे, घुटनों के नीचे पैर उघरे; अठारहवीं शताब्दि के मुग़ल-काल के पुरुषों जैसे केश-ज़ुल्फ़ें और गर्दन के काफ़ी नीचे भाग तक उघाड़ा शरीर और राग रञ्जित ओठों के बीच में सिगरिट; दूसरा चित्र मिस गौहर, मिस मनोहरी, मिस मनोरञ्जिका इत्यादि का; तीसरा, चित्रपट वाली मिस प्रगल्भा का। परन्तु जब कॉलेज के संगीत मास्टर ने रंगमंच पर परिचय दिया था, तब उसके ऊपर ऐसा कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। अब तो मानो लाजों का सिर पर प्रपात सा हो गया।

अचल ने संभाला। कहा, 'मिस शब्द के उपयोग का कुछ रिवाज़ सा हो गया है।'

इस रिवाज़ को अंग्रेज़ीमें गाली देते हुए जियाराम ने भर्त्सना की,'हमारे समाज में यह शब्द नहीं खप सकता, और न इसको घुसने देना चाहिए।'

सुधाकर झेंपा। झेंप को मिटाने के लिए उसने अपने को हँसी में विकसित किया, 'यह शब्द अपनी ज़बान पर भोंड़ा सा लगता भी है। ऐसे कई शब्द हैं जिनको अपनी भाषा और संस्कृति में स्थान ही न मिलना चाहिए। परन्तु न जाने वे घुसते कैसे चले आते हैं।'

कुन्ती के सिर से एक भार सा कम हुआ।

जियाराम ने कहा, 'यह सब अब आप लोगों के हाथ में है। आप लोग समाज को जिस ओर ले जाना चाहेंगे, जायगा।'

अचल ने नम्रता प्रकट की, 'आप लोग हमारे बड़े हैं। हमारे बड़े जिस ओर चलायेंगे उसी ओर तो जायंगे न हम लोग!'

जियाराम को जो बात कहनी थी उसके आने का अवसर वह कुछ मिनिट उपरान्त समझ रहा था।

पूछा, 'अचल बाबू, इन दोनों के गाने के विषय में अपनी राय दीजिए। आप बहुत जानकार हैं। मैं तो कुछ जानता नहीं। इन दोनों ने अपने पाठ्य विषयों में संगीत भी ले रक्खा है। मैं चाहता हूँ ये अच्छे नम्बरों से पास हों। वैसे भी संगीत इनके जीवन के लिए ज़रूरी है। आज-कल तो वह पहले पूछा जाता है।'

दोनों लड़कियों ने सिर नीचे कर लिए। अचल को नृत्य के कई मनोहर हाव भावों का सौष्ठव सुहा रहा था और कुन्ती की कला के लिए हृदय में ममता जाग उठी थी, परन्तु वह उसकी ताल सम्बन्धी त्रुटियों को भी नहीं भूला था।

बोला, 'स्वर इनके ठीक लगते हैं,'—गले को मधुर कहने में वह अकचकाया,—'राग का रूप भी ठीक रहता है: तानें कुछ अभ्यास के बाद और भी अलंकार पूर्ण हो जावेंगी। ताल में थोड़ी सी कचाई है।'

कुन्ती ने नीचा सिर ऊँचा कर लिया और एक क्षण के लिए अचल से आंख मिलाई। अचल जो बात कहना नहीं चाहता था उसके मुँह से निकल गई, 'परन्तु नृत्य बहुत सुन्दर, मेरा मतलब है, बहुत निर्दोष है। उसमें ताल की कोई कसर नहीं।'

जियाराम ने तुरन्त कहा, 'निशा का गाना कैसा है?'

निशा ने ज़रा सी पीठ फेरी और दूसरी ओर देखने लगी। कुन्ती बिलकुल सम्मुख होकर कुतूहल के साथ सुनने लगी।

अचल ने अपनी सम्मति दी, 'ठीक तौर से गाती हैं। राग का रूप शुद्ध रहता है और ताल में भी रहती हैं। तम्बूरे पर स्वर साधन का अभ्यास करें तो गला बहुत अच्छा हो जायगा।'

कुन्ती ने अपने लिए कही गई बात की इससे तुलना की। उसको मन में कुछ गड़ सा गया।

जियाराम बोला, 'अचल बाबू आप को थोड़ा सा अपना समय देना पड़ेगा। मैं चाहता हूं ये अच्छे दर्जे में पास हों।

अचल ने कहा, 'हाँ हाँ दे सकूंगा समय। मैं एम० ए० की तैयारी भी करता जाऊँगा। जो बिलकुल न जानता हो उसको सिखलाना कठिन और श्रमसाध्य है। ये लोग तो काफ़ी सीख चुकी हैं।'

सुधाकर हँसा—'जैसे मैं, मुझको सिखलाने में गुरु की चोटी का पसीना एड़ी पर आ आ जावेगा।'

कुन्ती और निशा हँस पड़ीं। निशा का भोलापन अलंकृत सा होगया और कुन्ती के सौन्दर्य में मादकता छलक गई—अचल को ऐसा ही लगा।

जियाराम ने कहा, 'आप लोग जानते हैं मैं सुधारवादी हूं। पर्दे के खिलाफ़ हूँ और स्त्रियों के लिए ऊँची से ऊँची शिक्षा और उनके जीवन को कलामय बनाने का पक्षपाती हूँ। मैंने निशा को अच्छी शिक्षा और कला सुलभ करने में कोई कसर नहीं लगाई है। जीवन में आदमी अपने लिए, अपने बाल बच्चों और समाज के लिए जो कुछ कर सकता है मैंने क़रीब क़रीब यथा-शक्ति किया है। अब, आप लोगों की सहायता निशा के भविष्य के विषय में चाहता हूँ।'

कुन्ती और निशा ने एक दूसरे की ओर देखा। उधर जियाराम का वाक्य समाप्त हुआ, इधर निशा ने कुन्ती का हाथ पकड़ा, दबाया और खीच कर लेगई।

जियाराम कहता गया, 'आप लोगों का सम्पर्क लड़कों के संसार के साथ बहुत है। नवयुवक आप लोगों को काफ़ी मानते हैं। निशा के लिए वर तलाश कर दीजिए। मेरे ऊपर बड़ी कृपा होगी।'

उन दोनों ने उस कर्तव्य का पालन करना स्वीकार किया। फिर वे दोनों पान खाकर चले गए।

मकान कुछ दूर थे। पैदल जाना चाहते थे, इसलिए सवारी की चिन्ता उन दोनों को न थी।

रास्ते में सुधाकर ने कहा, 'यदि स्वयम्बर की प्रथा उल्टी करदी जाय तो क्या हो ?'

अचल ने पूछा, 'कैसे उल्टी करदी जाय ?'

'पुरुष स्त्री के गले में जयमाल डालें,' सुधाकर ने हँस कर उत्तर दिया।

'जमाना दूर नहीं है,' अचल ने हँसी के एक ठहाके के साथ कहा, 'पर रहेगा विलक्षण। स्त्रियां पति की पांत में बैठ जायं और पुरुष बिचारा जयमाल हाथ में लिए, शरम से नवा हुआ, घूमें और फिर किसी स्त्री के गले में माला डाल दे।'

सुधाकर—'और यदि कुछ स्त्रियां उस माला के लिए आपस में लड़ पड़ें तो ?'

अचल—'तो पुरुष यातो उन सब लड़ने वालियों को अपनी मालाका एक एक टुकड़ा देकर आत्मसात करले, अथवा, और यह अधिक व्यवहार सम्मत है, एक खूंटी पर माला को टांग कर उनसे कह दे—आपस में निबट लो—और फिर रफूचक्कर हो जाय।'

सुधाकर—'थोड़ी देर के लिए मानलो मुझको या तुमको उन लड़कियों में से किसी के गले में जयमाल डालनी है तो क्या करोगे ?'

अचल—'तुम्हीं बतलाओ तुम क्या करोगे ?'

सुधाकर—'वाह वाह ! मैं ने तो सवाल ही किया है।'

अचल—'नृत्य, हाव भाव, गले के मिठास और आंखों के नशीले-पन को जयमाला अर्पित करनी पड़े तो मैं कुन्ती के गले में डाल दूंगा। परन्तु माला को गले तक पहुंचने के पहले एक ज़रासी झिझक होगी—गोल ठोड़ी और लम्बी पतली सीधी नाक स्वभाव में छिपे हुए हठों के बाहरी चिन्ह हैं। सम्भव है अख़ीर में वे हठ धुल जावें या यह सिद्धांत ही ग़लत निकले। और, यदि सफ़ेद सङ्गमरमर की मूर्ति को, जिसकी आंखें

घूमती हो और ओठ हिलते हो, माला चढ़ानी पड़े तो मैं निशा को चढ़ा दूँगा। पीछे भले ही उसके हाथ जोड़ते जोड़ते जीवन बीते। अब तुम अपनी कहो।'

सुधाकर—'भाई माफ़ करना नृत्य और गायन मुझको पसन्द है, यदि मेरी पत्नी संगीत के इन दोनों अंगों को जानती हो और मुझको रिझाने और सुखी बनाने के लिए उनका उपयोग करे तबतो मुझको कुन्ती का स्वयम्वर करने में संकोच न होगा। वैसे वह सङ्गमरमर की सुन्दर मूर्ति जीवन की संगिनी बनने के लिए ज्यादा अच्छी है।'

अचल—'उसके बाप के पास पैसा भी काफ़ी है!'

सुधाकर—'जिसमें से उसको एक छदाम भी नहीं मिलेगा, क्योंकि छः गण उस पैसे पर आंख गड़ाए हुए जमे हैं। जयमाल गुण और रूप के गले में डालूंगा न कि द्रव्य के गले में। और फिर मैं स्वयं भी तो उपार्जन का काफ़ी प्रयत्न करूँगा। मैं स्त्रियों की स्वाधीनता का कट्टर पक्षपाती हूँ, परन्तु रंगमच पर अपनी पत्नी या होने वाली पत्नी के नृत्य, हाव भाव, घुंघरू की छमाछम इत्यादि का पक्षपाती तो नहीं हूं।'

अचल—'तो स्त्रियों की पूरी स्वतन्त्रता कहां रही?'

सुधाकर—'कहीं तो उसकी सीमा अवश्य होगी, पर मुझको मालूम नहीं। लेकिन उसके अधिक से अधिक विस्तार का मैं क़ायल हूं।'

अचल—'तो फिर निशा के साथ विवाह कर लेने में क्या हर्ज़ है? बुड्ढे ने वर तलाश करने के लिए नहीं कहा है बल्कि वर बनने का निमन्त्रण दिया है। समझे?'

सुधाकर नहीं समझा था। उसके मन को एक हलका झटका लगा, परन्तु उसने अपनी शेखी से वहीं दबा दिया। बोला'

'मैं उसी समय समझ गया था और मैंने निश्चय भी उसी समय कर लिया था—मैं विवाह नहीं करूंगा। तुमको क्या बाधा है?'

अचल ने हँसते हुये उत्तर दिया, 'मेरे सामने अनेक बाधाएँ हैं। एम० ए० की परीक्षा देनी है। उसकी तैयारी में जुटूंगा। थोड़ा बहुत काम काँग्रेस का भी करता जाऊंगा। एम० ए० पास करने के बाद कुछ समय तक देश का कुछ काम करूंगा, तब कहीं विवाह की बात सामने आयेगी।'

सुधाकर ने कहा, 'काम तो मैं भी कुछ न कुछ करता रहूँगा, परन्तु अब परीक्षा के झंझट में नहीं पड़ूँगा।'

'तब तो तुम्हारे सामने, असल में, कोई भी बाधा नहीं है।'

'लेकिन मैं उन दोनों में से किसी के साथ विवाह नहीं करूंगा। विवाह करे ऐसी लड़की के साथ जिससे पूर्व परिचय न हो।'

'बिलकुल अजीब!'

'हां बिलकुल साफ़ स्लेट पर लिखने में मन अच्छा लगता है।'

'यह तो बाल विवाह के समर्थन वाली दलील सी है।'

'अरे नहीं अचल। मैं बाल विवाह के तो बहुत ही ज्यादा विरुद्ध हूँ।'

'तब फिर यह क्या? विवाह करे ऐसी लड़की के साथ जिससे पूर्व परिचय न हो! लोग अपरिचितों के कुल शील और न जाने क्या क्या खोज तलाश करके फिर विवाह सम्बन्ध करते हैं। तुम बिलकुल उल्टी बात कह रहे हो!'

'वास्तव बात यह है कि मुझको अभी विवाह नहीं करना है—और वास्तव का वास्तव यह है कि अभी मैंने कोई निश्चय ही नहीं किया है।'

'तब तो बहुत गुञ्जायश है।'

'अरे, तुम तो मेरे ही ऊपर जियाराम की वकालत कसने लगे!

अचल का मकान आगया। सुधाकर का अभी कुछ दूर था। वह अचल के साथ बातें करते रहना चाहता था, परन्तु समय बहुत हो गया था, इसलिए चला गया।

अचल को देर तक नींद नहीं आई ।

भोज, गायन वादन, वार्तालाप और नृत्य में सबसे ऊपर कुन्ती का नृत्य कल्पना में आ आ जाता था । छोटी लड़कियों का नृत्य भी धुँधले से रूप में सामने आता था । परन्तु वह ग्लनि दे देता था !!!

सुधाकर की बात याद आई—अपनी पत्नी या होने वाली पत्नी के नृत्य, हाव भाव, घुंघरू की छमाछम इत्यादि का पक्षपाती तो नहीं हूँ । तो दूसरों की स्त्रियों का नृत्य क्यों मनको लुभाता है ?

उसने सोचा, 'समाज के कील कांटों और स्त्री की स्वतन्त्रा के ढांचे में कहीं कोई कसर है ।'

सुधाकर कुन्ती के सलौने नृत्य और मधुर गायन के स्पष्ट और धूमिल चित्र बनाता बिगाड़ता जल्दी सो गया ।

[५]

पद्म और गिरधारी को उनके गांव की कांग्रेस समिति ने भर्ती करने में हिचिर मिचिर की। वे उसमें भर्ती होना अपना हक़ समझते थे। थोड़ा सा आन्दोलन करने पर लेलिए जाते, पर उनको शहर घूमना था जहां बैंड, जलूस और आकर्षक दृश्यों की एक झांकी भर देख पाई थी। अचल कुमार बाबू की बातें सुननी थीं और भैरवी भी। बाबू की चिठ्ठी समिति के मन्त्री के पास लायंगे। गांव की समिति को भी तो मालूम हो जाय कि किन लोगों के साथ वे जेल में रहे हैं और कैसे लोगों से उनका मेल जोल है।

वे लोग दोपहर के बाद शहर पहुंच गए। वैसे समय पर गांव में चहल पहल नहीं रहती। पर शहरों में काफ़ी रेल पेल थी। तांगे वालों ने टोका—हटो एक तरफ़। साइकिल वालों ने कहा—कहां देखता है? मोटर का भोंपू बजा। दाएं से बाएं और बाएं से दाएं भागे। वे घबराए और मोटर सिटपिटाई। मोटर वाले ने दांत पीसे। बड़बड़ाया—कमबख्त मरने को फिरते हैं। मुंह उठाए जा रहे थे कि सामने तेज़ी के साथ आने वाले किसी जल्दबाज़ से जा टकराए। उसने कहा, क्या भूतखाना खाली होगया है? और वह लाल आंखें किए चला गया। किसी ने फ़िक़रा कसा, अस्तबल तोड़ कर भाग निकले हैं। कोई कोई कह गया, धोबी आता होगा रस्सा लिए पीछे पीछे। तीसरे पहर वे लोग तलाश करते करते अचल के मकान पर पहुंचे।

भीतर गाना होरहा था और तबले की थाप की ध्वनि आरही थी। थोड़ी देर तक वे लोग सुनते रहे, परन्तु जब देखा कि संगीत रुकता ही नहीं है तब उन्होंने ज़ोर के साथ कुण्डी का खटखटाना शुरू किया। गायन वादन पास की लगी हुई बैठक में होरहा था, इसलिए संगीत की ध्वनियों को रौंदती हुई कुण्डी की खटखटाहट बैठक में पहुंच गई। बैठक के दरवाज़े से सदर दरवाज़े को जाने के लिए एक गैल पड़ती थी।

अचल ने किवाड़ खोले। उसका चेहरा कुछ तमका हुआ था। पञ्चम और गिरधारी थके होते हुए भी प्रफुल्लित थे। अचल ने उन लोगों को पहिचान लिया। साथ छूटे हुए दो तीन सप्ताह ही हुए थे। परन्तु उसको कोई हर्ष नहीं हुआ। तो भी उसने रोष को पी लिया। उन दोनों ने नमस्ते की—जेल में सीखी थी।

अचल ने पूछा, 'अच्छी तरह हो न ? कैसे आए ? कब आए ?'

'दोपहर को आए, शहर घूमें, अच्छी तरह हैं, सोचा बाबू जी सो रहे होंगे इस लिए एक पहर शहर देखने में काटा नहीं तो दिन भर यहीं बिताते।' उन लोगों ने उत्साह के साथ बतलाया।

इस उत्साह को उत्तेजना देने के लिए अचल के पास समय न था, परन्तु वह उन लोगों को दरवाज़े से भगा भी नहीं सकता था। पानी पीने के लिए पूछा। 'हां बाबू पिएंगे,' उन लोगों ने कहा। अचल ने पानी का प्रबन्ध करने के लिए पीठ फेरी, वे लोग पीछे हो लिए और बैठक तक चले जाने में उनको कोई अड़चन नहीं मालूम हुई। उन लोगों ने बैठक में देखा एक सुन्दर लड़की तबले सामने रक्खे हुए बैठी है। अचल मना नहीं कर सका, यद्यपि निषेध कई बार ओठों तक आया। वे बैठक के एक कोने में बैठ गए। जब तक अचल पानी लेकर नहीं आया, वे लोग उस युवती को पहिचानने की कोशिश करते रहे और वे पहिचान कर ही रहे।

पञ्चम ने कहा, 'हम लोग और बाबूजी एक साथ ही उस दिन जेल से छूटे थे, जब आपने उनको हार पहिनाए।'

उन दोनों की दृष्टि अलमारी पर गई। उसमें एक जगह घुंघरू रक्खीं थीं और एक बाजा भी।

युवती नहीं पहिचान सकी। बोली, 'उस दिन बहुत भीड़ थी। क्या आपको भी सत्याग्रह आन्दोलन में सरकार ने जेल भेजा था ?'

पञ्चम ने चाहा झूठ बोल दे। परन्तु थोड़ी ही देर में अचल आने वाला था। उसको मालूम था किस अपराध में सज़ा हुई थी, इसलिए उसने सचाई को रंगत देते हुए उत्तर दिया।

'मैं सत्याग्रह को तभी तक मानता हूँ जब तक ग़ुस्सा नहीं आता। ग़ुस्सा आते ही फिर लाठी से दुश्मनों को सीधा करता हूं, क्यों कि पढ़ा लिखा ही कितना हूँ ? अब आप लोगों के सत्संग से अपने को अवश्य सुधारूँगा।'

गिरधारी दूसरी ओर देखने लगा। उसको भय था कहीं उसका इतिहास न खुल पड़े—क्यों कि उसके कार्य में ग़ुस्से की प्रेरणा का कोई हाथ न था, जो कुछ था सावधानी, चुप्पी और अंधेरी रात के बल का था। उसी समय पानी लेकर अचल आ गया। उन लोगों को आराम के साथ बैठक में जमा देखकर उसको विश्वास नहीं हुआ कि जल्दी चले जायंगे। एक भावना भी उठी, 'मैं ऐसा क्या कर रहा हूं जिससे डरूँ ? बैठना चाहें तो बैठे रहें। चले जाने के लिए कहने में जरूर समस्याएँ खड़ी हो सकती थीं। उन दोनों ने पानी पिया और बैठक में आ बैठे।

गिरधारी ने कहा, 'बाबूजी ,इन बहिन जी को उस दिन जलूस में देखा था। आपको इन्होंने माला पहिनाई थी।'

अचल को उत्तर देने की आवश्यकता नहीं जान पड़ी, फिर भी उसके मुंह से निकल पड़ा, 'आप कुमारी कुन्ती हैं। कॉलेज में पढ़ती हैं और देशसेवा का काम भी करती रहती हैं।'

पञ्चम ने यकायक पूछा, 'क्या आपकी बहिन हैं ?'

सवाल अचल के मन में छिद गया। कुन्ती पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

अचल ने तुरन्त उत्तर दिया, 'नहीं तो। बहिन नहीं हैं। इम्तिहान के लिए एक विषय संगीत भी इन्होंने ले रक्खा है। इस समय सीखने के लिए आती हैं। थोड़ी देर में सीखकर चली जायंगी। पड़ोस में ही रहती हैं। कुछ दिन से सीखने लगी हैं।'

अचल को ग्लानि हुई क्यों इतनी सब कैफ़ियत दी। पञ्चम के मन में एक विचार कौंध गया, 'तबला बजाने की शिक्षा दरवाज़ा बन्द करके

क्यों ? परन्तु मुझको क्या करना है ? पढ़ों लिखों में आजकल कुछ ऐसी रीति ही चल पड़ी है। इनकी तो दुनियां ही न्यारी है।'

पञ्चम ने कहा, 'सिखलाइए बाबूजी, सिखलाइए, हम लोग भी सुनेंगे। आखिर अभी कहीं जाना भी तो नहीं है। हम लोगों को कुछ काम है सो थोड़ी देर में देखा जायगा।'

अचल व्यग्रता के साथ बोला, 'अभी न कह डालो क्या काम है। मैं तुमको फ़ारिग करदूँ। क्यों व्यर्थ रुके रहो।'

पञ्चम—'नहीं अचल बाबू कोई बात नहीं, कोई जल्दी नहीं है। हम लोग इस समय अपने गांव को लौट भी नहीं सकते। रात भर यहीं रहेंगे। सवेरे चले जायेंगे। कोई जल्दी नहीं है।'

अचल—'अच्छा, अच्छा। कुन्ती शुरू करो। मैं गाता हूँ। झपताल में गाऊँगा।'

पञ्चम—'नहीं अचल बाबू भैरवी में गाइए।'

अचल—'भैरवी सवेरे के समय गाई जाती है, भाई मेरे।'

पञ्चम—'पर हमारे गांव का तिजुआ तो किसी समय भी गा देता है। और बाबूजी वह हारमौनियां बजाते बजाते गाता है; मुंह से बीच बीच में ताल भी देता जाता है। पर आप उससे बहुत अच्छा गाते हैं इसमें कोई सन्देह नहीं।'

अचल—'कुन्ती, जब हम लोग जेल में थे, तब इन लोगों की ड्यूटी हमारे काम पर रहती थी! पास ही इनकी बारक थी। वहां से ये लोग गाना सुना करते थे।'

गिरधारी—'बाबूजी आप मुंह से ढोलकी की आवाज़ निकाल सकते हैं ? तिजुआ तो ढोलकी की बिलकुल नकल उतार देता है।'

कुन्ती—'क्या इनको भी लाठी चलाने के कारण जेल जाना पड़ा था।'

गिरधारी—'नहीं बहिन जी। गांव वालों ने दुश्मनी के कारण फँसा

दिया था। अबकी बार पन्चू भैया की मदद से उनका सिर खोलूंगा फिर चाहे डामर क्यों न जाना पड़े।'

अचल—'इनको दूसरी तरह के मुक़द्मे में सज़ा हुई थी…'

गिरधारी—'गाइए न बाबूजी। थोड़ा सा हम लोग भी सीख लेंगे। आपने, उस दिन जब जेल से छुटकारा मिला, वचन दिया था कि भैरवी सिखलायंगे। मैंने कहा था अबकी बार जो सत्याग्रह होगा उसमें अपने बहुत से साथियों को लेकर आऊँगा और भैरवी सीखूंगा। सो घर पर ही आगया। ह! ह!! ह!!!'

अचल—'इतना सब याद रखना मुश्किल है।'

गिरधारी—'मुझको याद है। आप को याद दिलाता हूँ। मैं कुछ दूर से सुन रहा था। आप सुधाकर बाबू को किसी मद्रासी टोइँया का हाल सुना रहे थे।'

कुन्ती—'यह मद्रासी टोइँया कौन है?'

अचल—'मर गया। बहुत दिन होगए। था एक।'

पञ्चम—'मैंने नहीं सुन पाया था। मैं फाटक के पास पहुंच गया था। सुनाइए बाजूजी वे कौन महात्मा थे टोड़िया जी।'

गिरधारी—'अरे पन्चू भैया वह सब मैं तुमको रात के बक्त सुना दूँगा, जब बैठक में हम लोग सोने के लिये लेटेंगे। सुधाकर बाबू कहां हैं, बाबू जी?

कुन्ती—'ये तो आप सब लोगों को जानते हैं!'

अचल—'हम लोगों को क्या, ये हम सबके कुर्सीनामें तक जानते हैं। जेल जगह ही ऐसी है। सब प्रकार के लोग इकट्ठे होते हैं।

पञ्चम—'बाबूजी, सवेरे के समय कितना आनन्द आता था। जब आप गाते थे मालूम होता था जैसे कोयलें कूक रही हों।'

कुन्ती—'कोयलें!'

पञ्चम—'हां बहिन जी।'

कुन्ती—'कण्ठ तो इनका सचमुच मधुर है।'

पञ्चम—'और हमारे निजुआ से कहीं अधिक गाना बजाना जानते हैं। बाबूजी, वह ग़जब का नाचता है साला। ओ हो, ऐसी फिरकियां लेता है कि उसका चेहरा नाच में गुम हो जाता है। और वह कटारों पर, बताशों पर भी नाचने की दम रखता है।'

गिरधारी—'न जाने उसने इतना कहां से सीख लिया। उमर भी बहुत नहीं है। बस आपकी ही टाईं का होगा, वही बीस बाईस बरस का।'

कुन्ती—'तुम भी नाचते हो या नहीं ? गांव में तो सभी लोग नाचते गाते हैं।'

पञ्चम—'सो होली दिवाली पर, बस। वैसे बहिन जी, हम मर्द लोग नाचते नहीं हैं। गाते तो भला बुरा सभी हैं।'

गिरधारी—'बाबूजी तो नाचते भी हैं। जब दूसरे बाबू लोग हट पकड़ते थे तब बारक के किवाड़ बन्द करके बाबूजी नाचते थे। हमलोग किवाड़ों की सांसों में होकर देखा करते थे ! पर न जाने कैसे हाथ उमेंठते थे।माफ़ करना बाबूजी, निजुआ सरीखी फिरकियां आप भी न ले सकेंगे।'

कुन्ती—'अचल बाबू ने बड़े आचार्यों से नृत्य की कला सीखी है। वैसा नाचना कठिन है।'

पञ्चम—'अचरियों से ! ये कौन लोग होते हैं ? कहां रहते हैं ! क्या इसी शहर में ?'

अचल—'कहा था न, ये हम सबके कुर्सीनामें जानते हैं। सीखना है या बन्द करूँ ?'

पञ्चम—'नहीं बाबूजी, ज़रासा सुनलें तो सुधाकर बाबू के यहां भी हो आएं।'

अचल—'वहीं लेट जाओगे न ? हम किवाड़ शाम से ही बन्द करके भीतर चले जाते हैं और पढ़ने में लग जाते हैं।'

पञ्चम—'सो बाबूजी, कानों को ज़रासा रस में भिगोकर सुधाकर बाबू

से राम राम करके और कुशलछेम पूछकर सांझ के पहले ही आ जायंगे।'

अचल—'तो अभी न हो आओ। सांझ होने में बहुत देर नहीं है।'

गिरधारी—'अभी तो बहुत देर है, बाबूजी। टालिए नहीं। हमलोग भैरवी सुने बिना नहीं जायंगे। सोचिए, आपने जेल में कितना नेह बरसाया। अपना पेट काटकर हम लोगों को पैसे देते थे। हम लोग उससे कितने आराम की चीज़ें पाते थे। तमाखू, बीड़ी—'

अचल—गांजा और चरस—'

कुन्ती—'गांजा और चरस !!! जेल के भीतर !!!!'

अचल—'यह मेरी ग़लतियों का कुर्सीनामा है, मेरी नेकियों का नहीं।'

गिरधारी—'बाबू आप क्या नाराज़ हो गए ?'

पञ्चम—'अरे, बाबू तो वहां भी कभी कभी उल्टे पुल्टे बोलने लगते थे—तो क्या हम लोगों ने कभी बुरा माना ?'

अचल—'अरे भाई उल्टा पुल्टा नहीं बोल रहा हूँ ! बिलकुल सीधी कह रहा हूँ। जेल में हमारे तुम्हारे सिवाय और था भी कौन ?'

गिरधारी—'हां बाबूजी एक कुटुम्ब सा बन गया था। कभी कभी बहुत याद आती है।'

कुन्ती—'क्या वहां लौटकर जाने की जल्दी है ?'

अचल—'अभी तो सुधाकर के यहां जाना है।'

गिरधारी—'नहीं बाबू, न जेल जाने की जल्दी है और न सुधाकर बाबू के घर जाने की।'

अचल—'ओफ़ कितना समय निकल गया ! घड़ी निर्दयता के साथ बढ़ती चली गई और मालूम भी नहीं पड़ा !'

पञ्चम—'सो बाबूजी, कोई बात नहीं। सोचिए कितने दिनों बाद आज मिल पाए। दर्स पर्स हो गए, वैसे बिछोह को १५, २० दिन ही हुए होंगे, पर लगता ऐसा है जैसे बरसों के बाद मिले हों।'

अचल--'अब बहुत दिनों बाद मिलेंगे, क्योंकि मुझको अपनी परीक्षा की तैयारी करनी है और कुमारी कुन्ती को भी तैयार करना है।'

गिरधारी—'यह तो बहुत पढ़ गई होंगी बाबूजी। और ज्यादा पढ़ कर क्या करेंगी? इनको कौन दफ्तर में काम करना है। परन्तु आपलोग बड़े हैं। आप को सब सुहाता है। हमारे गांव में तो रामा और श्यामा ने चौथा दर्जा पास कर लिया है और रामायण खूब बांचने लगी हैं। दूसरी लड़कियों ने तो पहले दूसरे दर्जे से ही छोड़ दिया।'

अचल—'अब मेरे पास समय नहीं है, कुन्ती। कल देखूंगा। झपताल के जो बोल बतलाए हैं उनको याद रखना। घर पर अभ्यास कर लेना।

पञ्चम—'पर बाबूजी हम लोगों ने कुछ भी न सुन पाया।'

कुन्ती—'गा दीजिए, अचल बाबू। ये लोग काफ़ी दूर से आए हैं। मैं बजाऊंगी।'

कुन्ती ने मन में कहा, 'कोयलों की कूकें!'

गले तक हँसी ने हिलोड़ मारी, परन्तु वह ओठों पर नहीं आई। अचल ने देखा कुन्ती उसके खीजने पर खिन्न नहीं हुई है, और सहानुभूति नहीं उमड़ी है, परन्तु उसके जी में कुन्ती पर किसी प्रकार की भी निर्ममता का आरोप करने की बात नहीं उठी।

अचल ने गाना शुरू किया और कुन्ती ने तबला बजाना। अचल कुन्ती के तबले की जांच के लिए ज़रा थमा था कि पञ्चम ने टोका, 'बाबूजी यह तो आप कुछ और गा रहे हैं।'

कुन्ती ने तबला बन्द कर दिया।

पञ्चम कहता गया, 'यह तो वह गीत नहीं है जो आप जेल में गाया करते थे। भैरवी यह बिलकुल नहीं है। आप जेल में गाया करते थे— 'फुलगेंदवा न मारो राजा लगत करेजवा में चोट।' गिरधारी, तुम कुछ गाते हो। अचलबाबू भैरवी तो नहीं गा रहे हैं न?'

कुन्ती ने एक ओर आँखें फेर लीं। अचल मारे क्रोध के कुछ क्षण चुप रहा।

बोला, 'तुम लोग अदब तमीज़ कुछ नहीं जानते।'

पञ्चम ज़रा सा सकपका गया। परन्तु तुरन्त संभल कर बोला, 'ऐसा मैंने क्या कहा बाबूजी? अगर मुँह से अनजानें कुछ निकल गया हो तो माफ़ करना। हम लोग गांव के हैं परन्तु आप ही सोचिए जेल में तो हमलोग इससे भी अधिक करी—कोरी बातें कर डालते थे और आप कहा करते थे हमलोग सब भाई भाई हैं, हमारे तुम्हारे बीच में कोई अन्तर नहीं है। केवल धन—सम्पत वाले लोग बुरे होते हैं और न जानें क्या, क्या।'

अचल ने कहा, 'हर एक बात का मौक़ा होता है, क्या तुम इतना भी नहीं समझते? मुझको नेता बनने का शौक़ नहीं है, इसलिए अब यह सब बन्द करो।'

गिरधारी ने संभाला, 'हां बाबूजी, अब समय भी हो गया है। ज़रा सुधाकर बाबू के यहां हो आवें, फिर आए जाते हैं थोड़ी देर में।'

वे दोनों उठे। कुन्ती ने भी तबले एक ओर रख दिए और उठ खड़ी हुई। बोली, 'घर पर आज के पाठ को दुहराऊँगी। कल शायद ज्यादा अच्छा बजा सकूँ।'

कुन्ती नमस्ते करके चली गई।

और, अचल का क्रोध किसी दूसरी दिशा में। उसको अपना वाक्य 'मुझको नेता बनने का शौक़ नहीं है' कान में खटक रहा था।

अचल ने ज़रा नरम होकर कहा, 'जल्दी लौटकर आजाओ तो तुम्हारी बात उस समय सुनलूं, नहीं तो अभी कहलो।'

पञ्चम ने मुस्करा कर कहा, 'अभी सही, बाबूजी। ज़रा सा तो काम ही है। हमारे गांव की कांग्रेस-समिति के मन्त्री को एक चिट्ठी लिख दीजिए, वह हमको मैम्बरों में भर्ती करले।'

'क्या उसने नाहीं की है ?'

'नाहीं तो नहीं की है, परन्तु किनर मिनर करता है, दूसरी पार्टी का आदमी है न। हम लोगों ने चिरौरी नहीं की। सोचा था आपकी चिट्ठी लेते आवेंगे।'

'और भैरवी सुनते आवेंगे' अचल ने परस्थिति की कटुता को मज़ाक़ में बहा देने के प्रयत्न से कहा। 'मैं चिट्ठी लिख दूंगा। गिरधारी के लिए कुछ दिक्क़त होगी। इनको चोरी में सज़ा हुई थी।'

गिरधारी नाक फुलाकर बोला, 'बाबूजी, आप कहते थे कांग्रेस में भर्ती हो जाने पर सब लोग अच्छे बन जाते हैं, पवित्र हो जाते हैं, कांग्रेस गंगाजी है। और फिर मैंने किया कुछ न था। बैरियों ने फँसा दिया। और किया भी हो तो आप जेल में कहा करते थे कि मैंने सम्पत्ति को बांटने और बदलने की ही कोशिश तो की है—साहूकार के यहां से हटाकर ग़रीब के यहां रख दी !'

अचल हँसा। 'तुम भोले हो गिरधारी। मैंने जेल में हँसी हँसी में न जाने क्या क्या नहीं कहा, परन्तु उसको सबके सामने नहीं कहना चाहिए।'

पञ्चम ने पश्चात्ताप की आकृति के साथ कहा, 'बाबूजी, माफ़ करना। मुझको उस लड़की के सामने 'फुलगेंदवां' वाले गीत की बात नहीं कहनी चाहिए थी। वह क्या कहती होगी ?'

अचल के भीतर कुछ करकरा गया। कुन्ती महज़ लड़की नहीं है। युवती है। जेल के भीतर किवाड़ बन्द करके नाचना, 'फुलगेंदवां न मारो राजा लगत करेजवा में चोट' का गाना, इत्यादि, नेता बनने की कुछ न कुछ इच्छा होते हुए भी 'नेता बनने का शौक़ नहीं है' व्यर्थ ही कह देना—उसके सामने ही यह सब जो उसको नेता के रूप में देखने लगी है ! भाव को दबाकर अचल बोला, 'मैं गिरधारी के लिए भी लिख दूंगा। कांग्रेस राजनैतिक दल है, कोई भी उसका मेम्बर हो सकता है।

तुम्हारे इतिहास से उसको क्या मतलब ? मैं अभी लिखता हूँ। लौटकर आना तब यहीं बैठक में लेट जाना। खिड़कियां खोल लेना, गर्मी नहीं लगेगी।'

अचल ने पञ्चम को चिट्ठी लिखकर देदी। वे लोग सुधाकर के घर गए और बात चीत कर के लौट आए।

जब रात को अचल भीतर चला गया और वे लोग बैठक में लेट गए पञ्चम ने गिरधारी से कहा, 'कुन्ती और अचलबाबू के बीच में क्या कैसा समझते हो ?'

गिरधारी—'ये शहर वाले हम लोगों को बिलकुल भोंदू समझते हैं, जैसे हमारे आंख कान ही न हों। पर शायद वह इम्तिहान सीखने ही आती हो। लेकिन तबला ! भाई पन्चू कुछ समझ में नहीं आया। एक बात साफ़ है, जेल वाले अचलबाबू और इस कोठी वाले अचलबाबू में फ़रक ज़रूर है। बाबूजी काफ़ी रंगीले हैं।'

पञ्चम—'कमरा बन्द करके तबले की तालीम ! कुन्ती का क्या ब्याह नहीं हुआ होगा ? इसके मां बाप इतनी सयानी लड़की को कैसे आने देते हैं और अकेली रहने देते है ! कुछ दाल में काला है गिरधरिया।'

गिरधारी—'हमलोगों को बनाती भी थी। कहती थी, क्या जेल को लौट जाने की जल्दी है ? अरे भाई जल्दी तो हमलोगों को हटाने की पड़ रही थी !'

पञ्चम—'मैंने वह करेजवा में चोट लगने वाले गीत का जिकर कर ही तो दिया। बाबू उसी पर तो कुड़क गए। पर हैं अच्छे आदमी। अलमारी में घुंघरू भी रक्खे रहते हैं, हैं अच्छे आदमी।'

गिरधारी—'अच्छे तो हैं ही पन्चू। तबतो इतनी सयानी लड़की बेधड़क उनके पास आती है। तुमने ठीक कहा—कुछ दाल में—खैर, ह ! ह !! ह !!! हुं।'

पञ्चम—'चुप भी रह। क्या करना है। ऐसी गड़बड़ें तो शहरों में होती ही रहती हैं। जब उसके मां बाप को ही फ़िकर नहीं तो, हमें तुम्हें क्या पड़ी है!'

गिरधारी—'शहरों में क्या, गड़बड़ तो कुछ न कुछ सब कहीं है। औरतें सब ठौर सिर उठाने लगी हैं।'

पञ्चम—'तब हमें तुम्हें भी किसी दिन हार फूल मिलेंगे।'

गिरधारी—'पहले थोबन माते वगैरह से निपटना है, खाए जाते हैं।

[६]

गांव पहुंचते ही पञ्चम ने चिट्ठी अपने यहां की समिति के मन्त्री को दी। अचलकुमार को उस गांव के कार्यकर्त्ता जानते थे। सज़ा पाए हुए लोगों को भर्ती करने में उनको विशेष आक्षेप न होता, परन्तु पञ्चम और गिरधारी दूसरे दल के आदमी थे। पञ्चम लठैत था। समिति का एक खासा भाग थोबन माते के दल वालों का था, परन्तु अचल की चिट्ठी के सामने उनको झुकना पड़ा। एक कल्पना ने झुकने में सहायता की। ये लोग लिहाज़ के कारण ज्यादा बदमाशी नहीं कर पायंगे। और दबे दांव चित भी किए जा सकेंगे।'

भर्ती होने के बाद उन दोनों के बाहरी जीवन में कुछ अन्तर भी आया। साफ़ रहने लगे, गांव में एक साप्ताहिक पत्र आता था, उसको बांचने की कोशिश करने लगे और क्रांति को समझने तथा उसका अपना अर्थ लगाने का भी प्रयत्न करने लगे। चिलम कम और बीड़ी अधिक पीने लगे!'

गांव में व्याख्यान देने वाले लोग भी कभी कभी आजाते थे। और पुलिस तथा तहसील के लोग तो कहीं ज्यादा अवसरों पर आते थे।

थोबन का षड्यन्त्र, जिसको वे लोग कुचक्र कहते थे, जारी था। वह गिरधारी के पीछे पुलिस की फ़र्द और पञ्चम के पीछे फिर से बलवा करने की तैयारी का सन्देह लगाए हुए था। गांव की कांग्रेस समिति में उसका लड़का ढाल और तलवार, दोनों का काम करने के लिए था ही। गिरधारी को बड़ी आशा थी कि कांग्रेस का मैम्बर हो जाने पर फ़र्द से निस्तार मिल जायगा, परन्तु वैसा न हुआ। गिरधारी के राजनैतिक अभिमान को चोट लगी।

इन दोनों का पूरा दल गांव की समिति का सदस्य न था, और न थोबन का पूरा दल। समिति के अधिकांश मैम्बर इन दोनों के दलों में बटे हुए थे और गांव की अधिकांश जनता समिति से बाहर अपने काम

काज में अनुरक्त और फ़ुरसत के समय में गांव की दलबन्दी के झंझटों में कन्धा देने के लिए तैयार। समिति दोनों दलों का पेशखेमा या मोर्चा-बन्दी थी। जो थोड़े से मेम्बर दलबन्दी के बाहर या ऊपर थे, वे समझते थे कि गांव भर राष्ट्रीय राजनीति के चमत्कार और प्रभाव में ग्रस्त हो चुका है, इसलिए अब जो कुछ होगा वह गांव के लिए बुरा न होगा।

पन्चम और गिरधारी की बात-चीत हुई। पन्चम ने जोश के साथ कहा, 'पुलिस अंग्रेज़ों की गुलाम है और थोबन सरीखे लोग उन दोनों के। थोबन और उसके दलवाले तमाम गांव के किसानों और मज़दूरों को कुचले दे रहे हैं।'

गिरधारी बोला, 'पुलिस और तहसील वालों की खुशामद पर तो थोबन और उसके पिछू ज़िन्दा ही हैं। उनके लिए बेगार लेते हैं और अपने लिए। हम लोग कुछ कहें तो हमारी खाल उधेड़ी जाय, मानो क़ानून हमारे लिए बनाया ही नहीं गया। अंग्रेज़ी राज्य इन्हीं लोगों के कन्धों पर टिका हुआ है।'

पन्चम—'इनको खतम करदो तो अंग्रेज़ी राज्य भी खतम हो जायगा।'

गिरधारी—'न जाने गांधी बाबा इन लोगों को साफ़ कर देने के लिए क्यों नहीं कहते।'

पञ्चम—'कहते हैं सत्याग्रह करके इनके दिल बदल दो, सब ठीक हो जायगा। काला कभी सफेद हुआ है?'

गिरधारी—'थोबन का दिल तो खोपड़े की मरम्मत करने पर ही बदल सकेगा।'

'सब तरफ़ यही बात हो रही है, गिरधारी। कुछ नेता कहते हैं कि अंग्रेज़ों और थोबन सरीखे लोगों का दिल सिर्फ़ तलवार-बन्दूक़ की आवाज़ को पहिचानता है। ये हथियारों से ही ठीक किए जा सकते हैं।'

'पर यार गांधी बाबा ने इतने बड़े अंग्रेज़ी राज्य को बिना हथियारों के ही जड़ से हिला दिया है और वह अब-तब गिरता ही है। लेकिन यह ज़रूर है कि थोबन के भाई बन्द बिलकुल नहीं डिगे हैं।'

'भाई वे महात्मा हैं। उनकी बात जाने दो। लगाओ चार सपाटे और फिर मनही मन गांधी बाबा से माफ़ी मांग लो। इतने बड़े भगवान जब क्षिमा कर देते हैं तो गांधी बाबा भी भूल-चूक माफ़ कर देंगे।'

'और वे कौन यहां देखने को आते हैं'

'आवेंगे भी तो उनके दर्शनमात्र से पाप कट जायगा। उनके पैरों की धूल माथे पर चढ़ालेंगे और उनके चले जाने पर दूसरे सपाटों के लिए तैयार हो जायेंगे।'

'बिलकुल ठीक कह रहे हो। देखो न, अचल बाबू वगैरह भी तो उन्हीं के चेले हैं। वे भी कहते हैं हथियार तो किसी दिन उठाना ही पड़ेगा। जब मौका आपड़ेगा, हथियार गांठ में न होंगे, तो उठायेंगे क्या पत्थर! और फिर, हथियार हाथ में आते ही अपने आप तो चलने नहीं लगता! कुछ अभ्यास भी तो करना पड़ता है।'

पञ्चम ने मुट्ठी कस कर कहा, 'कलेजा पक्का करलो। हथियार इकट्ठे हो जायेंगे। थोबन और उसके भाई बन्दों के अत्याचारों को तो खतम करना ही है, चाहे कुछ हो।'

'मेरा कलेजा पक्का है। मैं इस कमबख्त फ़र्द के मारे मरा जा रहा हूं।' गिरधारी बोला।

'अरे यार फ़र्द-बर्द की परवाह मत करो। जैसे एकाध बीमारी देह को लगी रहती है तो भी संसार के सब काम करने ही पड़ते हैं वैसे ही इसको समझो। हथियार इकट्ठा करने के लिए तुमको बाहर नहीं जाना पड़ेगा। मैं सब करलूंगा।'

'अचल बाबू से न पूछ लेते!'

'किसी बाबू से कुछ मत पूछो। ये लोग टाला-टूली करेंगे, अपना काम पिछड़ जायगा।'

गिरधारी ने सहमति प्रकट की। पञ्चम हथियार इकट्ठे करने में लग गया।

[७]

निशा की सगाई सम्बन्ध के लिए जियाराम ने कई लोगों से कहा था। उनमें से एक अचल था, जिससे कई बार कहा था। जियाराम जिस प्रकार शेयर-बाज़ार पर सूक्ष्म और तीक्ष्ण दृष्टि रखता था, उसी प्रकार हर काम पर जिसको वह हाथ में ले लेता था। और निशा का विवाह तो जीवन के अत्यन्त आवश्यक कार्यों में से एक था ही।

अचल को मकानों के किराए की आमदनी थी और घर में केवल बुढ़िया मां। मां की सेवा टहल के लिए केवल एक नौकरानी। अपना काम वह स्वयं अपने हाथों करता था। धनाढ्य लोग उसको कंजूस समझते थे। ऐसे घर में निशा पहुंचकर कैसे अपने दिन काटेगी? बहुत सीमित कुटुम्ब, न मोटर और न कोई अन्य सवारी। परन्तु अचल स्वयं स्वस्थ, सुरूप और होनहार युवक था। अचल की देश-भक्ति की उसने अनेक बार प्रशंसा की थी, मन ने यद्यपि उस प्रशंसा का साथ नहीं दिया था—न जाने कब जेल चला जावे, जायदाद ज़ब्त हो जाय और निशा अन्त में अपने मायके का भार बन जाय। तो भी अचल में कुछ ऐसा था जो जियाराम को थोड़ा सा मोह दे देता था, परन्तु कल्पना सुधाकर सरीखे युवक पर ज्यादा रम रम जाती थी।

सुधाकर को आगे और अध्ययन तो करना ही न था, वह ठेकेदारी के व्यवसाय में लग गया। अपने मृत पिता के एक मित्र की सांझ में। उस सांझिए की सहायता से कुछ दफ्तरों में उसने अपना नाम अलग भी दर्ज करवा लिया। उसके घर में कोई भी न था—मां का देहान्त पहले ही हो चुका था, केवल एक फूफी थी जो उसको प्यार करती थी और व्यवहार कुशल भी काफ़ी थी। थी उसकी आश्रित ही। नौकर चाकर थे और सवारी भी। सब फूफी के कहने में थे। घर का काम अबाध चलता था। सुधाकर घर की चिन्ताओं से आज़ाद था। जियाराम इसको निशा के लिए ज्यादा अच्छा वर समझता था, परन्तु कोई और भी ज्यादा अच्छा मिल जाय इस लालसा से वह निरत नहीं हो पाता था।

अचल सोचता था जियाराम सुधाकर को शायद पसन्द करले। अपने को वह प्रार्थितवर के चित्र में न तो देखता था और न उसकी इच्छा थी। एक दिन जियाराम के वार्तालाप में अचल को सुधाकर के लिए कुछ अनुरोध मालूम हुआ। कर्तव्य पालन की दृष्टि से वह सुधाकर से मिला।

'ठेकेदारी तो ज़ोर शोर से तुमने शुरू ही करदी है। अब ब्याह और कर डालो।'

'ज़ोर शोर के साथ उसको भी? ठेकेदारी तो शुरू कर दी है और जारी भी रहेगी, पर ब्याह तो शुरू करते ही खतम भी हो जायगा। फिर जारी क्या रहेगा?'

'पत्नी के साथ प्रेम।'

'और यदि झगड़े बखेड़े खड़े होगए तो उनको भी जारी रखना पड़ेगा क्या?'

'बिना बखेड़े का जीवन ही क्या।'

'एक दिल हज़ार आफ़त।'

'हज़ार दिल एक आफ़त, यों कहो। एक एक आफ़त के लिए दिल हज़ार हज़ार होकर लड़ पड़ता है।'

'तो वह आफ़त कौनसी है, मुनू भी?

'जैसे ठेकेदारी ढूंढली वैसे ही पत्नी भी ढूंढलो।'

'ठेकेदारी तो सोंझ में मिल गई परन्तु ब्याह तो सोंझ में होता नहीं'

'नहीं, यह व्यवसाय शुरू तो अकेले अकेले ही करना पड़ता है फिर प्रेम के सोंझिए बाल बच्चे बन जाते हैं।'

'तो कोई लम्बी योजना सोच कर आए हो आज? पञ्चवर्षीय, दश-वर्षीय, या और लम्बे वर्षीय कोई योजना?'

'असीम वर्षीय।'

'मेरे लिए या अपने लिए?'

'तुम्हारे लिए। मैं तो अभी रट्टे रपाटों से दूर हूँ।'

'मुझी को क्यों फालतू समझ रहे हो भाई ? तुम्हारे लिए वह रट्टा रपाटा है और मेरे लिए स्वर्ग !'

'तुम जल्दी ब्याह करोगे, मैं जानता हूँ। ठेकेदारी का रुपया अकेली बुआजी कहां तक गिना करेंगी ?'

'अच्छा ! मालूम होता है बुआजी के साथ कोई षड्यन्त्र रचकर आए हो। वे भी कई बार कह चुकी हैं।'

'उनको तुमने क्या उत्तर दिया ?'

'कह दिया देखा जायगा।'

'मुझसे भी क्या यही कहोगे ? कहोगे तो मैं दूसरा प्रश्न करूँगा, कब तक ?'

'सच बतलाओ बुआजी ने क्या क्या कहा ?'

'बुआजी से मेरी कोई बात नहीं हुई। सच कहता हूँ।'

'तब फिर किससे बात हुई ? जियाराम जी से बात हुई होगी ?'

'तुमने कैसे जाना ?'

'ऐसे कि उन्होंने वर तलाश करने के लिए मुझसे भी कहा है। मैं तुमसे कहने वाला था।'

'क्या ?'

'यही कि तुम निशा के साथ ब्याह करलो।'

निशा का भोला भाला सौन्दर्य, आकर्षण की कमी, मन्द या कुन्द सी प्रकृति—सब बातें एक साथ अचल की आँखों के सामने फिर गईं।

अचल ने कहा, 'मुझको तो ब्याह करना ही नहीं है, कम से कम कई बर्ष तक। मैं तुमसे निशा के सम्बन्ध में ही कहने के लिए आया था। जियाराम की बात में कुछ इस प्रकार का संकेत भी था।'

सुधाकर को निशा का भोलापन मन उल्झाने वाला नहीं लगता था, परन्तु वह अपने जीवन के लिए कुछ अधिक तीव्र सामग्री चाहता था।

निशा बहुत समय से परिचित थी। उसने कभी किसी संकेत या कटाक्ष से उसकी ओर नहीं देखा था। ब्याह का अत्यन्त उत्तेजक नशा केवल एक बार मिलना था। उसकी कल्पना के सुखस्वप्न भले लगते थे। अवकाश के समय में, अधमुंदी पलकों, मनके खिलवाड़ बहुत विनोदपूर्ण थे। निशा के साथ वह खिलवाड़ मन नहीं कर सकता था। कुछ खिलवाड़ कुन्ती के साथ किया जा सकता था, कभी कभी प्रचुर मात्रा में किया भी जाता था, परन्तु कल्पना को फूलों की सेज और सुगन्धियों की महकें देने के लिए कोई अश्रुतपूर्ण समाचार, कोई नई शकल, कोई नवीन रूप सरूप ज्यादा अच्छा चाहिए था, इसलिए निशा पर तो भावना ठहरती ही न थी। एक संगमरमर की मूर्ति को, वह चाहे जैसी सुन्दर हो, अपना सारा जन्म कैसे दे दूंगा?

सुधाकर ने दृढ़ता के साथ विरोध किया, 'मैं निशा के साथ विवाह करने के लिए बिलकुल तैयार नहीं हूं।' फिर एक झूठा बहाना लिया, 'जियाराम जी के पीछे छहों भाइयों में कुछ न कुछ खीचातानी होगी। छह भाइयों में मेल रह भी कब तक सकता है? नित्य प्रपंच खड़े होंगे, किसी के सहयोग में न पड़ें तो बात तो सुननी ही पड़ेगी।' फिर अनुरोध के साथ बोला, 'तुम क्यों राज़ी नहीं हो जाते!'

अचल ने उत्तर दिया, 'मेरे पास इससे भी अधिक प्रबल कारण हैं। मिलें तो मेरी ओर से क़तई इनकार कर देना।'

'इससे भी अधिक प्रबल कारण हैं' अचल का वाक्य कान में पड़ते ही सुधाकर को कुन्ती का स्मरण हो आया। वह संगीत की शिक्षा के लिए अचल के पास जाती है। अचल शायद कुन्ती के साथ विवाह करेगा। मनमें एक सिहिर उठी। कुन्ती का सौन्दर्य अधिक आकर्षक है, उसमें उत्तेजना है और प्रेरणा। कितनी शोखी के साथ नृत्य किया था! वह चपलता कुछ अग्रहणीय थी। परन्तु मैं स्त्री की स्वतन्त्रता का अचल की अपेक्षा कम पक्षपाती नहीं हूं। यदि अचल को उस प्रकार की स्वतन्त्रता

सह्य है तो मैं उससे दो क़दम आगे ही रहूंगा। निशा गम्य है, कुन्ती अगम्य है, कुन्ती रहस्यमयी है। निशा की मुस्कान, गोली आंख, सीधी टवन का चित्र, कल्पना बना सकती है और देर तक उस पर ठहर सकती है, परन्तु प्रातःकाल की रश्मियों के साथ सरोवर की खेलती हुई लहरों के समान कुन्ती का मन्द स्मित या मुक्तहास, उन्मीलित या मुकुलित नेत्र, सारे चेहरे पर क्षण के एक खंड में लहराजाने वाली चमक, काली पुतलियों से झर झर जाने वाली चकाचोंध जो सिमट सिमट कर कहीं चली जाती है, निशा में ढूंढ़ने पर भी नहीं मिल पाती। कुन्ती के साथ अचल विवाह करेगा या नहीं, क्या उससे पूछूं? क्यों पूछूं? क्या ग़रज़ पड़ी? मज़ाक़ में ही सही। कदापि नहीं। कुन्ती की कल्पना के साथ मज़ाक़ नहीं किया जा सकता।

'तो वास्तव में विवाह नहीं करोगे?' सुधाकर ने प्रश्न कर ही डाला।

'मैं क्या बच्चों का सा मिस कर रहा हूँ?' अचल ने उत्तर दिया।

सुधाकर कुंठित नहीं हुआ।

उसने दूसरा प्रश्न किया, 'कबतक विवाह नहीं करोगे?'

'कुछ ठीक नहीं', अचल ने पूरे अनिश्चय के साथ कहा, 'कम से कम दो वर्ष तक तो नहीं करूँगा।'

सुधाकर का मन नहीं भरा। वह सवाल करता गया। 'परीक्षा के ख्याल से या और कोई बात है?'

'परीक्षा की बात मुख्य है। दूसरी बात जो परीक्षा के लगभग महत्व-पूर्ण है देश के कार्य की है।'

'अध्ययन ज़ोरों से चल रहा है?'

'काफ़ी परिश्रम कर रहा हूँ। घड़ी पास आरही है। आज की बात-चीत के लिए मुश्किल से थोड़ा सा समय निकाल कर आपाया हूँ।'

जो सवाल ओठों से बाहर नहीं फूट पारहा था वह था: 'कुन्ती का अध्ययन और अध्यापन कैसा चल रहा है?'

अचल जो बात अपने मुँह से नहीं निकालना चाहता था वह थी: 'अपनी परीक्षा के लिए काफ़ी श्रम और समय खर्च करता हूँ, और कुन्ती की परीक्षा या कुन्ती के लिए भी।'

सुधाकर ने कहा, 'मेरा निश्चय तुम जियाराम जी को सुना देना। मैं किसी हालत में भी निशाके साथ विवाह करने के लिए तैयार नहीं हूं।'

अचल हँसते हुये बोला, 'यह खूब रहा! तुम मेरा निश्चय सुनाओगे और मैं तुम्हारा !! मैं आजकल वरकी ढूंढ़ खोज के लिए बिलकुल समय नहीं दे सकता हूं। तुम कुछ समय दे दो तो उन बिचारों को ढाढ़स मिलेगा।'

सुधाकर ने उत्साह के साथ कहा, 'मैं भरसक प्रयत्न करूंगा। परन्तु उनको स्वयं भी तो कुछ अनोय करना चाहिए।'

'वे कर रहे हैं,' अचल ने कहा।

'तुमको कैसे मालूम ?' सुधाकर ने प्रश्न किया।

प्रश्न को तली में प्रेरणा थी, क्या कुन्ती ने बतलाया ? बिलकुल बेतुकी बात। कुन्ती ही ने क्यों बतलाया होगा ? परन्तु उसके मन के किसी कोने में एक चुभन थी।

अचल ने उत्तर दिया, 'जियाराम जी ने बतलाया था। उनके लड़कों ने भी ज़िकर किया था।'

अचल चला गया। सुधाकर अपने काम में लग गया। उस दिन से कुन्ती का स्मरण उसको ज्यादा आने लगा।

[८]

निशा को मालूम था कि उसकी सगाई की चर्चा जियाराम ने कई जगह की है। अचल और सुधाकर से भी कहा है; उसकी कल्पना थी अचल या सुधाकर के साथ भी विवाह का हो जाना संभव है।

अचल को देखती आई थी, सुधाकर को भी। दोनों देशभक्त थे, दोनों काफ़ी पढ़े लिखे, दोनों दरिद्रता के कष्टों से दूर, किसी के रूप में कोई दोष नहीं। अपने मनके कोने कोने को उसने ढूंढा—मानलो मुझको ही चुनाव करना पड़े तो किसको पति बनाऊँ? अचल गहरा है, विद्वान है, संगीत का अच्छा जानकार, गुरू बनाने योग्य। परन्तु पति को गुरू या गुरू को पति! यह तो कुछ भोंडी सी बात है। प्राचीन काल में किसी भी तरह के पति को, लूले लंगड़े, कोढ़ी अपाहिज, किसी भी प्रकार के पति को, श्रद्धा, और पूजा भेंट करने का नियम था। व्यक्ति से कोई प्रयोजन नहीं, पति से प्रयोजन रहता था। किसी भी आकार आकृति को पति बना लिया या बनाना पड़ा कि वह पूजनीय हो गया। परन्तु यह प्राचीन काल नहीं है। तो भी, मन का ही तो खेल है। कल्पना के साथ ज़रा सा खेलने में हानि ही क्या हो सकती है?

वह कल्पना के साथ खेली।

अचल में ठंडक ज़्यादा है, चपलता कम। मानसिक बल है और शारीरिक बल भी है, परन्तु क्या इन दोनों बलों का समन्वय भी है? नहीं है। दिमाग़ अधिक है, शरीर कम है। इसके साथ विवाह हो गया तो घर में बूढ़ी सास के उपदेश और अचल का कोई वादविवाद, यह अधिकतर रहा करेगा। एक दूसरे को अपना गाना सुनायंगे। उस दिन उसने मेरे गाने के सम्बन्ध में कहा था: 'तम्बूरे पर स्वर साधन का अभ्यास करें तो गला बहुत अच्छा हो जायगा,' यानी अभी अच्छा नहीं है। तो मैं सुनाऊंगी क्या? मैं गाऊंगी, वह मसखरी करेगा। और मानलो यदि ऐसा न हुआ तो गाने गाने में ही तो ज़िन्दगी बितानी नहीं है। पर उसने कुन्ती के लिए

भी कुछ ऐसा ही कहा था—ताल में कसर है। नृत्य अच्छा, क्या, बहुत सुन्दर या कुछ ऐसा ही बतलाया था। मुझको तो नाच अच्छा नहीं लगता। और सुधाकर ? सुधाकर चंचल है। शरीर अधिक और दिमाग़—, दिमाग़ भी है, परन्तु शरीर अधिक। घर में अकेली फूफी है, पर भरा भरा हुआ तो है। नौकर चाकर सवारी, किसी बात की कमी नहीं। परन्तु वह विवाह के लिए राज़ी हो और नहो। इसमें परन्तु क्या ? वही पुरुष तो ईश्वर ने अनोखा बनाया नहीं। माता पिता सम्बन्ध जोड़ देते हैं, पति पत्नी में प्रेम हो जाता है और संसार चलता रहता है। उसी समय कुन्ती आ गई।

उसने हँसते हुए पूछा, 'क्या सोच रही हो निशा बैठी बैठी ?'

निशा ने उत्तर दिया, 'यही कि चाहे बैठी चाहे चलती फिरती रहो, संसार तो चलता ही रहता है।' और वह मुस्कराई।

कुन्ती और भी हँसी। बोली, 'ओ हो, दर्शन शास्त्र पर खीझ रही थीं क्या ?'

निशा भी हँसने लगी। उसके मनको लगा इसी प्रकार हँसा करूं और मुक्त रहा करूँ। सोचा, अभ्यास नहीं है; अभ्यास करने से क्या आ न जायगा ? कुन्ती ने जन्मते ही तो हँसना और खुले मन रहना शुरू नहीं कर दिया था। क्यों न आयेगा ?

निशा ने कहा, 'किसी भी शास्त्र पर खीझ नहीं रही थी, एक विषय पर रीझ रही थी। सोच रही थी नाचना सीखूँ।'

'कुछ भी कठिन नहीं है। परिश्रम अवश्य कुछ अधिक चाहता है सो बदले में शरीर को फुर्ती और शक्ति देता है, भूख लगाता है और भोजन पचाता है।'

'चाहती हूँ आरम्भ कर दूँ, परन्तु दूसरे विषयों के लिए समय कम मिल पायेगा।'

उस दिन अचलकुमार ने कहा था, तम्बूरे पर स्वर–साधन करो तो गला अच्छा हो जायगा। इसलिए, इसको यों ही ज्यादा समय देना पड़ रहा है।'

अचलकुमार के नाम से कुन्ती के भीतर कुछ चमकसा गया, पर उसकी कोई छाप चेहरे पर नहीं आई। बोली, 'उन्होंने तुम्हारे गाने को तो अच्छा कहा था। कहते थे राग का रूप सही है। ताल भी ठीक बतलाया था।'

कुन्ती के ताल को उसने ग़लत बतलाया था, यह बात निशा को स्मरण हो आई, परन्तु उसके साथ ही उसके नृत्य की बात भी उभर आई। निशा ने कहा, 'तुम्हारे नृत्य की तो उन्होंने बहुत प्रशंसा की थी!'

यह बात कुन्ती को बहुत अच्छी नहीं लगी। परन्तु वह मुस्कराते हुए बोली, 'यह तो तुम कई बार कह चुकी हो। उन्होंने नृत्य को अच्छा ताल की चर्चा के सम्बन्ध में बतलाया था।'

नृत्य के उस अंग का स्मरण निशा को था ही जिस पर उसको भरपूर वाह वाह और करतल ध्वनि मिली थी।

बोली, 'तुमने उस दिन नाचा भी अच्छा था। सब लोगों को पसन्द आया था।'

सब लोगों में अचल और सुधाकर भी थे। सुधाकर के साथ सगाई की कुछ चर्चा चल रही है यह बात बढ़े हुए रूप में कुन्ती को मालूम थी।

कुन्ती ने सीधे वार की नीति को पसन्द किया। 'तुम असल में शास्त्र वास्त्र की बात नहीं सोच रही थीं, ब्याह के विषय पर जी को खिला रही थीं।'

बात सच थी, परन्तु कुन्ती ने चिढ़ाने और कुछ हँसने हँसाने के लिए ही छेड़ छाड़ की थी।

निशा लाल होगई, और तुरन्त ही ज़रा फक। कुन्ती को कैसे मालूम होगया! मैं चिल्ला चिल्ला कर तो सोच ही नहीं रही थी। परन्तु विवाह

की चर्चा में उसको रुचि थी। वह कुन्ती के मुंह से ही कहलवाना चाहती थी।

बोली, 'तुम मेरे भीतर बैठी थीं न ? पूरा बहीखाता लिख रही थीं। तुम जो कुछ सोचती रहती हो वही तुमने मुझको लगा दिया। क्या सोचा करती हो, बोलो ?'

उत्तर मिला, 'यही कि सुधाकर बाबू के साथ ब्याह होगा। मोटर बैठने को मिलेगी और न जाने क्या, क्या।'

निशा का चेहरा फिर लाल हो गया, परन्तु फक नहीं हुआ।

निशा ने मुस्करा कर कहा, 'जन्म पत्री तुमने मिलाई होगी ?'

कुन्ती ने फबती कसी, 'मन मिल जाने के बाद जन्म पत्री मिलने में कितनी देर लगती है ?'

निशा ने मुंह बिराते हुए कहा, 'पूर्व युग में पहले जन्मपत्री मिलती थी और पीछे मन मिल जाता था। अब भी समाज में अधिकांश जगह यही होता है, और अधिकांश स्त्री पुरुषों में होता रहेगा।'

कुन्ती—'अरे बिलकुल ऋषि की तरह बोल रही हो। होता रहेगा ! हु !! होता कैसे रहेगा ? मन न मिला तो सम्बन्ध-विच्छेद भी तो हो सकेगा।'

निशा—'उस दिन अपने यहां की वादसभा में यही विषय था। स्त्री सम्मेलनों में इसी पर काफ़ी ऊहापोह रहता है। परन्तु मन न मिलने पर सम्बन्ध विच्छेद या डिवोर्स की बात तो कोई नहीं कहता ! रूस तक में नहीं है जहां स्त्री को संसार भर में सब से अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है।'

कुन्ती—'रूस में है। जो कहते हैं कि नहीं है, वे अपने आग्रह या परम्परा की प्रेरणा की अनुकूलता में रूस को देखना और दिखलाना चाहते हैं।'

निशा—'अपने देश में तो होता नहीं। नहीं हो सकेगा।'

कुन्ती—'अपना देश रूढ़ियों का पुजारी है ! पति नपुंसक हो, कोढ़ी हो, यक्ष्मा ग्रस्त हो, तीन बरस तक लगातार पत्नी की खाल उधेड़ता रहा हो, सात बरस तक उसका पता न लगा हो, यानी मरे समान हो गया हो, तब कहीं सम्बन्ध विच्छेद हो सकता है।'

निशा—'ह ! ह !! ह !!! तब भी सहज नहीं है। प्रमाण, अदालत वकील, फ़ीस, और अन्त में हाई कोर्ट ! रूस की निन्दा तो बहुत की जाती है—देशभक्ति का कुछ रिवाज सा है, परन्तु अभी उससे बहुत सीखने को पड़ा है।

कुन्ती—'तुमने वाद सभा में कहा था। मैं बिलकुल सहमत हूँ। केवल एक स्थल पर मतभेद है। सम्बन्ध विच्छेद के लिए मैं एक और उपाय ज्यादा अच्छा समझती हूँ। बिलकुल मौलिक, अत्याचारी पति को पत्नी सवेरे शाम गिन गिन कर इतने जूते लगाए कि वह सम्बन्ध विच्छेद की लिखा पढ़ी करने के लिए हा हा खाता फिरे। कहां का प्रमाण और कहां की हाई कोर्ट।'

निशा—'वादसभा में यही नहीं कह पाया था तुमने। कहतीं तो बड़ा मज़ा रहता।'

कुन्ती—'स्त्री सम्मेलनों में भी नहीं कहा जाता है। परन्तु बात गले तक अनेक स्त्रियों के आ आ जाती है।'

निशा—'यदि जूते का रिवाज़ चल उठे तो अत्याचार करने वाली स्त्रियों को जूतों की ठोकरें देने का क़ानूनी हक़ पुरुष भी चाहेंगे। समान अधिकार तो इसी को कहेंगे।'

कुन्ती—'असल में तुम्हारे भीतर रूढ़ियों की पुचकारी हुई भावनाएं अब भी झांक झांक उठती हैं।'

निशा—'सब रूढ़ियां खराब भी तो नहीं हैं। पर सवाल दूसरा था। सवाल था पति पत्नी का मन न मिलने की परस्थिति में क्या हो। उसमें पीटने पाटने और दृष्ट अत्याचार की कोई भी बात न होते हुए भी वह

है उससे भी अधिक बुरी और विपद् पूर्ण। प्रत्येक क्षण दोनों व्यक्तियों के बीच में गहरी खाई और दोनों जलते हुए नरक में, और, उपाय उपचार कुछ भी नहीं। ऐसी हालत में क्या हो?'

कुन्ती—'तुम्हीं बतलाओ क्या हो। मैं तो समझती हूँ कि जब मनोमालिन्य असह्य हो जाय तब किसी भी सवेरे उठकर एक व्यक्ति दूसरे से कहदे, बस, बहुत हो चुका, आगे हमारा तुम्हारा मार्ग अलग अलग रहेगा।'

निशा—'पुरुष यदि स्त्री से पीछा छुटाना चाहेगा तो बड़ी आसानी रहेगी। खिलाने पिलाने पालन पोषण के बोझ से तुरन्त मुक्त हो जायगा और स्त्री उस सवेरे के बाद ही सड़कों पर मारी मारी फिरने लगेगी। बच्चे हुए तो उनका क्या होगा?'

कुन्ती—'तुम्हें मालूम तो है जो रूस में होता है वही यहां भी हो सकेगा।'

निशा—'परन्तु ऐसी स्त्री के साथ विवाह, पुनर्विवाह, करने के लिए ऐसा कौन पुरुष होगा जो राज़ी हो जायगा?'

कुन्ती—'असल में स्त्री की आर्थिक परतन्त्रता ही तो दम घोंटे डालती है।'

निशा—'इसलिए ऐसी स्त्रियां जो अपने लिए खुद कुछ कर-धर नहीं सकतीं अपने मन का संयम करें और पति के मन से चलें—वही पुरानी बात।'

कुन्ती—'मेरा एक संशोधन है, निशा। जो स्त्रियां अपने खाने पीने और रहने सहने का स्वयं प्रबन्ध कर सकती हों उनको वही करना चाहिए जो मैंने अभी अभी कहा था। उनके लिए सम्बन्ध विच्छेद एक सीधे से निश्चय की बात होनी चाहिए।'

निशा हँस पड़ी। उसको जूते पैज़ार का चित्र पसन्द आया। एक क्षण के लिए उसने कल्पना की: कुन्ती का पति अत्याचार तो नहीं करता,

परन्तु मनमुटाव बहुत रखता है, कुन्ती दिन-रात परेशान रहती है, मानसिक क्लेशों के मारे छीज उठी है, पति के मन में उसकी पीड़ा के प्रति बिलकुल उपेक्षा रहती है और स्वयं कसकर मौज करता है; कुन्ती एक दिन उसको दो जूते रसीद करती है और कहकर चली जाती है--तेरी मेरी पगडंडियां बिलकुल अलग अलग हैं, वह तेरी रही और मैं अपनी पर यह चली। हँसते हुए निशा ने कहा, 'तुम्हारा संशोधन मुझको स्वीकार है। परन्तु कर कभी न सकोगी। बहुत थोड़ी स्त्रियां ही—जो शायद पागल हों—कर सकती हैं। हां ऐसी अवस्था में अलग अलग रहने की तरकीब अच्छी है।'

कुन्ती बोली, 'परन्तु स्त्री अलग रहकर पति को मौजें मारने का अवसर और देगी। पुनर्विवाह तो कर ही न सकेगी।'

निशा ने कहा, 'स्त्री के लिए विवाह ही तो सब कुछ है नहीं।'

कुन्ती ने तड़ाका सा दिया, 'और मुकरे हुए अकेले रहना, आत्म-दमन करते रहना और पति को पश्चात्ताप करने का भी कारण न देना तो कायरता है।'

निशा ने भी न छोड़ा, 'वादसभा के लिए तो ज़रूर कुछ चटपटा मसाला है, परन्तु जीवन और व्योहार के लिए कड़वा मालूम होता है।'

कुन्ती ने ठठोली की, 'तुमने अभी से सोच लिया है कि सुधाकर बाबू के साथ कभी झगड़ा न होगा, इसलिए कठोर परिस्थितियों का सामना ही न करना पड़ेगा।'

निशा गंभीर हो गई। बोली, 'यह क्या कह रही हो बे सिर पैर की बात ?'

कुन्ती बिलकुल नहीं सकपकाई। उसने कहा, 'तुम्हारा मन उनमें रम ही रहा है, ऊपर से भले ही नाक भों चढ़ाओ।'

निशा के भीतर हिंसा जागी।

'तभी तो अचल बाबू को मुस्कानों से सहेजती रहती हो। उस दिन भी कितने नज़दीक से उनके गले में हार डाला था! साड़ी के छोर उनके कुर्ते से लिपट रहे थे और उनके सीने से तुम्हारी छाती भी क़रीब क़रीब टकरा ही गई थी। वैसा हार और किसी के गले में नहीं डाला था।'

कुन्ती क्षुब्ध हो गई। वह उन स्त्री पुरुषों में से थी जो अखीरी मज़ाक, अखीरी चुटकी अपने ही हिस्से में रखना चाहते हैं। इतनी सीधी दिखलाई देने वाली निशा इस तरह की भी बात कह सकती है! कोई यदि सुने तो क्या कहे, और जिसमें अभी उसका विवाह नहीं हुआ था। वाःसभा या आपसी वितण्डावाद में पुस्तकों के वाक्यों का प्रयोग और बात है और जीवन में उनको व्यवहारिक रूप देना बिलकुल दूसरी बात। लोकमत का देवता या दानव अपना वज्र हाथ में लिए आकर खड़ा हो गया।

कुन्ती ने क्षोभ को पचा जाने का प्रयास किया। ज़रा बैठे गले से उसने कहा, 'यह क्या वाहियात बात कह रही हो निशा तुम?'

इसके बाद ही तुरन्त उसके हठ ने स्वतन्त्रता की वृत्ति को प्रेरित और सिद्धान्त के दृष्टिकोण को सचेत किया।

'और मान लो ऐसा हुआ भी हो तो कौनसी प्रलय हो गई? मैंने तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है वह कोरी हँसी या गप नहीं है। चाचा जी ने सुधाकर बाबू से बात चीत की है। सम्बन्ध के स्थिर होने में कोई बड़ी बाधा नज़र नहीं आ रही है।'

निशा तुरन्त ढल गई। कुन्ती का कंधा पकड़ कर बोली, 'कुन्ती बहिन माफ़ करना, मैं बहुत अशिष्टता बर्त गई। मौका मिलने पर मैं भी न चूकूं। मेरे भी हृदय है, परन्तु साहस की कमी के कारण मैं कुछ भी मनमाना नहीं कर सकती हूं। थोदी सी रह जाती हूं। जिस ओर देखना चाहती हूं उस ओर आंख नहीं जाती। जिसको छूना चाहती हूं उसी से दूर हट जाती हूं। मुक्त होने का अपने में कोई लक्षण नहीं देख पाती हूँ।'

कुन्ती को अवगत हुआ उसकी स्वतन्त्र वृत्ति और निर्भय वाणी की विजय हुई। उसने ठंडे पड़ कर कहा, 'असल में सेक्स, काम सम्बन्ध, का विषय हमारे समाज में ऐसे नीचे स्तर पर पड़ गया है कि ज़रा सी भी आज़ादी का बर्ताव करो तो भ्रष्टता का आरोप होने लगता है। देखो न सेक्स प्रसङ्गों के लिए हिन्दी में 'यौन' शब्द का प्रयोग किया जा रहा है। मुझको तो उसकी कल्पना मात्र से लज्जा आती है।'

निशा और भी शिथिल होकर बोली, 'वास्तव में मेरे उखड़ पड़ने का कारण तुम्हारी वह बात नहीं है। जहां तक मुझको मालूम है इस सम्बन्ध के लिए अभी तक कोई आधार नहीं है।'

'कोई आधार निकल आवे तो?'

'तो मैं कुएं में कूद कर थोड़े ही मर जाऊंगी। मैं गाऊंगी और तुम भी गाओगी।'

'अवश्य'

'और यदि अचल बाबू के साथ तुम्हारे ब्याहे जाने की सम्भावना हो तो?'

'तो मैं भी फांसी लगा कर नहीं लटकूंगी। परन्तु इसकी कोई संभावना नहीं है। मैंने अचल बाबू का निश्चय सुन रक्खा है। वे बहुत दिनों ब्याह नहीं करेंगे।'

इसके कुछ समय बाद जियाराम को सूचना मिल गई कि अचल और सुधाकर में से कोई भी निशा के साथ विवाह नहीं करेगा।

जियाराम को क्रोध आ गया। उसने अपने मन में कहा, 'इतना घमंड है सुधाकर को! अपने को क्या समझने लगा है?'

जियाराम ने क्रोध को समाधान देने का प्रयत्न किया, 'अचल से मुझको कोई शिकायत नहीं है। वह शुरू से ही कह रहा है कि मैं कई बरस तक विवाह नहीं करूंगा। परन्तु इस सुधाकर को तो देखो, ब्याह करने को तो फिरता ही होगा, पर चाहता होगा कि साथ में दान दक्षिणा

हूँ ! यह है इसका देश-प्रेम और सुधारवाद ! हरगिज़ नहीं !! मैं इसके साथ सगाई करना भी कब चाहता था ?'

निशा को मालूम हो गया ।

अकेले में एक आह खींचकर रह गई । और कर भी क्या सकती थी ? उसने सोचा, 'मुझमें ऐसी कौन सी कमी है ?'

[९]

पञ्चम और गिरधारी ने सात आठ आदमियों का अपना एक समूह बना लिया, जिसको थोबन माते और उसका दल 'गिरोह' कहने लगा। उन लोगों के पास दो टोपीदार बन्दूकें, कुछ तलवारें, छुरियाँ और गड़ासिए हो गए। थोबन ने पुलिस को खबर दी। पुलिस ने खानातलाशी ली, पर सिवाय कुछ साप्ताहिक पत्रों के पञ्चम के घर में कुछ नहीं निकला। औरों के यहां कोई काग़ज़ पत्र नहीं मिले। पुलिस पत्रों को लेकर चली गई। उनमें था भी क्या ? पञ्चम ने हथियार घरों में नहीं रक्खे थे। उसने आपस में कहा, 'पुलिस ने हम लोगों को क्या इतना मूर्ख समझ रक्खा है ? मौक़ा आने पर थुबना को देखा जायगा।'

पञ्चम साप्ताहिक पत्रों की चुनी हुई खबरें और राजनैतिक सम्मतियां सुनाया करता था। उसके समूह में विशेषकर, और, गांव में साधारणतया राजनैतिक सुरसुरी गरमी पर आने लगी। थोबन का दल छोटा पड़ने लगा, क्यों कि वह पुलिस का दल समझा जाने लगा था। तो भी, थोबन के प्रभाव में, जो भय के आधार पर स्थिर था, कमी नहीं हुई।

पञ्चम को अपने नेतृत्व में विश्वास था, परन्तु राजनैतिक ज्ञान में पूरी आस्था नहीं थी। वह चाहता था कि अचल सरीखे लोगों के सम्पर्क में बना रहे। शहर का बार बार जाना अच्छा लगता था, अपने को शहरियों से कुछ उँचे स्तर पर पाने लगा था, क्यों कि उनके महीन, चमकदार और उजले कपड़ों से उसको घृणा थी, परन्तु लगातार शहर जाते रहने में घर के काम का हर्ज होता था और अचल तथा सुधाकर के यहाँ बहुधा भोजन करने की सुगम व्यवस्था प्राप्य होने पर भी कुछ अपना भी खर्च होता था। सुधाकर उसके गाँव में जाने का अवकाश नहीं पाता था। उसको इसी में सन्तोष था कि क्रान्तिकारियों के संसर्ग में हूँ। पञ्चम ने अचल को अपने गाँव में कभी कभी आने के लिए राज़ी कर लिया ! छुट्टियों में, राजनैतिक काम के साथ साथ, मन बहलाव भी हो सकता था।

परन्तु वह गाँव में रातभर कभी नहीं ठहरता था। साइकिल से सवेरे पहुँचकर उसने पञ्चम और गिरधारी से अकेले में बातचीत की।

'आज मीटिंग करके जाइए न,' पञ्चम ने प्रस्ताव किया।

अचल ने अस्वीकार किया, 'आज मीटिंग के लिए समय नहीं है। कुछ बातचीत करके लौट जाऊँगा।'

'बहिन कुन्ती जी अच्छी तरह हैं न ? अब तो उनके पढ़ने की तैयारी बहुत होगई होगी ?'

अचल को बहुत अखरा। परन्तु उसने क्षोभ को प्रकट नहीं होने दिया। कहा, 'अच्छी तरह हैं। खूब पढ़ रही हैं। मैं तुमसे यह पूछने आया हूं कि कितने हथियार इकट्ठे कर लिए हैं ?'

पञ्चम ने खुब बढ़ाकर कहा, 'ढेरों बन्दूकें हैं, तलवारें, गड़ासिए वग़ैरह। स्वराज्य के लिए बहुत सामान इकट्ठा कर लिया है। इशारा पाते ही बस।'

'इशारा मिलने पर पहला काम क्या करोगे ?'

'पहला काम थोबन और थाना। इसके बाद जो कुछ और बतलाया जायगा वह।'

पञ्चम और उसके साथियों को ब्रिटिश साम्राज्य के दो बड़े प्रतीक थोबन और थाना ही दिखलाई पड़ते थे।

अचल ने कहा, 'थोबन तो अपने ही गांव का आदमी है।'

पञ्चम भर भराकर बोला, 'अपने गांव में सांप बिच्छू इत्यादि भी तो रहते हैं। थोबन ज़िमीदार है, पुलिस का पिट्ठू, हम लोगों के लिए पागल कुत्ता। इसी तरह के लोग तो अंग्रेज़ों का पाया अपने देश में जमाए हुए हैं, इनके खतम होते ही साम्राज्य खतम।'

अचल को पञ्चम की बात पर विश्वास नहीं हुआ—इस तरह की बात पर विश्वास हुआ ही न था, परन्तु वह इस तरह के लोगों को पसन्द करता था। पुरुषार्थ की बात कहते हैं, निरे गोबर-गणेश नहीं हैं, यदि कभी

कोई गोरा इनकी बेइज़्ज़ती करना चाहेगा तो ये उसके दांत तोड़कर रख देंगे। देश को इस प्रकार के लोगों की भी तो ज़रूरत है। उसके अन्तर्मन को एक बात इससे भी बढ़कर अच्छी लग रही थी, इस प्रकार के पुरुष, सिपाही, मेरे सम्पर्क में,—मेरे अधिकार में भी, शायद,—हैं।

सुधाकर को उस सम्पर्क पर—या उस धारणा पर कि मैं बन्दूक़ तलवार वालों के सम्पर्क में हूँ—सन्तोष था, अचल उतने सन्तोष पर ही अपने को सीमित नहीं कर सकता था। उसको उन लोगों पर कुछ अधिकार, उनका कुछ सञ्चालन भी चाहिए था। परन्तु इस भावना की उसने एक हद बांध रक्खी थी—उनपर उतना ही नियन्त्रण जितने से उसके अध्ययन में बाधा न पड़े और पकड़-धकड़ न हो।

अचल ने कहा, 'ब्रिटिश साम्राज्य या किसी भी अत्याचार के खतम करने का एक मात्र उपाय सत्याग्रह ही है।'

गिरधारी बोला, 'हम लोग जेल जाने से नहीं डरते, परन्तु थुबना और पुलिस षड्यन्त्र रचकर हम लोगों को जेल भेज दें, हम लोग कुछ भी काम न कर सकें और हमारा समाज ही टूट जाय, यह नहीं सहा जा सकता। और, गान्धी बाबा न मालूम सत्याग्रह कब शुरू करेंगे। हमारे साथी तो काम करने के लिए बेतरह कुलबुला रहे हैं।'

पञ्चम ने जेब दी, 'दो एक पर हाथ साफ़ किए कि सौ पचास अरदब में आगए।'

अचल की आंखों के सामने एक चित्र आया—यदि प्रत्येक गांव में ऐसे और इतने ही, निर्भीक लोग पैदा हो जायं तो कितनी बड़ी संख्या में सिपाही न हो जायंगे। कौन उनका मुक़ाबिला कर सकेगा? परन्तु उनका नायक और नियन्त्रक भी तो कोई होना चाहिए। यहां के लिए मैं हो सकता हूँ, और हूँ भी। इसी प्रकार प्रत्येक गांव के लिए लोग मिल जायंगे।

अचल ने कहा, 'देखता हूँ तुम लोग तो राजनीति में बहुत कुशल हो गए हो—'

पञ्चम ने हर्षमग्न होकर टोका, 'अरे साहब, पत्र पर पत्र पढ़ते हैं हम लोग, प्रताप, सैनिक, अर्जुन—

अचल ने हँसकर उसको बन्द कर दिया, 'सूचीपत्र देने की ज़रूरत नहीं है। पढ़ते जाओ, परन्तु पत्रों को सही तरीक़े पर पढ़ो। बतलाऊँगा कैसे पढ़ना चाहिए। पत्र ग़लतियां भी कर जाते हैं। लिखी हुई सभी बातें सही नहीं होतीं। सत्याग्रह के खिलाफ़ ज़रा भी किसी लेख में कोई बू बास पाओ तो उसको ग्रहण मत करो, सोचो और सोच विचार कर काम करो। हृदय में सत्याग्रह के सिद्धान्त को गांठ बांधकर रक्खो, भले ही फिर हाथ में हथियार लो या कुछ लो।'

पञ्चम ने सन्देह प्रकट करते हुए कहा, 'बाबूजी, किसी से तो हमने यह सुना है कि हृदय में हथियार रक्खो और हाथ में सत्याग्रह!'

अचल हँस पड़ा।

'ओहो! बिलकुल साहित्यिक! किसने कहा बतलाओ, मुझको बतलाओ।'

पञ्चम ने सोचा मैंने क्यों कहा कि किसी और से सुना है? अपना ही बनाकर क्यों न कह दिया? परन्तु छोड़े हुए तीर को लौटा लाने की गुन्जाइश न थी। वह प्रसन्न था : क्या बात कही!

'याद नहीं अचल बाबू। बहुत सी बातें सुना और पढ़ा करता हूँ। इधर-उधर के झंझट बहुत लगे रहते हैं इसलिए अधिक याद नहीं रहा, नहीं तो—नहीं तो, आप सुनते सुनते थक जायें। और कुछ अपनी उपज की भी सुनाऊँ तो आप दंग रह जायें।'

अचल ने उन दोनों को सावधान किया, 'देखो, हथियार इकट्ठे भले ही करलो, परन्तु उनको चला मत बैठना। अभी उनका समय नहीं आया है।'

'कभी तो आवेगा', पञ्चम ने सोचा।

बोला, 'सो तो हम लोग बहुत सावधान रहते हैं। पुलिस ने खानातलाशी में एक बाल भी नहीं पाया। कुछ पत्र उठा ले गई, पर उनमें था ही क्या?'

गिरधारी कुछ कहने के लिए उतावला हो रहा था। 'बाबू जी, मैंने भी कुछ अखबार की बातें याद की हैं—'

पञ्चम ने टोक दिया, 'ठहर भी। हम लोग बाबू जी की बातें सुनने को यहां आए हैं, अखबारों में पढ़ी हुई बातें सुनाने के लिए नहीं। वे बहुत अखबार पढ़ते रहते हैं।'

गिरधारी रह गया।

अचल ने कहा, 'पहली बात तो यह है कि तुम अपना संगठन पक्का करो और संयम के साथ रहो—'

पञ्चम चट-पट बोला, 'सो बाबू जी हमारी गिनती बढ़ती चली जा रही है और हम लोग मरने मारने को हमेशा कमर कसे रहते हैं।'

अचल सोचने लगा संगठन के भाव को इन लोगों के दिमाग़ में कैसे बिठलाऊँ?

'मेम्बरों की भर्ती बढ़ाओ। राष्ट्रीय-गीत गाओ। एक मन होकर रहो। पर सेवा करो। दूसरों के ऊपर कोई कष्ट आवे तो उसको दूर करने में लग जाओ। अत्याचार के सामने सिर मत झुकाओ। निडर बनो। स्त्रियों को—'

पञ्चम टोक कर बोला, 'सो बाबू जी, थुबना या पुलिस से हम लोग बिलकुल भय नहीं खाते। तै है कि अब की बार थुबना के ढोर हमारे किसी समाज वाले के खेत में गए तो थुबना का सिर खोल दिया। और भी कुछ करके रहेंगे। बाबू जी, माफ़ करना मैंने आपकी बात काट दी।' फिर अपने प्रायश्चित्त में उसने गिरधारी को भी शामिल किया, 'गिरधारी, बीच में टोकाटोकी मत करना, भला।' अचल से कहा, 'बाबू जी, आप स्त्रियों के बारे में कुछ कह रहे थे।'

'हां मैं दूसरी बात जो कह रहा था वह स्त्रियों के सम्बन्ध की है। स्त्रियों को आज़ादी की सांस लेने दो। उनका तो समाज ने कचूमर सा ही निकाल दिया है। अपने आन्दोलन में उनको भी शरीक करो। कुमारी कुन्ती तुम्हारे गांव में आकर स्त्रियों का संगठन कर सकती हैं। मैं उनसे कहूँगा।'

पञ्चम और गिरधारी की आंखों के सामने अचल की बैठक की घुंघरू, तबले, तबले बजाने वाली कुन्ती और साथ में गाने वाले अचल की तस्वीर फिर गई। और उसके साथ अपने गांव की कुछ स्त्रियां भी।

गिरधारी ने कहा, 'हमारे गांव में स्त्रियां पढ़ी लिखी नहीं हैं जो कुछ हैं भी वे थांबन के गिरोह वालों की हैं।'

'अरे तो क्या हुआ', पञ्चम बोलाः 'कुन्तीबाई उनको पढ़ा भी दिया करेंगी।'

अचल ने कहा, 'भाई वे यहां आन्दोलन का सङ्गठन करने के लिए ही आ सकती हैं। पढ़ाने के लिए यहां नहीं रह सकती हैं।'

'आयंगी किस सवारी से ! हम लोग बैलगाड़ी भेज सकते हैं !' गिरधारी ने पूछा।

अचल ने उत्तर दिया, 'बैलगाड़ी पर वे नहीं बैठेंगी। पेट की आंतें गले को आजावेंगी। वे अपनी साइकिल से आजायंगी, या तांगे का प्रबन्ध कर लिया जायगा।'

बैलगाड़ी पर बैठने से शहर वालों की आंतें गले में जा अटकती हैं! साइकिल पर बैठकर आवेंगी !! यहां क्या तबला भी साथ आवेगा ? गिरधारी दबी हुई हँसी से हिलुड़ गया। उसने अपना ओठ काटा। हँसी को रोक लिया।

पञ्चम ने प्रश्न किया, 'मान लीजिए हम लोगों ने कुछ स्त्रियों और बच्चों को इकट्ठा कर लिया तो कोई जलूस निकालना पड़ेगा।

अन्तर्मन के किसी पिशाच ने चुपके से गिरधारी के कान में कहा, 'जलूस क्या निकालते हो अचल बाबू का नाच करवाओ; एक गांव क्या दस गांव की स्त्रियां इकट्ठी हो जायंगी ।'

फिर हँसी ने हिलोड़ मारी । गिरधारी ने फिर दमन कर लिया ।

अचल ने सलाह दी, 'हां, हां जलूस तो निकालना ही चाहिए । स्त्रियों से आज़ादी के नारे लगवाने चाहिए ।'

पञ्चम ने कहा, 'हमारे यहां बैंड वैंड तो नहीं है । हमारा तिजुआ और उसका हारमोनिया है । एक आदमी ढोलकी लेलेगा । सब ठीक हो जायगा ।'

तिजुआ के नाम पर अचल हँस पड़ा और गिरधारी की हँसी का तो बाँध ही टूट गया । बेतहाशा हँसा । हँसते हँसते लोटपोट हो गया । पेट में बल पड़ गए । पञ्चम भी ज़बरदस्ती साथ देने के लिए हँसा ।

सबसे पहले अचल ने अपने को संभाला । उसको गंभीरता का अभ्यास था ।

'अरे ! अरे !! क्या हो गया है तुमको ?' पञ्चम ने कहा ।

'अरे रे, मर गया ! अरे रे मर गया !! पेट दर्द करने लगा है' हँसी के रोकने की फू फू करते हुए गिरधारी बोला ।

अचल गंभीर हो ही चुका था । क्षोभ के मारे पञ्चम सिकुड़ गया ।

'ऐसी क्या बात हुई जो इतने बेहूदे हो रहे हो ?' पञ्चम ने क्षोभ प्रकट किया ।

गिरधारी एकदम चुप हो गया । शून्य वातावरण में एक झेंप सी समा गई । अचल ने विषय के गौरव को स्थापित करने का प्रयत्न किया ।

'तिजुआ क्या नाचेगा भी ?' अचल ने मुस्कराते हुए प्रश्न किया ।

गिरधारी ने मुँह फेर कर हाथ से अपने ओठ पकड़ लिए एक पैर से दूसरे पैर को दबाते हुए कुचला । पञ्चम ने सोचा अचल सीधी बात कह रहा है, व्यङ्ग नहीं कर रहा है ।

पञ्चम ने उत्तर दिया, 'हां बाबू जी, नाच भी सकता है। नाचता हुआ जलूस के आगे आगे चला चलेगा। हारमोनिया दूसरा आदमी बजाता जायगा। आप भी तो आयंगे न उस दिन? आप देखिएगा तिजुआ कितना अच्छा नाचता है। आपसे उस दिन मैंने उसके गाने नाचने का ज़िकर किया था न?'

और यह भी कहा था कि नाचने में आपसे फिरकियां भी अच्छी लेता है, गिरधारी ने सोचा। उसको हँसी की टुसकियां आनी शुरू हुईं। चेहरा लाल हो गया। गले की नसें फूल गईं। पैर को कुचलते कुचलते थकने लगा। अचल को फिर हँसी आगई और ज़रा ज़ोर के साथ। अचल के नाचने का ध्यान आते ही गिरधारी फूट पड़ा। पंचम झेंप गया।

बोला, 'इस नालायक के मारे मैं हैरान हूँ। अबे, तिजुआ नहीं नाचेगा तो क्या घर की बहू बेटियां नाचेंगी पुरुषों के सामने?'

अचल को जैसे किसी ने काट खाया हो। गिरधारी की हँसी रुक गई। वह गंभीर हो गया।

पञ्चम ने कहा, 'ऐसे ही लोगों के हँसी मज़ाक के कारण कोई काम नहीं हो पाता है। जब देखो तब ठिल ठिल, ठिल ठिल।'

अचल बोला, 'नहीं, गिरधारी का कोई दोष नहीं। तुम्हीं सोचो तुमने भी क्या अजीब बात कही! जलूस में नाच, ढोलकी बोलकी नहीं होती है।'

पञ्चम ने अपने विवेक का हठ किया, 'और बैंड वैंड अचलबाबू? वह विलायती होने के कारण ठीक है क्या? जलूस फिर भी जलूस ही रहेगा चाहे उसमें अंग्रेज़ी बैंड हो चाहे तिजुआ का नाच और ढोलकी हो।'

अचल मन में शरमाया। परन्तु दृढ़ता के साथ बोला, 'वह जो कुछ भी हो, जलूस में नाच वाच कुछ नहीं होना चाहिए। मैं सोचता हूँ पहले कुमारी कुन्ती से पूछ तो लूं वे आयंगी—यानी आ भी सकेंगी या नहीं।'

पञ्चम ने कहा, 'तो आपका सन्देशा आने पर फिर जलूस की बात तै करेंगे। तब तक मेम्बरों की बढ़ोत्तरी का काम करते रहेंगे?'

अचल सन्तोष के साथ बोला, 'ठीक है। उस बात को ज़रूर याद रखना।'

पञ्चम ने तुरन्त कहा, 'जी हां, हृदय में हथियार और हाथ में सत्याग्रह।'

अचल मुस्कराया।

'यही सही। कहीं तो रक्खो सत्याग्रह को। और तिजुआ का नाच भी देखते रहो। भगवान ने दुखी या उदास रहने के लिए नहीं बनाया है।'

पञ्चम ने समझा यह है कोई मज़ाक और वह हँस पड़ा। गिरधारी नहीं हँसा।

अपने को बड़प्पन देने के लिए पञ्चम ने गिरधारी से कहा, 'जहां हँसना चाहिए वहां तो चुप रहता है और जहां चुप रहना चाहिए वहां हँस पड़ता है, है न भोंदू!'

गिरधारी ज़रा सा मुस्कराया।

अचल ने शहर जाने की इच्छा प्रकट की। उन दोनों ने भोजन या जलपान करने का हठ किया। अचल को जलपान स्वीकार करना पड़ा। वह पञ्चम के घर गया।

शहर वालों की कला प्रियता के लिए पञ्चम और गिरधारी तिजुआ को अपने गांव का सब से बड़ा तुहफ़ा समझते थे। उसको उन्होंने, केवल मुलाक़ात के लिए, बुला लिया।

तिजुआ एक मुछाड़िया, छरेरा जवान था। बहुत लजाता सिकुड़ता हुआ अचल के सामने आया और एक कोने में बैठ गया।

पञ्चम ने कहा, 'जब यह घूंघट डालकर नाचता है, तब ग़ज़ब हो जाता है।'

अचल साइकिल लेकर हँसता हुआ चला गया। रास्ते में वह सोचता जा रहा था—

'कुन्ती के सामने यदि इस मुच्छाड़िए का नाच हो ? घूंघट डालकर ! कुन्ती घूंघट नहीं डालती और न डालेगी। ऐसे नाच को देखकर क्या कहेगी ? शायद सोचेगी मैंने उसकी कला का मज़ाक उड़ाने के लिए यह बीभत्स खड़ा किया है ! शायद न भी सोचे। कला का यह भी तो एक नमूना है। और वह यह जानती है कि मैं उसके नृत्य को काफ़ी ऊँचे दर्जे का समझता हूं, यद्यपि अभी उसमें उन्नति के लिए बहुत जगह है। मैं उसकी नृत्य कला को बहुत आगे बढ़ा सकता हूँ। सिखलाऊंगा। परन्तु अपने घर पर कैसे ? वह मुझसे नृत्य सीखने में संकोच करेगी। लेकिन जिसने इतना सिखलाया वह तो कत्थक था, एक पुरुष ही। मुझसे संकोच नहीं करना चाहिए। संकोच करने के समय उसका सौन्दर्य कुछ दब सा जाता है ! किसी दिन नृत्य के और प्रकार सीखने के लिए कहूँगा हालांकि यह विषय उसकी परीक्षा से सम्बन्ध नहीं रखता है। परन्तु ताल से तो रखता है। तो उसको तिजुआ के गांव में आना चाहिए या नहीं ? आना चाहिए। यहां के फूहड़पन में आकर वह क्या करेगी ? वह यदि आई तो ग्लानि से भरकर लौटेगी ! मैं भी कुछ व्यर्थ ही आया। क्या मालूम था तिजुआ वास्तव में क्या चीज़ है।

[१०]

अचलकुमार ने गाना आरम्भ किया और कुन्ती ने तबला। अचल अपने गाने में मुग्ध हो गया और कुन्ती ताल भूल गई। कान अचल के गायन पर चले गए और हाथ तबले पर चूक पर चूक करने लगा।

अचल ने झल्लाकर कहा, 'क्या करती हो?' झल्लाहट का स्वर प्रखर था और वह कुन्ती के मन में ज़रा गहरा गड़ गया।

वह बोली, 'गाए जाइए। अब ठीक बजाऊँगी।'

उसी झल्लाहट में अचल ने कहा, 'क्या ठीक बजाओगी। गाने पर ध्यान मत दो।'

'गाने पर ध्यान न दूं तो ताल कैसे ठीक लगेगा?'

'ताल की गिनती का ख्याल रक्खो तो ऐसी भद्दी भूल नहीं होगी।'

थोड़ी देर बजाकर कुन्ती ने कहा, 'आप बजाइए, मैं गाऊँगी।'

अचल बोला, 'यही तो बुरा है। जब तक धैर्य के साथ अभ्यास न करोगी कच्चाहट कभी दूर न होगी।'

'मुझको भी ऐसा ही विश्वास है। कच्चाहट शायद बनी ही रहेगी! परीक्षा पास करने के लिए इतना ही काफ़ी है।'

'गाना अभी तक ताल में ठीक ठीक नहीं बैठा है। तानें लेते ही बेताली हो जाती हो। पास करने के लिए काफ़ी नहीं है।'

'तो फ़ेल ही न हो जाऊंगी, और क्या होगा?'

'फिर यह सब इतना परिश्रम करने की क्या ज़रूरत है?'

'मैं भी ऐसा ही सोचती हूं।'

'कैसा?'

'यों ही।'

अचल का मन थोड़ा सा खिन्न हुआ। होम करते हाथ जलेगा क्या? फिर उसने अपने को मृदुल बनाया।

बोला, 'अच्छा तुम गाओ, मैं बजाता हूं।' मुस्कराकर कहा, 'यदि बेताली हुई तो खिसिया पड़ूंगा।' अचल हँसा। कुन्ती का रोप समाप्त हो गया।

बोली, 'अच्छा लाइए। जिस तरह आप कहते हैं वैसे ही बजाऊंगी। आपके गाने की ओर ध्यान को न जाने दूँगी।'

उसी मृदुलता के साथ अचल ने हठ किया, 'नहीं। तुमको गाना ही पड़ेगा। ताल की आवश्यकता और शिक्षा, गायन ही के लिए तो है। आरम्भ करो।'

अचल बजाने लगा, कुन्ती गाने लगी। अचल का ध्यान कुन्ती के गले की मधुरता में इतना अधिक घुल गया कि उसको यह न मालूम हो सका कि कुन्ती ताल में गा रही है या ताल के बाहर। गीत के समाप्त होने पर अचल ने कहा,

'आज अच्छा गाया, ठीक गाया।'

कुन्ती बोली, 'आप कभी इतने कंजूस और कभी इतने फ़ज़ूल-खर्च क्यों हो जाते हैं?'

'कैसे?'

'जैसे अभी अभी। इसी गीत को मैंने कई बार इसी तरह से गाया है, परन्तु आप उसमें सदा ताल की कुछ न कुछ कसर बतलाते रहे। आज आप कहते हैं कि ठीक हुआ!'

अचल ने अपने मन को टटोला। कुन्ती का गला अवश्य बहुत मीठा लगा। उसके मिठास में ध्यान सन गया और वह उसे ठीक तालीम नहीं देसका। कुन्ती ने क्या अनुमान लगाया होगा?

'अच्छा फिर से गाओ', अचल ने ज़रा गंभीरता के साथ अनुरोध किया।

'अब नहीं गाऊँगी', कुन्ती ने मुस्कराते हुए हठ पूर्वक कहा, 'आप गाइए मैं बजाऊँगी। शायद ग़लती न होगी।'

'अब गाने को जी नहीं चाह रहा है। सुनना चाहता हूँ।'

'मैं भी सुनना ही चाहती हूँ।'

'तो फिर कुछ बात करें।'

'करिए। किस विषय पर?'

उसके प्रस्ताव पर कुन्ती ने जो बेधड़क प्रश्न किया उस पर अचल कुछ सहमा। परन्तु वह शिक्षक था और कुन्ती विद्यार्थी। वह जेल का गौरव पा चुका था और कुन्ती की तो अभी शिक्षा तक अधूरी थी। कुन्ती चपल थी, वह शान्त और प्रबल। और, कुन्ती को वह मुफ्त में शिक्षा देता था। कुन्ती किसी कृतज्ञता के फेर में न थी। अचल का विश्वास या भ्रम था कि जो कोई मिले गुण और महत्व के कारण उसको मेरे सामने झुक जाना चाहिए।

अचल ने कहा, 'हम लोगों को सबसे अधिक रोचक राजनैतिक विषय लगता है।'

'करिए आरम्भ', कुन्ती ने तड़ाक से कहा। कुन्ती को अचल के पास आते जाते इतने दिन हो गए थे कि वह बात चीत में सहमती शरमाती न थी।

अचल ने मुस्करा कर कहा, 'जब मैं बरेली जेल में था···।'

कुन्ती ने हँसते हुए टोका, 'आप लोग जब कभी किसी भी राजनैतिक प्रसंग को छेड़ते हैं, तो उसकी भूमिका अनिवार्य रूप से यही होती है: 'जब मैं जेल में था···।'

अचल हँसते हुए बोला, 'जब जेल का हाल सुनाऊँगा तब कहना ही पड़ेगा, जब मैं जेल में था—'

कुन्ती ने हँसते हुए ही टोका, 'जेल में जाना वर्तमान राजनीति का एक क़दम भर है, पर आप लोगों ने तो उसमें सम्पूर्ण राजनीति ही को सँजो दिया है।'

'अच्छा अबकी बार जेल जाऊँ और लौटकर आऊँ तो हार-बार मत डालना मेरे गले में।'

'वाह! वह तो हम लोगों की राजनीति का अंग है। आपको उससे क्या प्रयोजन?'

'तभी तो राजनैतिक चर्चा शुरू करने से पहले सदा कहना पड़ेगा, जब मैं जेल में था। जैसे गांव में कहानी कहने वाले हमेशा कहानी को शुरू करते हैं—एक राजा थे।'

कुन्ती का ध्यान उचट गया। पूछने लगी, 'उस गांव में कार्य का आरम्भ करने के लिए कोई योजना बनाई आपने? आप कहते थे स्त्रियों में भी कुछ काम करना है। छुट्टियों में, मैं भी वहां जाकर कुछ करना चाहती हूं। आप से कहा भी था। उसी दिन कहा था न, जब आप लौट कर आए? आपने कहा कुछ निश्चय नहीं किया है, बतलाऊँगा। फिर एक दिन बोले सोच रहा हूं। सोच चुके हों तो बतलाइए ना, यही तो असली राजनैतिक काम है। और उसका आरम्भ भी उन शब्दों से नहीं करना पड़ेगा: जब मैं जेल में था। बतलाइए, क्या है वह योजना? सोच लिया न आपने?'

'उस गांव में तुम्हारा जाना ठीक नहीं है कुन्ती। काफ़ी फूहड़ गांव है। आपस में लड़ते झगड़ते ही गांव वालों का समय और रुपया जाता है।'

'ऐसे ही गांव में तो काम करना चाहिए। मैं तो सुनती हूँ कि सब गांव एक से ही सीधे या टेढ़े हैं। वे दोनों, गिरधारी और पञ्चम कुछ बुरे तो नहीं हैं।'

अचल को हँसी आगई। कुन्ती को कुछ अचरज हुआ।

अचल ने कहा, 'मैंने तुमको बतलाया नहीं कुन्ती, वे लोग बिचारे सिधाई के कारण कितने फूहड़ हैं। उनके यहां एक नाचने वाला है। तिजुआ उसका नाम है। एक भोंडी सी शकल का मुछाड़िया। घूंघट

डालकर नाचता है। वे लोग सलाह कर रहे थे कि तुम गांव में कार्य के लिए जाओ तो एक जलूस निकाला जाय। आगे आगे तिजुआ नाचे, एक आदमी हारमोनियम बजावे, जिसको वे हारमोनिया कहते हैं, और दूसरा ढोलकी। यह होता उन लोगों का अपने बैंड का स्थानापन्न। इस सुझाव के सुनते ही मैं फ़िकर में पड़ा—यदि ऐसा हो तो तुमको कितना अजीब न लगेगा।'

कुन्ती ठहाका मार कर हँस पड़ी।

अचल हँसते हुए बोला, 'मुझको भी बहुत हँसी आई थी।'

कुन्ती ने कहा, 'आप भी तो होते वहां उस जलूस में। मुझ ही को अकेले क्यों अजीब लगता?' फिर हँसकर बोली, 'यह वही तिजुआ है जिसकी प्रशंसा करते करते उस दिन वे लोग अघा नहीं रहे थे, और कह रहे थे, हमारा तिजुआ आपसे कहीं अच्छा नाचता है? ह! ह! ह! और ऐसी—क्या नहीं ले सकते?—हां, फिरकियाँ वैसी फिरकियाँ नहीं ले सकते। ह! ह! ह! ह! आप जेल में नाचते भी थे!! मैंने कई बार सोचा, मन में एक गुद-गुदी सी उठी।'

'आगे जब भी कोई राजनैतिक चर्चा शुरू किया करूँगा तो यह भूमिका हुआ करेगी: जब मैं जेल में नाचता था।'

अचल को हँसी आगई और कुन्ती तो हँस ही रही थी।

'ज्यादा सही होगा जब मैं जेल में नाचा करता था। थोड़ी देर के लिए इस कमरे को ही जेल समझ लीजिए।'

अचल की हँसी खतम होने को हुई। उसका ध्यान एक क्षण के लिए कुन्ती के उस दिन के नृत्य पर जा गया जिसका एक अंग उसको बहुत विनोदपूर्ण लगा था।

कुन्ती ने हँसी को समेटते हुए सरलता के साथ कहा, जिसमें काफ़ी अनुरोध निहित था, 'हम लोगों ने आपका नृत्य नहीं देखा है। क्या गायन के समान ही विलक्षण है?'

अचल के रोंगटे खड़े हो गए। झेंप को दबाकर बोला, कोट पैंट पहिन कर नाचूँ या कैसे ?'

भीतर किसी ने कुन्ती से कहा, 'घूंघट मारकर नाचो तो कैसा रहे ? वैसे ही जैसे उस गांव का तिजुआ नाचता होगा।'

कुन्ती अपनी भावना पर हँस पड़ी। अचल को भरोसा हो गया कि उसकी झेंप को कुन्ती ने नहीं परख पाया और उसके परिहास ने परस्थिति को सँभाल लिया है।

कुन्ती ने कहा, 'जैसे आपको अच्छा लगे। वैसे नाच बिना घुंघरू के कुछ धमा-चौकड़ी सा ही रहेगा। आप जेल में क्या पहिन कर नाचा करते थे ?'

कुन्ती अपने सवाल पर कुछ सकुचने को हुई, परन्तु संकोच-दमन के अभ्यास ने उसकी सहायता शीघ्र करदी। अचल अपने सहज नियन्त्रण को स्थापित कर चुका था।

जैसे कोई अध्यापक अपनी श्रेणी के लड़कों से बात करता हो अचल कुछ तटस्थ सा होकर बोला, 'कुर्ता धोती पहिने हुए प्रदर्शन होना था। नृत्य-कला की बारीकियों को दिखलाने और आन्तरिक भावों को विविध संकेतों द्वारा व्यक्त करने के लिए जो उसकी भाषा के शब्द हैं, घुंघरू–घुगरू की ऐसी कोई खास ज़रूरत नहीं है।'

उसके मन ने कहा, 'परन्तु उसमें सलोनापन तभी आता है जब साड़ी, लिपस्टिक, पाउडर इत्यादि का साथ हो।'

कुन्ती ने सोचा, 'ऐसा नृत्य केवल सीखने की पुस्तक का काम देता होगा, सौन्दर्य तो उसमें संभव नहीं।'

अचल कहता गया, 'अन्तर्निहित लालसाओं की, नृत्यकला, अत्यन्त प्राचीन भाषा है जिसके शब्द हावभाव, संकेत और ताल हैं। फिर इस भाषा का व्याकरण बन गया और उसमें पैर को उतनी आज़ादी नहीं रही। इसीलिए जन–नृत्य, शास्त्र वाली नृत्यकला से, अलग हो गया और

उसको उद्दीपन या आदिम धार्मिक वृत्ति का रूप मिल गया। लोक–नृत्य के नाम से जो नाचकूद होता है दशहरा दिवाली होली इत्यादि त्योहारों पर अपना पूरा स्वच्छन्द रूप पाता है। खेती-किसानी सम्बन्धी नाच है, रासलीला की आड़ में नाच होते हैं, जिनमें गर्दन और हाथ ज्यादा हिलाए जाते हैं।'

कुन्ती का मन ऊबने लगा था। हँसने के लिए उसने पूछा, 'तिजुआ का नाच इन में से किस वर्ग में रक्खा जायगा?' वह हँसी।

अचल की गम्भीरता भङ्ग नहीं हुई। बोला, 'रीत रिवाजी और रासलीला के नाच की खिचड़ी समझो।'

कुन्ती अपनी हँसी को रुकने नहीं देना चाहती थी। 'और उसकी फिरकियां?'

अचल अपनी गम्भीरता को अखण्डित रखने पर दृढ़ था।

'काम वासना के चक्र में मन जो चक्कर खा जाता है, उसी का बाहरी और साकार रूप वे फिरकियां हैं। जिनमें शरीर कील पर चक्कर खाते हुए लट्टू की तरह एक आकार मात्र सा दिखलाई देता रहता है और शरीर की सचाइयां थोड़ी देर के लिए भुलावे में पड़ जाती हैं। देखने वालों का कुछ मनोरंजन होता है, क्योंकि उस क्रिया को वे स्वयं करना चाहते हैं, पर नहीं कर पाते इसलिए वे अपने भाव को फिरकी लेने वाले के भाव में तल्लीन कर देते हैं और प्रमोद पाते हैं।'

कुन्ती की हँसी बन्द हो गई। एकाग्र होकर दूसरी ओर देखने लगी। अचल ने सोचा उसकी विवेचना पर कुन्ती का ध्यान जम गया है।

वह कहता गया, 'कत्थक नृत्य जो तुमने सीखा है—नृत्य, नाटक, और गायन का समन्वय है। वह एक मधुर स्वप्न सा मदिर होता है, वास्तविकता से दूर और तान, ताल तथा काव्य का अद्भुत मीठा शर्बत।'

कुन्ती का नृत्य अचल के भीतर पूरी तौर पर जाग पड़ा। अचल, उसके प्रभाव को जो उसके मन पर पड़ा था, सीधे सरल स्पष्ट शब्दों में

नहीं व्यक्त कर सकता था, इसलिए अपनी जानकारी को प्रकट करने के साथ ही अपनी भावना को शास्त्र में लपेटकर उसने कुन्ती के सामने रक्खा, 'वास्तविकता से चाहे वह दूर हो, परन्तु उसमें हावभावों द्वारा अनन्त सुझाव पेश होते हैं—कलाकार अपनी बारीक ललक लालसा को सघन और मूर्त करके दूसरे तक पहुंच सकता है। कलाकार का यह वाहन लय की धीमी और फिर तेज़ गति के सामञ्जस्य में चलता है। अत्यन्त मनोहर कविता के समान मोहक। अत्यन्त मन्जुल सुझावों से ओतप्रोत रहने के कारण यह दर्शक के हृदय को जकड़ लेता है और न जानें कब तक जकड़े रहता है।'

अचल ने उमंग के साथ यह व्याख्या की। इसने समझा कि कुन्ती के उस दिन के नृत्य की प्रशंसा को और उसके मन पर उस नृत्य का जो प्रभाव पड़ा था उसको उसने सब साफ़ साफ़ बतला दिया।

कुन्ती सोच रही थी। उस विवेचना को उसने कुछ सुना और कुछ नहीं सुना।

'इस विवेचना में अचल ने मेरे नाच का उदाहरण क्यों नहीं दिया? स्पष्ट कह देता तो मैं ऊपर से भले ही मुंह सिकोड़ लेती, कनखियों देख लेती, परन्तु मेरे जी को भाता। स्पष्ट न सही कुछ इशारा ही कर देता तो मैं कुछ पूछती। विद्वान है। परन्तु कुछ नीरस है। ऐसी भी विद्या क्या जो हृदय में न घुले? अचल क्या दिमाग़ ही दिमाग़ है अथवा उसमें शरीर का भी कोई अंश है? उसके शरीर भी होगा, सब स्त्री पुरुषों के होता है, परन्तु दिमाग़ के बराबर या दिमाग़ से कम? सुधाकर में शास्त्र अधिक है, परन्तु वह सरस भी है। दिमाग़ भी है पर शरीर का अंश भी है। जीवन क्या केवल बुद्धि-भोजी है? क्या अचल अपने जीवन को केवल दिमाग़ की खूराक पर चलाने की ओर बढ़ रहा है? होते होते इस प्रकार के जीवन का अन्तिम रूप कितना रूखा, कितना फीका और ख़ाली न बन जायगा?'

कुन्ती ने अचल की ओर देखा। कुन्ती की आंखों में एक रीतापन सा था, और अचल की आंखों में उसका सूक्ष्म उद्देश्य घनीभूत सा होकर आसीन था।

कुन्ती के रीते नेत्रों में अचल ने किसी उमङ्ग की, किसी वासना की टटोल की। परन्तु उसने उन आंखों में एक विद्यार्थी की वृत्ति पाई—उसको ऐसा ही जान पड़ा, विद्यार्थी ने अपनी कला की सराहना और उनकी चाह की डोरी को, शायद नहीं पकड़ पाया।

अचल ने थोड़ा सा और स्पष्ट करने की चेष्टा की। 'नृत्य वास्तव में एक दृश्य काव्य है। जैसे सरस कविता के ललित कोमल पद मनके तारों को झंकार दे देते हैं वैसे ही नृत्य का दृश्य काव्य जो देहलता की लहरों में होकर प्रकट होता है मनको झंकार ही नहीं, टंकारें देता है। कत्थक नृत्य से भी बढ़कर शांतिनिकेतन के नृत्य का प्रकार है। उस नृत्य की स्वाभाविकता, उसका प्रशान्त गौरव, मन्जुल सौष्ठव, उसकी सहज मृदुल सरलता, घनी भूत भावुकता रस से ओतप्रोत भाव-पूर्णता और मंगलपूर्ण सुन्दरता निजी उसकी है! शब्द, संगीत, संकेत और ताल मानो एक इकाई में बुन दिए जाते हैं, उन सब का एक मात्र और अन्तिम फल विपुल मनोहरता, रहस्यमयी आध्यात्मिकता और जीवन का एक विशाल वरदान हो जाता है।'

कुन्ती इस पाठ को ध्यान के साथ सुन रही थी—अचल ने ऐसा ही समझा, परन्तु उसको थोड़ी सी शङ्का थी मेरे उद्देश्य को कुन्ती ने पकड़ पाया या नहीं। कुन्ती सोचती थी; 'शुष्को—वृक्षस्तिष्ठत्यग्रे' है अचल या कुछ और! अचल ने उसकी आंखों में फिर रीतापन देखा। इसमें तो उसको कोई सन्देह नहीं था—कुन्ती मेरे पांडित्य से प्रभावित हुई है। पांडित्य का रोब जमजाने से हो स्त्री के मन में पुरुष के लिए स्नेह उमड़ता है। 'भय बिन होय न प्रीत' ग़लत होगा, 'धाक बिन होय न प्रीति' शायद सही है। अचल ने यह नहीं सोचा कि मैं स्त्री नहीं हूँ। कुन्ती चाहती थी कि अचल स्त्री की तरह एक शब्द तो कहदे, फूटा सा ही कहदे।

कुन्ती को उस कमरे में और अधिक बैठा रहना भारी मालूम पड़ने लगा। अचल की उमंग का प्रवाह अभी पूरा का पूरा खर्च नहीं हुआ था। वह कुन्ती से कुछ स्पष्ट कहना चाहता था। सोचता था क्या मैंने अभी तक कुछ भी स्पष्ट नहीं कहा ? कुन्ती उसके पास शिक्षा के लिए आती है। और अधिक स्पष्ट क्या कहूँ ? फिर वह कुन्ती की स्पष्टवादिता और उग्र प्रकृति को भी जानता था।

कुन्ती को जमुहाई आई और उसने अंगड़ाई ली। कुछ इस प्रकार जिसका एक छोटा सा अंश उस दिन के नृत्य में बिजली की सी झलक दे गया था।

अचल ने मुस्कराकर कहा, 'मेरा व्याख्यान कुछ अधिक लम्बा हो गया। क्या रूखा लगा ?'

'नहीं तो', दूसरी जमुहाई की तैयारी करते हुए कुन्ती ने उत्तर दिया; 'ध्यान का खिचाव तनाव ज़रूर कुछ ज्यादा हो गया।'

फिर यकायक हँस पड़ी। उस हँसी में उठती हुई जमुहाई समा गई।

हँसते हँसते बोली, 'पूरा ध्यान दिया। आपकी व्याख्या जानने योग्य बातों से काफ़ी भरी हुई थी, परन्तु कहीं कहीं इतनी क्लिष्ट थी कि समझमें नहीं आई। पंडित लोग शास्त्र का अध्ययन अकेले अपने लिए करते हैं या दूसरों के लिए भी ?'

अचल हँस पड़ा। कुन्ती की आंख यकायक घड़ी पर गई। अचल ने समझ लिया कि उसके घर जाने का समय हो रहा है। उसने निश्चय किया एकाध बात तो कर ही लूँ, असंगत अभी न होगी।

अचल ने कहा, 'बातों बातों में समय बहुत निकल गया। मैं एक बात कहना चाहता हूं।'

कुन्ती हँसी।

'तो उस भूमिका से शुरू करिए: मैं जब जेल में था, या जब मैं जेल में नाचा करता था।'

कुन्ती की हँसी फूट पड़ी और अचल ने अट्टहास किया। दोनों की हँसी एक दूसरे के साथ गुथ सी गई। उस क्षण अचल को मालूम हुआ कि मुक्त हँसी कितने बड़े मूल्य की चीज़ है।

उस हँसी ने अचल को उतनी देर के लिए कुछ स्वाभाविक बना दिया। जो बात वह पांडित्य और शास्त्र में लपेट लपाटकर कह रहा था सीधी तौर पर उसने कही।

'तुम नृत्य सीखोगी ? उस प्रकार का नृत्य जिसमें साहित्य, संगीत, संकेत और ताल एक ही ललित और रंगीन चादर में बुनसे जाते हैं ?

जिस बात के सुनने के लिए कुन्ती कुछ समय से ललक रही थी उसका प्रारम्भ देखकर उसको अच्छा लगा।

'कैसी चादर ? किसी पंडिताई वाली चादर ?'

'नहीं, नहीं। नृत्यकला की चादर। जिस चादर को तुमने अपनी कला से उस दिन उजागर किया था। तुम्हारा नृत्य बहुत सुन्दर हुआ था। उसी समय मैंने कह दिया था। मुझको बहुत ज्यादा अच्छा लगा था। कत्थक परिपाटी में देहलता का लहरना छहरना और शान्ति निकेतन की परिपाटी के कुछ ही समन्वय में उस लहर को विशाल सौष्ठव दे देना तुम्हारा एक कमाल था। मैं कभी नहीं भूलता हूँ, परन्तु चाहता हूँ कि इस प्रणाली की कुछ बारीकियाँ तुमको और मालूम हो जायँ। मैंने काफ़ी सीखा है। इस कमरे को ही जेज़ बना देने के लिए तैयार हूं। अपना पूरा प्रदर्शन तुम्हारे सिखाने के लिए दिया करूँगा। मेरे पास काफ़ी समय है। परीक्षा की तैयारी कर चुका हूं। थोड़ा सा समय देख भाल के लिए दे दिया करूँगा। तुमको काफ़ी समय दे सकूँगा। तुम्हारे अन्य विषयों की तैयारी के लिए भी। अभी तो सीख सकती हो। फिर—फिर—शायद अवसर न मिले।'

उस 'फिर—फिर—' को कुन्ती समझ गई। एक सिहिर मनके किसी कोने से उठी। उसको वहीं का वहीं सुला दिया। जब अचल बोल

रहा था उसको लग रहा था मानो किसी मधुर रस के घूँट पी रही हो। उसने किसी के मुँह से इतनी तारीफ़ नहीं सुनी थी। अपने रूप के विषय में वह जानती थी। प्रत्येक स्त्री जानती है। परन्तु कुन्ती यह भी जानना चाहती थी कि उसके रूप के विषय में दूसरे लोग क्या कहते हैं—खास तौर पर अचल क्या कहता है। अन्य पुरुष मुँह पर रूप की प्रशंसा करें तो बदले में शायद उनको क्या मिले यह उस समय की परस्थिति और अपने हाथ के हथियार—लकड़ी, डंडा, जूता इत्यादि इत्यादि—पर निर्भर है। परन्तु अचल के मुँह से वह अपने रूप के सम्बन्ध में भी सुनना चाहती थी, क्या वह कह सकेगा? उसका दिमाग़ तो इस लायक़ है नहीं। क्या शरीर में इतनी क्षमता होगी! नृत्य की प्रशंसा में क्या उसका कुछ भी संसर्ग नहीं था? कोई संकेत?

कुन्ती ने एक क्षण बाद उत्तर दिया, 'मेरी बहुत इच्छा है सीखने की। परन्तु अकेले में सीखने पर कोई कुछ कहने लगे—कोई क्या कहेगा? मैं तो परवाह करती नहीं। कभी कभी निशा को भी ले आया करूँगी। मेरे घर पर लोगों का इतना समागम रहता है कि वहां तो सुविधा है नहीं। वहां आप आ भी नहीं सकेंगे।'

अकेले या दुकेले की समस्या ने अचल को एक पल के लिए भी हैरान नहीं किया। उसने कहा, 'मैं बहुत दिन से सोच रहा था कि कहूं।'

'फिर कहा क्यों नहीं?'

'तुम्हीं ने सीखने के लिए क्यों नहीं कहा?'

'क्यों कि आपने पाठ्य विषय को ही सिखलाने का ठेका लिया था। अतिरिक्त विषय के लिए कैसे कहती?'

वे दोनों हँस पड़े।

इसी समय से सिखलाना क्यों न शुरू करदूं? 'चादर भई झीनी' के साथ!'

संकोच की एक छाया कुन्ती के चेहरे पर झांई मार गई। परन्तु वह सहज-दम्य स्वभाव की स्त्री नहीं थी।

'आज का समय तो लगभग चुक गया है। कल से आरम्भ करूँगी। आपको वह गीत बहुत पसन्द आया ?'

उत्सुकता के साथ कुन्ती ने उत्तर की प्रतीक्षा की। कलेजे की धड़कन के साथ।

अचल ने तुरन्त उत्तर दिया, 'बहुत अधिक पसन्द आया, और बहुत ही अच्छा लगा उसका हावभाव के साथ प्रदर्शन। बहुत सुन्दर, बहुत मनोहर।'

कुन्ती ने सब कुछ पा लिया।

बोली, 'अब आप जो कुछ सिखलायंगे उससे मेरा नृत्य और भी अधिक—आप क्या क्या कह रहे थे अपने उस लम्बे व्याख्यान में ?

'और भी अधिक मन्जुल, मधुर, मदिर-और क्या कहूँ ?' अचल ने कहा।

कुन्ती खड़ी हो गई। जाने का समय हो चुका था।

अचल ने पूछा, 'निशा को भी लाओगी ?'

प्रश्न के साथ ही उसका कलेजा ज़रा सहमा। कुन्ती सोचने लगी। उसका अनिश्चय अचल को बहुत आकर्षक लगा।

कुन्ती ने सोचकर उत्तर दिया, 'आवे और न आवे। ठीक ठीक नहीं कह सकती। उससे बात करूँगी।'

अचल ने कहा, 'मैंने वैसे ही पूछा। मेरी कोई इच्छा नहीं कि वह आवे। तुमने कहा था इसलिए मैंने पूछा !'

'हां -आं—' कुन्ती फिर कुछ सोचने लगी। बोली, 'लाऊंगी। उसकी सगाई हो रही है। विवाह भी शीघ्र होगा। उसने बाहर का आना जाना बहुत कम कर दिया है।'

'कहां हो रही है सगाई ?'

'लखनऊ में हैं कोई एक लवकुमार।'

'नाम तो अच्छा है। यदि पहला टुकड़ा लव अंग्रेज़ी शब्द द्वारा सार्थक कर दिया जाय तो निशा के लिए जीवन में सुख ही सुख है।'

'ह! ह! ह! ह! नाम कभी कभी सार्थक तो निकल आते हैं। पर यदि किसी का नाम चंचल हो तो क्या वह पुरुष वास्तव में जन्म भर चंचल ही रहेगा? और उसका उल्टा क्या उल्टे अर्थ वाला?'

कुन्ती दरवाज़े पर हँसते हुए पहुंच गई और नमस्ते करके चल दी।

परन्तु उसके कान में अचल के ये शब्द पड़ गये थे।

'अच्छा! अच्छा!! यह बात!!!'

अचल अत्यन्त प्रसन्न था; बहुत सुखी।

'चंचल का उल्टा अचल। अचल वह स्वयं। क्या मैं जन्म भर अचल रहूँगा? अचल का अर्थ पहाड़। अचल का अर्थ विराग युक्त। अचल का अर्थ निर्मोही, रूखा, नीरस। परन्तु अचल का अर्थ अडिग, दृढ़, धीर और स्थिर भी तो है। कुन्ती का विवाह किसी दिन होगा, और मैं भी कुआंरा न रहूँगा। कुन्ती के हृदय में मेरे लिए कुछ स्फुरण है। हम दोनों स्त्री की स्वाधीनता में विश्वास करते हैं और उस स्वाधीनता के पक्षपाती हैं। परन्तु उसके माता पिता का भी तो हाथ विकल्प में रहेगा। लेकिन संसार भर में घोषणा करने के बाद कि कम से कम दो वर्ष तक विवाह नहीं करूँगा,—पहले परीक्षा पास करूँगा, फिर कुछ राजनैतिक कार्य करूँगा,—इसके उपरान्त विवाह करूँगा,—लोग सुनेंगे कि मैं फिसल गया साथी, सहयोगी, लोकमत, मित्र और राजनैतिक अनुयायी क्या कहेंगे? कुन्ती एकान्त में भी नाचना सीखेगी। नाच उतनी सीधी तरह तो नहीं सीखा जाता जितनी सीधी तरह गाना बजाना सीखा जाता है। नृत्य में तो शरीर के प्रत्येक अङ्ग का उपयोग प्रयोग होता है। नेत्र का, मुस्कराहट का और देह के अन्य उभरे भागों का भी। तो क्या इसी शिक्षा के सिलसिले में हृदय के भीतर की भी कोई बात किसी दिन कह

हूँ ? परन्तु कहते ही विवाह की भी बात छिड़ना अनिवार्य है। बात के बाद ही विवाह।

उस घोषणा का क्या होगा जो ताल ठोक ठोक कर सुनाई गई है ? निशा का पिता क्या कहेगा ? सब लोग कहेंगे अचल चंचल है; डिग गया ! गिर गया !!

ऐसी परिस्थिति में लोग किसी मध्यमवर्ग की खोज करते हैं। मध्यम-वर्ग होता बहुत सकरा है। वह खाई और खड्ड के बीच में होकर जाता है। ज़रा पैर चूका कि भर भराकर या तो खाई में या खड्ड में।

परन्तु अचल ने मध्यमार्ग का अनुवर्तन तै कर लिया।

साध साधकर, संभाल संभाल कर, प्रेम करता रहूँगा, हृदय की गिनी गिनाई गतियों को, राई रत्ती तौलते हुए वासना—प्रसूनों को, रेशम की पोटली में गांठ लगाकर बांधे हुए कामना–परिमल को, और मुट्ठी में क़ैद की हुई लालसा–सुगन्धि को, थोड़ा थोड़ा करके कुन्ती पर न्योछावर करता रहूँगा।

अपनी समस्या के हल पर अचल को बहुत तृप्ति हुई। उसको अपने नाम और अपने पूर्व इतिहास पर विश्वास था।

उस रात जब कुन्ती ने थिरक कर नाचा था, इस कंधे से उस कंधे तक उसका अंग कैसा लहरा लहरा जाता था ! 'चादर भई झीनी' को उसने अपने कमल जैसे करों की कारीगरी से कैसा निभाया था !! हाथ बार बार हवा में देह की सुन्दर लचकों के साथ कैसे अनोखे चित्र बना रहे थे !!! रङ्गमंच पर पीछे शून्य सा था और कुन्ती के ऊपर बिजली के प्रकाश का केन्द्र। कितनी दमक थी ! कितना चमत्कार था !! उसका कुछ अंश उस अंगड़ाई में भी तो उतर आया, जो अभी हाल उसने ली थी। 'चादर भई झीनी' भई झीनी। कण्ठ भी कितना विलक्षण मधुर है !!!

बाबा कबीर को क्या मलूम था कि 'चादर भई झीनी' का ऐसा उपयोग भी कभी हो सकेगा !

[११]

आधी रात के बाद चाँदनी डूब गई। उजेला सिमट कर धीरे धीरे अन्धकार में लीन हो गया। गर्मियों के दिन थे, हवा मन्द मन्द चल रही थी और उसमें ठंडक थी। नीम के फूलों की सुगन्धि हवा के कण कण में बैठी हुई अन्धकार को चिनौती सी दे रही थी।

गांव में थोबन माते के मकान में यकायक प्रकाश हुआ। हवा धीमी थी इसलिए लौ सीधी उठी। धुँआ छितराने लगा। उसी समय बन्दूक़ के चलने का शब्द हुआ।

थोबन और उसका कुटुम्ब अपने मकान के खुले स्थलों में सो रहे थे। बन्दूक़ की आवाज़ पर लगभग सब के सब भरभरा कर उठ बैठे। देखा तो मकान में आग लगी हुई है। घर के बाहर निकल कर भागने की बात सोची कि बन्दूक़ के चलने की फिर 'धायँ' हुई। यदि बाहर निकल कर जाते हैं तो मार डाले जायंगे और घर में बने रहते हैं तो जलकर ख़ाक हो जायंगे। उन लोगों ने रक्षा के लिए चिल्लाना शुरू किया।

कुछ गाँव वाले घरों से थोड़ा सा निकले, परन्तु फिर लौट गए। उन लोगों के पास हथियार न थे। डाकुओं का सामना लाठी या कुल्हाड़ी से क्या करते ? उन लोगों ने भी एक दूसरे को अपने अपने घरों से चिल्ला-चिल्ला कर पुकारना शुरू किया। न तो थोबन के दल वाले उसकी सहायता के लिए घर से बाहर निकल सके और न उसके विरुद्ध दल वाले।

पुलिस का कृपापात्र होने के कारण थोबन के पास बन्दूक़ का लाइसैन्स था। उसने सोचा बन्दूक़ चलाने से शायद गांव वालों को साहस मिले और डाका डालने वाले निरुत्साहित होकर भाग जायँ।

थोबन ने 'धायँ' पर 'धायँ' करनी शुरू करदी। कुछ देर बाद भी 'धायँ धायँ' होती रही, परन्तु जल्दी बन्द हो गई।

थोबन का साहस और बढ़ा। उसने मकान का दरवाज़ा खोलकर बन्दूक़ चलाई। उसे जान पड़ा कि डाकू भाग गए। उसके कुटुम्ब वाले आग बुझाने और अपने को बचाने का प्रयत्न करते हुए मकान के भीतर इधर से उधर दौड़ रहे थे। थोबन को घर से बाहर आया हुआ समझकर और उसकी ललकारों को सुनकर गांव वाले भी घरों से बाहर निकल आए। आग जल्दी बुझाली गई, क्योंकि खपरैल वाला भाग कम था और पक्का अधिक।

आग बुझाने के लिए उसकी विरोधी-पार्टी के लोग भी आए, परन्तु काफ़ी पीछे, और, गिरधारी तथा पञ्चम तो बहुत ही पीछे आए।

'खून लगाकर शहीद बनने को आ गए!' थोबन बिना कहे न माना।

पञ्चम बोला, 'हम तो न आते चाहे कुछ हो जाता, परन्तु यह गिरधरिया नहीं माना। बड़ी देर से अड़ पकड़ रहा था—चलो, गांव की बात है, चलो मनुष्यता की बात है, सेवा हमारा धर्म है; तब हमें आना पड़ा। बुरा लगा हो तो चले जायँ?'

'तुम्हारी मर्ज़ी, मैंने तो बुलाया नहीं।' थोबन ने कहा।

पञ्चम ने पीठ फेरी।

'भाइयो, हम लोगों को बुरा मत कहना। ये चले हम।'

गांव के कुछ लोग अनुरोध करने लगे। 'झगड़े की जगह झगड़ा है, किस गांव में नहीं होता? आओ आओ। लौटकर मत जाओ।'

'थोबन माते बिचारे बहुत नुक़सान में आ गए हैं। दुखी हैं। इसी लिए उनको क्रोध है। बुरा मत मानो।'

'देखो तो, ग़ज़ब हो गया! आग लगाई और लूट लिया!!'

'लूट लिया?' पञ्चम ने पलटकर पूछा, 'क्या माल गया है लूट में?'

थोबन का लड़का आगया। बोला, 'घर राख हो गया, यह क्या कम हानि की बात हुई?'

'थोड़ी सी आग लगी तो कह दिया कि सारा घर राख हो गया !' पञ्चम ने कहा।

थोबन चिल्लाकर बोला, 'देखो भाइयो ? सुन लिया ? इनको सब मालूम है—क्या माल गया है लूट में ? थोड़ी सी आग लगी तो कह दिया कि सारा घर राख हो गया !! समझ गए, भाइयो, किसने आग लगाई होगी और किसने लूटने की हिम्मत की होगी ? दूर के डाकू जब डाका डालते हैं तो सांझ के लगभग ही डालते हैं। सोच लेना, भाइयो, आधी रात के पीछे कौन डाका डालेगा ? दूर का या पास का ? और डाकू आग लगाकर बन्दूक़ के फ़ायर क्यों करेंगे ? जिन लोगों ने यह दुष्टता की है उनकी मन्शा हम लोगों को जला मारने की थी। पर खैर, सबेरे देखा जायगा। पुलिस खुद समझ लेगी। पुलिस सब पता लगा लेगी।'

पञ्चम भी गरम हुआ।

'हां मरवा डालो, मानो। अपने किसी नातेदार या थाने मेलियों से कह रक्खा होगा कि मकान में कहीं थोड़ी सी आग लगा देना, बाहर से कुछ बन्दूकें दाग़ देना, मैं भी चलाऊंगा और जैसे ही बाहर निकल आऊं चले जाना। सब षडयन्त्र इसलिए कि जिसमें हम लोगों को फंसवा दो।'

एक गांव वाला उससे भी अधिक गरम हो गया—वह थोबन के दल का आदमी था।

'हां, हां, लगाए जाओ पूरी अकल उत्पातों के करने में। वैसे कुछ नहीं कर पाते तो सोचा अताताइयों की तरह आग लगा उठें और भेड़ियों की तरह लूटमार कर उठें। याद रखना तुम्हारे भी घर हैं और बाल बच्चे भी हैं। हम भी आग लगाना जानते हैं।'

थोबन का क्रोध भीतर जा बैठा। उसने अपने दल वालों को बनावटी तीखे स्वर में डांटा जिसमें भर्त्सना कम और वाह वाही ज्यादा थी।

'ठहर भी जा। धीरज भी धर। गम खा। सवेरे पुलिस आयगी। तहकीकात होगी। सच झूठ कुछ छिपा नहीं रहेगा।'

पञ्चम तेज़ी पर था। उसको विश्वास था कि धीमें पड़ने से आग लगाने और डाका डालने के प्रयत्न का आरोप सिर पर सहज ही आ जायगा।

हेकड़ी के साथ बोला, 'हां, हां आ जाय पुलिस। जब हमने किया ही कुछ नहीं है तब हमें पुलिस और फ़ौज का क्या डर है?'

'हमें सब मालूम है,' थोबन ने स्वर को स्थिर करके कहा, 'शहर के उन लड़कों की बहुत भरी रहती है तुमको। वे भी क़ानून से परे नहीं हैं। किसी उपद्रव में शामिल होंगे तो क्या वे बच जायंगे?'

'हां, लगवा देना उन लोगों को फाँसी! थाना तहसील हैं न हाथ में। अबकी बार पड़ेगा मालूम आटा दाल का भाव।' बरबराता हुआ और हां – हूं फुफकारता हुआ पञ्चम, गिरधारी के साथ चला गया।

उन लोगों के दल के जो आदमी पहले से आए हुए थे और जिन्होंने आग बुझाने में थोड़ी सी मदद भी की थी वे भी चले गए।

थोबन की बहुत इच्छा थी कि आग लगाने की घटना के पहलू में डाके को बिठलाया जाय, जिसमें सारी घटना भयङ्कर और बीभत्सपूर्ण हो जाय। परन्तु उसका निभाव असंभव समझ कर वह उतने पर ही रह गया।

बाक़ी रात सलाह, आरोप, चिलम, खांसी और परस्पर सहानुभूति के दौर चलते रहे। प्रातःकाल होते ही चौकीदार को थाने पर भेज दिया गया। प्रातःकाल होने के पहले ही पञ्चम इत्यादि ने बन्दूकें और अपने अन्य हथियार सुरक्षित स्थानों में रख दिए।

दिन चढ़ने के बाद पुलिस आ गई, क्योंकि थाना बहुत दूर न था।

जो तर्क थैबन ने गांव वालों के सामने रात को रक्खा था, वह पुलिस ने पूरी तौर पर अपना लिया। उसमें केवल एक तत्व पुलिस ने और जोड़ा—आग, सशस्त्र डकैती राजनैतिक थी। पञ्चम के सिवाय उसके दल के सब लोग पकड़ लिए गए—पञ्चम अचल के पास चला आया, इसलिए पकड़े जाने से रह गया। पञ्चम ज़मानत और वकील की सहायता के प्रयोजन से अचल के पास चला आया था।

अचल ने कहा, मजिस्ट्रेट के सामने हाज़िर हो जाओ। मैं ज़मानत और वकील का इन्तज़ाम कर दूंगा।'

पञ्चम बोला, 'मैं आपके इतने बड़े मकान के एक कोने में पड़ा रहूँगा। वे लोग जब पकड़कर आजायंगे तब उनकी ज़मानत आप करा देना। यहां रहकर मैं उन लोगों की मदद करता रहूँगा। आपको गांव का हाल तो कुछ मालूम नहीं है जो आप अकेले कुछ कर सकें।'

'न,' अचल ने हट किया, 'यह नहीं हो सकता। हमारे सिद्धान्त के खिलाफ़ है। ज़मानत गांव वाला न करेगा तो मै शहर से करा दूंगा। दूसरे, तुम अपने साथियों में जेल में रहोगे तो उनको ढाढ़स मिलता रहेगा। इस तरह छिपे रहने से कोई लाभ नहीं। आखिर एक दिन कचहरी में तुमको जाना ही पड़ेगा। छिपे रहने के कारण फ़रार समझे जाओगे और अपने साथियों समेत किसी-बड़ी मुसीबत में फस जाओगे।

पञ्चम ने कोई बहस नहीं की। अचल ने उसको एक वकील के साथ कर दिया। वह गिरफ्तार होकर पुलिस के हवाले कर दिया गया।

पुलिस जांच पड़ताल में उत्साह के साथ चिपट गई। सबूत बनाया जाने लगा। गवाही सब झूठे, क्यों कि किसी ने नहीं देखा था कि आग किसने लगाई। परस्थिति–पोषक साखी बनाकर खड़ी की गई। जब अपराधी अदालत के सामने लाए गए ज़मानत की अर्ज़ी दी गई। मैजिस्ट्रेट कुछ न्याय प्रकृति का था। उसने पुलिस के सबूत का नक़शा देख कर समझ लिया कि मामले में कुछ सार नहीं है। ज़मानत की अर्ज़ी

मन्ज़ूर कर ली। पर उतने आदमियों की ज़मानत कौन दे! जियाराम ने इनकार कर दिया। 'चन्दे दे सकता हूँ, ज़मानतें नहीं।' सुधाकर से कहा। सुधाकर की ठेकेदारी का काम स्थानिक बोर्डों, रेलवे, पी० डब्ल्यू० डी० कलक्टरी इत्यादि में चलता था। वह राज़ी हो गया। उसकी ज़मानत मान ली गई।

[१२]

कुन्ती गृहकार्यवश अचल के पास कई दिन तक संगीत सीखने के लिए नहीं आ सकी।

'पिछड़ जाने से उसका पाठ्य-क्रम शिथिल हो जायगा। कमज़ोर पड़ जायगी। परीक्षा के लिए अभी कई महीने थे। परन्तु जाड़ों के आने पर दिनमान छोटा रह जायगा और समय कम दिया जा सकेगा। ऐसा कैसा गृहकार्य है जिसने उसको आने से रोक लिया! उसके घर जाकर पूछ सकता था। परन्तु यदि कोई कह बैठे, 'आप अन्देशे से दुबले क्यों हुए जा रहे हैं?' तो बहुत अखर जायगा। कुन्ती को कमसे कम एक पत्र तो भेजना चाहिए था। एक सतर में न आपाने का कारण लिख भेजती। बस। परन्तु वह कुछ ऐसी आज़ाद तबियत की है कि कुछ ठिकाना नहीं। और हो क्यों नहीं! आखिर मेरे ऐसे कौन से बड़े अहसान उसपर हैं जो वह ज़रा सी भी लचे? शायद अवकाश न मिलता हो। काम की उलझनों में भूल ही गई हो। मुझको संकीर्णता से काम नहीं लेना चाहिए। उदारता भी इसमें कुछ नहीं। साधारण सभ्यता का ही तो तक़ाज़ा है। निशा का भी पता नहीं क्या कर रही है। उसके पिता ने कहा था कभी कभी कुछ सिखला दिया करो। वह भी कुछ उत्कंठित थी। पर बहुत दिन हो गए हैं और अब उसका विवाह होने को है। और मुझको उससे मतलब भी क्या है? मतलब तो मुझको किसी से भी नहीं है।'

अचल के मन में कुन्ती का नृत्य-सौष्ठव और भी अधिक गहरे बैठ गया। स्मृति पर उसकी लीकें और भी अधिक गहरी हो गईं। वह उसके ऊपर अपना कुछ अधिकार सा अनुभव कर उठा था। बैठक की वे घड़ियां रीती और सूनी लगीं। जिस तबले को वह बजाती थी उसको मोह की आंखों देखा। उस जगह पर बार बार निगाह दौड़ी जिस पर वह प्रायः बैठा करती थी। फिर आंखें मीच लीं। कुछ दिखलाई न पड़े। परन्तु कभी कुन्ती, कभी मुक़द्दमा जिसकी ज़मानत का प्रबन्ध करके उस

दिन कचहरी से जल्दी लौट आया था। ज़मानत लगभग चार बजे होनी थी। वह क्यों कचहरी में व्यर्थ सड़ता रहे? शायद कुन्ती आ जाय और उसको न पाकर लौट जाय। घर आते ही उसने तलाश किया। मालूम हुआ कि कोई नहीं आया। आंखें मीच कर दरवाजे की ओर कान लगा लिए। एक एक शब्द को ध्यान से सुनने लगा। ज्यों-त्यों करके चार बजे। फिर सवा-चार। उसके बाद उसको कुछ नहीं सुनाई पड़ा और न दिखलाई पड़ा। नींद आगई।

पैर की चांप को बिना दाबे हुए कुन्ती और निशा आईं। उनमें से कोई भी पैर में कोई गहना नहीं पहिने थीं।

बैठक के दरवाज़े पर आते ही देखा कि अचल सो रहा है।

निशा ने कुन्ती को बैठक के भीतर जाने से संकेत में वर्जित किया।

धीरे से बोली, 'लौट चलो सो रहे हैं। रात को देर तक पढ़ते रहे होंगे। कच्ची नींद जगा देने से शायद चिल्ला पड़ें।'

कुन्ती ने मुँह बिराया। अँगूठा दिखलाया और अचल की ओर देखते हुए ओठों से चबाया।

निशा धीरे से हँस पड़ी। फुस फुस में बोली, 'मास्टर जी गुस्ताखी के लिए तुम्हारे कान उखाड़ें तो अच्छा रहे।'

'मेरे क्या हाथ पैर नहीं हैं?' फुस-फुस में ही कुन्ती ने कहा।

'यदि वे जागते हुए और चुप-चाप पड़े-पड़े तुम्हारी बातें सुनते हुए तो क्या कहोगे?'

'तो मैं ज़ोर से बोल उठूँगी जिसमें उनको भी मालूम पड़ जाय कि किस तरह के शिष्य से पाला पड़ा है। और, इस तरह चुप-चाप पड़े-पड़े किसी की बात सुननी भी तो नहीं चाहिए।'

'तो चुप-चाप पड़े ही क्यों हैं! मानलो मैं बी० ए० पास होगई हूँ और तुम भी। तो क्या किसी पुरुष को ऐसी बेढंगी तरह स्त्री ग्रेजुएटों के सामने पड़ा रहना चाहिए?'

'मानना ही है तो अपने को एम० ए०, डी० लिट० क्यों न मानो ? मन के लड्डू खाना हैं तो जी भरके खाओ।'

'तब तो परस्थिति में घोर अन्तर आ जायगा। वे शिष्य और हम लोग गुरू। मैं सिखलाऊँगी इनको संगीत और तुम पढ़ाना दर्शन-शास्त्र।'

हँसी रोकने के लिए निशा ने साड़ी से अपना मुँह दाब लिया।

उसी फ़ुस-फ़ुस में कहा, 'मास्टर जी बहुत गंभीर होकर, बड़े नियम-संयम के साथ तालीम देते हैं। हम लोग भोंह सिकोड़ कर, रोब और शान के साथ लैक्चर दिया करेंगीं।'

कुन्ती बोली, 'और भूलने पर या ध्यान के इधर-उधर भटकने पर कुर्सी पर खड़ा करदूँगी। कान भी मल सकती हूँ।'

दोनों ने फिर अपनी अपनी हँसी को दबाया।

निशा—'तुम्हारी तालीम से तो उनका ध्यान इधर-उधर नहीं भटकेगा। विषय और शिक्षक दोनों जो आकर्षक हैं।'

कुन्ती—'हिश !'

निशा—'और मेरा विषय योंही कठोर है, ज़रा और रूखा बना दूँगी, क्योंकि रूखा आदमी रुखाई ही से तो ज़ेर किया जा सकता है।'

कुन्ती—'अब भी ज़ेर करने की इच्छा है !'

निशा—'अरे वह नहीं। शिष्य को दबाए रखने के लिए गुरू को जो अनुशासन की कार्रवाई करनी पड़ती है, वह। उस तरह ज़ेर करने का रंगढंग तो तुम्हारे हिस्से में पड़ेगा।'

कुन्ती न तो सहमी और न उसने कोई प्रतिवाद किया। मेज़ पर रक्खी हुई तबलों की जोड़ी की ओर देखती हुई ज़रा ज़ोर के स्वर में बोली।

'आओ बैठें। मैं तबला बजाऊँगी तुम गाना।'

'जाग उठेंगे, फूहड़पन मत करो।'

'अब इस प्रकार बातें करते रहने में है फूहड़पन।'

'तो तुम गाओ, मैं बजाऊँगी। जाग पड़ेंगे तो कच्ची नींद की रिस तुम्हारे मीठे स्वर की रीझ में बुझ जायगी।'

कुन्ती ने ज़रा आंखें तरेरीं। तबले उठाकर निशा को दिए और बैठ गई। तबले को मिलाने के लिए जैसे ही निशा ने हलकी चांटी लगाई, अचल की आंख खुल गई। सबसे पहले उसने निशा को देखा। देखते ही उसके मुँह से निकला।

'कुन्ती। हां, कुन्ती यह बैठी है। अच्छा! कितनी देर हुई तुम लोगों को आए हुए? क्या बहुत देर हो गई है?'

निशा ने कुन्ती पर ज़रा रहस्य की दृष्टि डालते हुए कहा, 'अभी तो आए हैं।'

उस दृष्टि के मर्म की परवाह न करते हुए कुन्ती भी तुरन्त बोली।

'अभी अभी तो आरही हैं। बैठती ही जाती हैं। पहले सोचा लौट जायं। फिर निश्चय किया बहुत दिन बाद आई हैं कुछ काम ही करती चलें। डर था कहीं आपकी कच्ची नींद न जगादें। निशा ने आग्रह किया, मैं न जानें फिर कब आऊँगी, बैठ ही लो।'

निशा के मन में प्रतिवाद उठा—उसने ठहरने या बैठने के लिए कोई आग्रह नहीं किया था, परन्तु वह प्रतिवाद को प्रकट न कर सकी। 'हां—आं' करके ही रह गई।

अचल प्रसन्न था। निशा ने ही ठहरने या बैठने का हठ किया हो तब भी नतीजा अच्छा रहा।

अचल ने आंखें मीड़ते हुए कहा, 'बहुत दिनों में आसकीं! मुझको पता ही न लगा कि क्या हो रहा है?' उसके प्रश्न में उमंग थी।

बिना किसी परिताप के कुन्ती ने उत्तर दिया, 'काम लग गया था। परन्तु मैं घर पर कुछ न कुछ अभ्यास करती रही हूं।'

अचल की उमंग को धक्का नहीं लगा। बोला, 'देखूँ मैं कितना अभ्यास करती रही हो।'

निशा ने अपने सामने से तबले हटाते हुए कहा, 'तो फिर आप गाइए, ये बजावें।'

अचल ने मुस्कराकर कहा, 'मैं गाऊँगा और बजाऊँगा भी। तुमको, इनको भी, गाना पड़ेगा और बारी बारी से तबला भी बजाना पड़ेगा। आज बहुत दिनों की कसर निकलनी है।'

अचल ने तुरन्त अपनी उमंग को संयत किया। निशा ने कुन्ती को कनखियों देखा। कुछ कहना चाहती थी न कह सकी। परन्तु उसको कुन्ती पर कोई फबती छोड़नी थी।

अचल कहता गया, 'यदि घर पर अभ्यास के लिए काफ़ी समय मिलता रहा है तो मैं यों ही नहीं कह दूँगा कि कसर रह गई है।'

कुन्ती ने निशा की आंखों की भाषा को समझ लिया था। उसने अपनी खीज को अचल पर उतारा।

'ग़लती हो या न हो, पर आपको ग़लती निकालने में आनन्द मिलता है। मास्टरों जैसी प्रकृति।'

वह मुस्कराई और उसने निशा को मुस्कराने के लिए विवश किया। निशा से कहा,

'निशा है न ठीक? मास्टरों के स्वभाव की तुम भी तो समालोचक हो।'

बैठक में प्रवेश करने के पहले निशा ने जिस सहानुभूति के साथ चर्चा छेड़ी थी उसके उभारने का कुन्ती ने प्रयत्न किया। विग्रह के लिए गुञ्जाइश न थी। कुन्ती मास्टरनी बनकर अचल को ज्ञान-प्रदान करने के लिए किस हद तक जा सकती है यह उसको याद आगया—'कुर्सी पर खड़ा कर दूँगी, कान भी मल सकती हूँ!' निशा हँस पड़ी।

अचल ने सोचा वातावरण सन्तुलित अवस्था में है।

निशा हँसते हुए बोली, 'सब शिष्य मास्टरों के समालोचक होते हैं। कुन्ती यदि मास्टर होती तो आप क्या उसकी भली बुरी आलोचना अकेले में न करते?'

अचल सन्तुलन की डंडी को डिगमिगाना नहीं चाहता था। इतनी शंका तो उसको हो गई कि दोनों ने उसके सम्बन्ध में कुछ बातचीत की है। जानने की इच्छा होते हुए भी उसके उखाड़ने के संकट को वह समझता था, परन्तु वह अपने को गायन-वादन इत्यादि के विषय में इतना ऊँचा मानता था कि उसने उन लोगों की एकान्त में की हुई किसी भी आलोचना के जानने की उत्कंठा प्रकट नहीं की। अपनी बैठक के वातावरण को और भी मीठा बनाने की कोशिश की।

उसने उत्तर दिया, 'ज़रूर करता। जिस अध्यापक को हम लोग चाहते भी हैं उसका भी कुछ न कुछ मखौल उड़ाते। वह मखौल भी प्यार की ही एक शकल होती है।'

प्यार के शब्द पर कुन्ती के चेहरे पर हलकी सी लाली दौड़ गई और निशा के चेहरे पर लाज की फुरेरू। अचल को विश्वास था कि वह अपने पूर्व निश्चित मध्यमवर्ती मार्ग पर चल रहा है।

अचल ने उनके संकोच को नहीं देखा। नृत्य की बारीक लुनाइयों के सिखाने की बात कहने का उपयुक्त समय समझ कर उसके मन में एक लहर उठी। कुन्ती ने सीखने की प्रबल इच्छा प्रकट की थी। अकेली आऊँ या निशा को साथ लेती आऊँ यह भी उसने सोचा था। वह उसी सिलसिले में निशा को साथ ले आई है यह उसको स्मरण था।

अचल ने प्रस्ताव किया, 'आज से मैं नृत्य भी सिखलाना चाहता हूँ। इन्होंने बतलाया होगा, गायन, वादन और नृत्य तीनों का मेल हो जायगा।'

निशा ने मुस्कराते हुए कुन्ती की ओर देखा। कुन्ती को झेंप मालूम हुई। उसने मुस्कराते हुए कहा,

तबला हम लोगों में से कोई बजावेगा। आप नाचिए।'

अचल बोला, 'आरम्भ तुम करो। मैं बजाता हूँ। दर्शक निशा रहेंगीं। फिर तुम्हारे उसी नृत्य को संशोधित और संवर्दित रूप में मैं दिखला दूँगा। उस समय निशा तबला बजायंगीं। तुम निरीक्षण करना।'

'ठीक तो है, कुन्ती,' निशा ने कहा; 'इसी तरह तो सीख पाओगी।'

निशा की आंख में कुछ शरारत थी। कुन्ती ने परख ली। परन्तु कोई निस्तार न था। वह उसको कह कर ही तो लिवा लाई थी। संकोच करने में साहस की कमी ज़ाहिर होती और निशा को असंगत लगता।

कुन्ती ने सहमति प्रकट की, 'अच्छी बात है।'

कुन्ती नाचने के लिए खड़ी होगई।

निशा ने कहा, 'दरवाज़ा बन्द कर आऊँ।' और वह बैठक के बाहर चली गई।

अचल के मुँह से निकल पड़ा, 'अलमारी में घुँघरू रक्खी है। बहुत छोटी छोटी हैं। आवाज़ हलकी होती है। निकाल न लूँ?'

कुन्ती के चेहरे पर फिर लाली दौड़ी।

धीरे से बोली, 'निशा के सामने कहना और तभी निकालना।'

कुन्ती के धीमें स्वर में अचल को कोई ऊँची ध्वनि सुनाई पड़ी।

अचल तबलों को ठीक करने लगा। निशा आगई।

तबले ठीक करके अचल ने निशा से कहा, 'यदि ये घुँघरू भी पहिन लें तो कैसा रहेगा?'

निशा ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'उन्हीं से पूछिए। मुझको तो पहिननी नहीं हैं।'

बिना घुँघरू के नाच फीका रहेगा। अचल प्रशंसा की अपेक्षा आलोचना ऐसे नृत्य की अधिक करेगा; उसका प्रदर्शन मनोहर और मोहक शायद ही हो सके। सराहना में अचल की आंखें ढल ढल जावें तब तो कुछ बात है, संशोधन और संवर्द्धन नाम मात्र को ही हो पावें। कुन्ती की कल्पना में यह बात तीव्रता के साथ घूम गई। उसका साहस बढ़ा और उसने कहा,

'हां हां लाइए, कहां हैं? मैं अपने घर से तो लाऊँगी नहीं। जब आप नाचेंगे तो आपको भी पहिननी पड़ेंगीं।'

'इन्हें क्यों !' निशा बोली, 'इनको तो केवल संशोधन और संवर्द्धन करना है।'

'और प्रदर्शन भी,' कुन्ती ने मुस्कराते हुए, दृढ़ता के साथ कहा, 'देखूँ तो मास्टर जी के नृत्य में केवल कारीगरी ही है या लास्य भी।'

मास्टर जी के शब्द पर वे दोनों हँस पड़ीं। उस हँसी के असली कारण को न समझते हुए भी अचल उन दोनों की हँसी का साथ दे गया। कुन्ती के होने वाले नृत्य की मधुर कल्पना ने उसकी हँसी को उन दोनों की हँसी में घोल दिया। अचल घुंघरू निकालने के लिए अलमारी पर गया। निशा ने मुस्कान के साथ कुन्ती पर एक रहस्यमयी चितवन फेरी। कुन्ती ने ओठ सिकोड़े और ठोड़ी दृढ़ की। निशा की ओर न देखकर वह अचल की पीठ को देखने लगी। अचल ने अलमारी से घुँघरु निकाल कर कुन्ती के हाथ में देदी। कुन्ती ने बिना किसी संकोच के घुँघरू पहिन ली।

अचल ने कहा, 'आरम्भ करो।' और वह तबला बजाने लगा। कुन्ती ने घुँघरू को झमकी दी। गीत कोई दूसरा शुरू किया।

अचल ने अनुरोध किया, 'उस गीत को गाओ, और उसी को नृत्य की भाषा में बतलाओ जिसकी तुम पारंगत हो।'

'पारंगत हो !' एक सनद तो कुन्ती को मिल गई।

निशा ने हठ किया, 'उसी में तो तुमने कमाल दिखलाया था कुन्ती। उसी कमाल में अचल बाबू चार चाँद लगाना चाहते हैं। उसी को गाओ।'

अचल ने तबला बजाना शुरू कर दिया और कुन्ती ने गाना। जब गा चुकी तब उसने नृत्य में उस गीत को सार्थक किया।

जैसे ही वह नृत्य के उस अंग पर आई, जिसमें देह की थिरकन उरोजों पर से जाकर ग्रीवा और मुखमण्डल पर लहराती थी और फिर उरोजों पर कुछ क्षण रमकर समा जाती थी, कुन्ती को संकोच हुआ।

उसने निभाया, परन्तु उसमें वह मादकता अचल को नहीं मिली जो उस दिन मिली थी। तो भी वह अंश उसको बहुत अच्छा लगा। उसकी स्मृति ने मादकता को बहुत बढ़ा दिया।

निशा ने संकोच से आंखें नीची करलीं। कुन्ती ने देखा। अचल ने भी। कुन्ती ने उपेक्षा की। अचलने उसके संकोच को कुन्ती की कला की विजय समझा। जब वह नाच चुकी अचल ने उसकी बहुत सराहना की। अनजानें और बिना किसी प्रयत्न के अचल झूठ बोला,

'आज तो कुन्ती, तुमने उस दिन से भी अच्छा गाया और नाचा, यद्यपि साथ के लिए तार का कोई बाजा न था।'

निशा की समझ में नहीं आया। कुन्ती ने सोचा था उस दिन की अपेक्षा आज कुछ कसर रही। उसने अचल की प्रशंसा पी ली। नृत्य की ब्योरेवार समीक्षा से बचने के लिए उसने अचल से पानी मंगवाया। प्यासी थी भी वह।

अचल ने कहा, 'मैं लाता हूँ।'

निशा बोली, 'नौकरानी से मंगवा लीजिए।'

अचल ने इनकार किया, 'भीतर के किसी दूर खण्ड में होगी। और फिर वह मेरे सारे निकम्मेपन की तनख्वाह तो पाती नहीं।'

अचल मुस्कराता हुआ पानी लेने चला गया। एकान्त हो जाने पर कुन्ती ने निशा को आलोचना का मौक़ा नहीं दिया। वह घुंघरू बांधे हुए ही बैठ गई।

'ये कभी कभी पहेलियां में बोलते हैं निशा। मेरे निकम्मेपन की तनख्वाह नहीं पाती! यानी—यानी, क्या मतलब हुआ?' कुन्ती ने कहा।

निशा बोली, 'मतलब में तो कोई बाधा नहीं है। वे कुछ न करें, नौकरानी दिन भर पिसती रही, यह मतलब है। मैं कहती हूँ, फिर नौकर या नौकरानी की ज़रूरत ही क्या है? एक बात तुम्हारे नाच के बारे में कहनी है—कहूं? बहुत दिन से कहना चाहती थी। बुरा न मानो तो कहूं?'

जो बात इस प्रकार आरम्भ की गई हो, वह कहां तक बुरी न होगी ! पर सुननी पड़ेगी।

'कहो, बुरा क्यों मानूंगी ! तुम्हारी बात का बुरा ! पागल हो क्या ! कहो।' कुन्ती मुस्कराई।

निशा ने कहा, 'कभी कभी ऐसा लगता है कि अपने अङ्गों को इतना मत फड़काओ और थिरकाओ तो अच्छा रहेगा। कुछ ज्यादती हो जाती है। माफ़ करना।'

'कोई बात नहीं। परन्तु नृत्य तो सूक्ष्मतम आन्तरिक भावों और भावनाओं की भाषा है। जिसे तुम थिरकन और फड़कन कहती हो वे उस भाषा के शब्द हैं। अचल से पूछ लेना। वे भी यही व्याख्या करेंगे। एक बार की भी था।'

'पुरुष तो इस तरह की व्याख्या करेंगे ही। उनको काम सम्बन्ध में जो लालसा उठती है उसको इस प्रकार का नृत्य उद्दीपन और उत्तेजना देता है।'

'परन्तु हम दोनों के मन में इस प्रकार की कोई सैक्स प्रेरणा नहीं है। हमारी कला केवल कला और सौन्दर्य की उपासना के लिए है। तुमने गाना बजाना क्यों सीखा ?'

'गाने बजाने और नृत्य में बहुत बड़ा अन्तर है। जो लड़कियां गाना बजाना नहीं जानतीं उनके विवाह सम्बन्ध में माता पिता को बड़ी बाधा होती है।'

'कुछ लोग नृत्य भी तो चाहते हैं ?'

'हां, यह ज़रूर है। अचल बाबू तो जिसमें उसके महान प्रेमी हैं।'

'तुम यह चोट क्यों करती रहती हो ? मेरा विवाह अचल के साथ नहीं होगा।'

'मुझको विश्वास दिलाने की ज़रूरत नहीं है। यदि हो जाय तो मुझ को बहुत अच्छा लगेगा।'

'क्यों?'

'क्यों कि तुम दोनों सुखी रह सकोगे।'

'परन्तु बिना प्रेम का विवाह कैसा? मैं तो चाहती नहीं! वे भी नहीं—'

'नहीं चाहते। हो सकता है।'

उसी समय अचल पानी लेकर आया।

बोला, 'मुझको कुछ विलम्ब हो गया। पानी लेने काफ़ी भीतर जाना पड़ा।'

आपको कष्ट हुआ,' मानो कुन्ती की ओर से निशा ने कहा।

'कष्ट हुआ हो या न हुआ हो', कुन्ती जलपात्र हाथ में लेकर बोली: 'प्यासे को पानी मिल जाय तो देने वाले के कष्ट की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता।'

अचल हँसा।

निशा ने मुस्कराते हुए कुन्ती पर एक गूढ़ दृष्टि डाली।

जब पानी पी चुकी, कुन्ती निश्चिन्त सी हो कर बैठ गई। अचल से कहा, 'अब आपका नृत्य हो।'

'अभी लो', उसने उत्साह के साथ सहमति प्रकट की: 'पहले मैं ज़बानी कुछ कह दूँ, फिर उसको व्यवहारिक रूप में दिखलाऊँगा।'

ज़बानी कुन्ती काफ़ी सुन चुकी थी और निशा के मन में नृत्य कला के सिद्धान्तों को सुनने का कोई विशेष कुतूहल न था।

कुन्ती ने कहा, 'सिद्धान्त तो ज़रा लम्बी चीज़ होती है। नाचते जाइए और सिद्धांत की व्याख्या करते जाइए।'

निशा बोली, 'यदि ज़बानी कुछ कहना ही है तो कुन्ती ने जो हाव भाव दिखलाए हैं उनका उदाहरण देकर व्याख्या करिए। यह बतलाइए कि और क्या क्या होना चाहिए था।'

अचल आलोचना नहीं करना चाहता था। उसी समय किसी ने ज़ोर के साथ कुण्डी खटखटाना और 'बाबू जी' चिल्लाना शुरू किया।

क्षोभ के मारे अचल भुरभुरा गया।

बोला, 'नामालूम कौन जान खाने आ गया है। देखता हूँ। अभी आया।'

अचल बाहर के दरवाज़े पर चला गया। कुन्ती और निशा बैठी रहीं।

किवाड़ खोलते ही अचल ने दरवाज़े पर एक भीड़ देखी। उसमें पञ्चम, गिरधारी, तिजुआ इत्यादि थे। उन लोगों के चेहरों से कृतज्ञता टपकी पड़ रही थी। ज़मानत पर छूटकर आए थे। पञ्चम ने दरवाज़े के भीतर प्रवेश करते हुए कहा,

हम लोग सीधे आपकी कोठी पर आ रहे थे, पर भूख लग रही थी और सुधाकर बाबू ने कहा तुम लोगों को मीठा खिलाएँगे। उन्होंने बाज़ार से मिठाई मंगाई। हम लोगों ने खाई। इसी में देर लग गई।'

पञ्चम मकान के और भीतर आया। गिरधारी ने भी प्रवेश किया। दो तीन ने और।

अचल के मन में आया इनको घूंसे मारकर निकाल दूं। परन्तु उनकी कृतज्ञता और चाह का यह बदला वह न चुका सका।

बोला, 'हमको खुशी हुई तुम लोग छूट आए। मुक़द्दमें में कुछ नहीं है। बरी हो जाओगे। चिन्ता मत करो।'

पञ्चम ने कहा सब आपकी कृपा है, अचल बाबू। हम लोग आपके लिए मौक़ा पड़ने पर सिर कटवा देंगे।'

अचल की इच्छा इतनी बड़ी मांग नहीं कर रही थी। यहां से तुरन्त कूच करो, उसकी इच्छा सिर्फ़ यह थी।

परन्तु वे लोग मकान के भीतर धसते से नज़र आरहे थे। अचल को बहुत अखर रहा था। बोला, 'तुम लोग जाओ। मैं काम कर रहा हूँ।'

पञ्चम ने हँसकर कहा, 'बाबूजी हम ऐसे नहीं जाने के। क़सम खाकर आए हैं कि आपकी बैठक में तिजुआ का नाच दिखला कर रहेंगे।'

'अभी नहीं। मैं काम कर रहा हूँ। कल देखा जायगा।'

'कल तो हम लोग घर चले जायंगे। आज ही चले जाते। पर देर हो गई है और मार्ग खराब है। कल ठहर नहीं सकते, क्योंकि बाल-बच्चे हम लोगों के देखने को अकुला रहे होंगे।'

'फिर कभी सही।'

'फिर जाने जिए या मरे—काल करे सो आज कर, आज करे सो अब्ब; पल में परलय होयगी, बहुर करेगा कब्ब।'

'ज़िद मत करो, जाओ।'

दबे हुए ग़ुस्से के मारे अचल का गला भर्रा गया। परन्तु उन लोगों ने उसके ग़ुस्से को नहीं समझा।

गिरधारी ने गिड़गिड़ा कर कहा, 'बाबूजी, यदि बैठक में बहिन जी हों तो हम लोग उनके भी दर्शन करलें। उनको हमारे गांव की स्त्रियों में काम भी करना है। वे तिजुआ का नाच भी देखना चाहती थीं। देखकर प्रसन्न होंगी।'

अब सिवाय इसके कि अचल उन लोगों को धक्के देकर निकाले और कोई उपाय नहीं था। परन्तु वह अपने ही लोगों को धक्के देकर नहीं निकाल सकता था।

अचल बोला, 'तुम लोग न जानें कैसे हो! वक्त बेवक्त कुछ नहीं देखते।'

उसी समय कुतूहल-वश निशा बैठक के कमरे से झांकी। उन लोगों ने देख लिया। पञ्चम और गिरधारी एक साथ चिल्लाए।

'बहिन जी, नमस्ते।' निशा नमस्ते करके बैठक में लौट गई।

पञ्चम ने उत्साह के साथ अपने साथियों से कहा, 'यही हैं बहिन जी। ये जब अपने गांव में पधारेंगीं, तब बहुत बड़ा जलूस निकालेंगे।'

गांव के जलूस की याद करके अचल को जलूस के आगे आगे तिजुआ का नाच,—'फिरकियाँ'—ढोलकी, 'हारमोनिया' इत्यादि याद

आगए। उसका गुस्सा ढीला हुआ और ओठों पर बरबस मुस्कराहट आगई।

पञ्चम इत्यादि ने समझा कि अचलबाबू मान गए। उन्होने नारा लगाया। पञ्चम ने अपनी साफ़ी में से फूलों का एक गजरा निकाला और अचल के गले में डाल दिया। पञ्चम और गिरधारी बैठक के दरवाज़े पर पहुँच गए। अचल उनसे ज़रा ही पीछे था।

अचल के लिए उन लोगों का वहां से निकालना या हटाना असंभव था। थोड़े से पलों में ही सब कुछ हो गया—पञ्चम और गिरधारी बैठक के दरवाज़े में आधे भीतर और आधे बाहर थे। अचल ने समझ लिया कि किसी भी क्लिष्ट परस्थिति को संभालने का धैर्य ही एकमात्र साधन है। उसको उन लोगों से बैठने के लिए कहना ही पड़ा। वे, कुछ बैठक में, और कुछ बैठक के बाहर दरवाज़े पर बैठ गए। पञ्चम ने तिजुआ को बैठक में बुला लिया।

पञ्चम ने कुन्ती को पहिचान लिया। गिरधारी ने भी। दोनों ने आदरपूर्वक नमस्ते की। कुन्ती ने भी नमस्ते की। उस समय उसका पैर कुछ हिला। हिलने से उसको याद आ गई घुंघरू पहिने हुए हूँ। वह बैठी हुई थी। उसने साड़ी से पैर ढक लिए। पैर ढकने के समय घुंघरू के एक दो दाने खनक गए।

जब पञ्चम और गिरधारी ने पहली बार कुन्ती को देखा था तब वह पैर में कोई ज़ेवर नहीं पहिने थी। आज कुछ पहिने है। क्या पहिने है? क्यों पहिने है? पञ्चम, गिरधारी और उनमें से कई इधर उधर आंख घुमाकर उन लोगों की निरख सी करने लगे।

पञ्चम ने अपने को भद्र प्रमाणित करने के लिए कहा, 'उस दिन जब मैं गिरधारी के साथ बैठक में आया था ये बहिन जी नहीं थीं। क्या ये भी पढ़ती हैं?'

अचल ने दबे हुए गुस्से को और दबाया। केवल 'हां' में उसने उत्तर दिया।

गिरधारी ने प्रश्न किया, 'दोनों बहिन जी हमारे गांव में कब पधारेंगी? तिजुआ यह रहा जो जलूस में आगे आगे चलेगा।'

कुन्ती हँस पड़ी। निशा ने भी साथ दिया, परन्तु वह कारण नहीं समझी।

कुन्ती ने हँसते हुए जवाब दिया, 'कह नहीं सकती। आजकल अवकाश नहीं है। किसी दिन आयंगी हम लोग।'

इस आश्वासन पर निशा को शंका हुई।

'यह तिजू भाई क्या काम करते हैं?' निशा ने पूछा।

'खेती पाती करते हैं', पञ्चम ने समस्या पर प्रकाश डाला: 'और जिन दिनों में खेती किसानी का काम कम होता है दूसरे गांवों में नाचने निकल जाते हैं। इतना अच्छा गाते और नाचते हैं कि लोग प्रसन्न हो–होकर इनको पैसे देते हैं। हमारे दलके काम करने वालों में हैं। आज इनका नाच दिखलाने को ही हम यहां आए हैं। गांव में जलूस के आगे तो ये नाचेंगे ही।'

निशा को जलूस और जलूस के अनोखे रूप का चित्र समझ में आ गया और कुन्ती के हँसने का कारण भी। वह मुस्कराई।

निशा ने कहा, 'अचल बाबू थोड़ा सा सही। लोक–नृत्य का भी थोड़ा सा नमूना अच्छा रहेगा।'

अभी थोड़ी देर पहले कुन्ती नाच चुकी थी। निशा के मन में क्या तुलना करने की वासना है?

पञ्चम ने तिजुआ की तरफ़ इशारा किया। वह सिमटकर ज़रा पीछे हटा। फिर मुस्कराता और अंगड़ाता हुआ सा खड़ा हो गया। अचल के भीतर कामना ने गहरी हिलोड़ मारी, 'या तो ये लोग इस समय न आए होते या ये दोनों आज न आई होतीं तो अच्छा होता। मैं क्या

जानता था कि ये शैतान कचहरी से छूटकर यहां मुजरा करने आयंगे, । नहीं तो कुन्ती और निशा को पहले घर भिजवा देता या मां के पास भीतर पहुंचा देता ।' .

परन्तु, उनको यदि अचल भीतर नहीं भेज सका तो वे स्वयं क्यों नहीं चली गईं ?

कुन्ती को पसीना सा आ रहा था । यदि इन लोगों ने घुंघरू मांगी तो ? खैर कोई बात नहीं निभा लिया जायगा । पर इस तरह दबी हुई, ठुमी हुई कब तक बैठी रहूंगी ? इस प्रकार एक आसन बैठना उसके लिए दूभर था । परन्तु थोड़ी देर में ये लोग चले जायंगे—तब तक असह्य न हो पायगा । कुन्ती ने किसी प्रकार तुरन्त सन्तोष कर लिया ।

बोली, 'हां, होने दो । देखूँ कैसी फिरकियां लेते हैं ?'

तिजुआ का संकोच बिदा ले गया । आँख में चमक आ गई । ज़रा विस्फारित हुईं । उसने तपाक से कहा,

'बहिन जी उन फिरकियों के लिए स्थान का ज़रा ज्यादा सुभीता चाहिए । वैसे ही थोड़ा सा नाचे देता हूं । बाकी, जब आप हमारे गांव में पधारेंगी दिखलाऊँगा ।'

स्थान में ज़रा अधिक विस्तार बनाने की मंशा से तिजुआ ने अपने साथियों को दबने और पीछे हटने का इशारा किया । वे इधर उधर सिकुड़ गए । अचल भी थोड़ा सा हटा । निशा भी । कुन्ती को भी हटना पड़ा । हटते समय वह पैर को साड़ी से ढकना भूल गई । घुंघरू का एक भाग उघर गया । अचल ने देख लिया । फिर वही विचार उठा, कुन्ती और निशा आज यहां क्या आईं, मुसीबत आई ! न आतीं । क्यों आईं ? क्या यही समय बैठक में आने के लिए उपयुक्त समझा ? कुन्ती के चेहरे पर यकायक नज़र गई । उसके एक पैर की घुंघरू काफ़ी उघरी हुई थी और वह तिजुआ की तरफ़ देख रही थी । पैर को ढके रहने की भी चिंता नहीं ! उससे किस तरह कहे कि पैर ढकलो ? या, क्या कहे ? फिर तुरन्त उसकी

निगाह पञ्चम, गिरधारी इत्यादि की आंख पर गई—ये लोग घुँघरू को तो नहीं लख रहे हैं ? पीतल की घुंघरू। चांदी की होती तो गांव वाले समझ लेते कि गहने का कोई नया संस्करण है। परन्तु वह पीतल की थी, और इतनी चमकदार और खैरे रंग की भी न थी जो सोने के रंग में छिप जाती। अचल ने भीतर ही भीतर अपने को कोसा, फिर अपने को दृढ़ किया। हम लोग भद्र घरानों की लड़कियां, स्त्रियां, को नृत्य सिखलाने के पक्षपाती हैं। इससे उनको बल, स्फूर्ति, लास्य, सब मिलता है। गांव वाले यदि इस उद्देश्य को नहीं समझ पाते हैं तो इसमें हमारा दोष ? मालूम हो जाय इन लोगों को कि कुन्ती नाचती है तो बला से। मेरी बैठक में नाचने के लिए आई है ! तो क्या हुआ ? अपनी एक सहपाठिनी के साथ आई है। इतनी दृढ़ता पर भी अचल को अपने भीतर कुछ खला।

तिजुआ ने सिर से साफ़ा उतारा,। उसको साड़ी की तरह लपेटा और सिर को अधखुला ढक लिया। मूछें, लकीरों वाला चेहरा, बीड़ी पर बीड़ी और चिलम पर चिलम पीने के कारण सांवले ओठ। इन सबके बीच में मुस्कराने का प्रयत्न, जो अपेक्षित कला प्रदर्शन का स्वागत सा कर रहा था !

पञ्चम ने रंग को गहरा करने के लिए अचल से विनय की, 'बाबूजी, इसको घुँघरू दे दीजिए तो बहुत अच्छा रहेगा।'

घुँघरू के शब्द का उच्चारण करते ही कुन्ती का हाथ उसके पैर पर बेअन्दाज़ पहुंचा। घुँघरू पर फिसला। बहुत हलकी छन्न हुई। हाथ साड़ी के छोर को पकड़े हुए रह गया, घुँघरू को ढाकने अर्ध सफल प्रयत्न में, या शायद उसमें शक्ति ही नहीं रही थी। घुँघरू की छन्न कुन्ती को किसी शूल की ठन्नाहट के साथ छिदी और अचल को किसी आहत के चीत्कार सी लगी। पञ्चम और गिरधारी, और लगभग सभी गांव वालों की आंख घुँघरू पर जा पड़ी। उनको कुतूहल था। कुन्ती का चेहरा फक था। अचल घुँघरू देने से इनकार करना चाहता था। उसके ओठ तक नाहीं आ चुकी थी।

कुन्ती का साहस लौटा, परन्तु जर्जर रूप में। नाचती हूं तो क्या हुआ ! ये कौन होते हैं जिनके लिहाज़ में डूबूं ? ये लोग इस कलापूर्ण नृत्य की महत्ता को क्या जानें ? ये लोग पुरुष होकर नाचें और मैं स्त्री होते हुए भी न नाचूं ! इनका लाज संकोच करूँ जो स्त्री की स्वतन्त्रता के केवल नाम से ही परिचित हैं !! इनका जिनका नेतृत्व करना है !!! जब तक हर बात में पुरुष को मात न दिया जाय तब तक उसकी आत्मा स्त्री की उच्चता की क़ायल ही न होगी। जो कुछ हुआ, होगया। न होता तो अच्छा था ! परन्तु अब तो उसको शान के साथ ही निभा ले जाना चाहिए।

कुन्ती ने घुँघरू खोलने के लिए पैर पर हाथ बढ़ाए। गर्दन नीची करनी पड़ी। भीतर की कसक चेहरे पर आ गई थी। घुँघरू खोलने के समय उस कसक को नीचा सिर करके दबाना पड़ा। थोड़ी देर में निश्चल दृष्टि और दृढ़ धैर्य के साथ बात भी कर सकूँगी। थोड़ी देर में सब विलीन भी हो जायगा। यदि ये लोग हमारे इस जीवन-क्रम को पसन्द नहीं करते तो मुझको ऐसे लोकमत की परवाह नहीं है।

अचल ने भी इसी में निर्वाह देखा। जो कुछ करे सिटपिटा कर क्यों करे ? डरने वाले को पग पग पर मुश्किल है। जो देखो सो छाती पर होले भूनने के लिए उद्यत हो जाता है। मेरा मन शुद्ध है और कुन्ती का भी हो तो किसी के भी भ्रम का क्या भय ! और—मन शुद्ध न भी हो तो शुद्ध अशुद्ध के निर्णय की क्या ये लोग कोई अदालत हैं ? आचार विचार की क्या ये कोई तराज़ू हैं ? या बांट हैं ? कुन्ती निस्सन्देह इस समय कुछ कठिनाई में पड़ गई है। इसकी सहायता करनी चाहिए।

अचल ने स्थिति को संभालने की ग़रज़ से कहा, 'कुन्ती ने घुँघरू इस लिए पहिनी थीं कि देखें पैरों में कैसी लगती हैं।'

कुन्ती ने घुँघरू खोलते हुए सिर ऊँचा किया आंखों में हलकी लाली थी। ओठ का सम्पुट दृढ़। निशा पर निगाह डाली—फिर तुरन्त अचल पर। धीरे से गला साफ करके बोली,

'मैंने नाचने के लिए घुँघरू पहिनी थी।'

'आप नाचती भी हैं क्या ?' पञ्चम के मुँह से सहसा निकल पड़ा।

गिरधारी के मुँह से, 'ऐं !'

कुञ्जों का ज़रा सा सिर हिल गया। तिजुआ मुस्कराया।

अचल ने मुट्ठी कसी। दृढ़ता के साथ कहा, 'नृत्य बहुत बड़ी कला है। प्राचीन काल में इसको बहुत ऊँची पदवी मिली थी। बीच में ज़माना पतन का आ गया और यह कला भले घरानों से निकल कर बुरी जगहों में पहुंच गई। अब फिर उसका उद्धार किया जा रहा है। क़ायदे के साथ इसके कुछ शिक्षालय भी खुल गए हैं—'

'रहने दीजिए ये बिचारे क्या जानें,' कुन्ती ने टोका।

अचल ने सोचा, 'मैंने ठीक समय पर अपनी आवाज़ को उठाकर कुन्ती को दृढ़ता दी।'

पञ्चम ने कहा, 'हम लोग सा'ब सचमुच कुछ नहीं जानते। आप लोगों में बैठकर कुछ सीखेंगे। आप बड़े लोग हैं। बहुत पढ़े लिखे हैं। आपको सब शोभा देता है।'

कुन्ती ने घुँघरू खोलकर रख दीं।

निशा ने घड़ी की तरफ़ देखा। उसने कुन्ती के पक्ष को और संभालने की कोशिश की,

'तुम्हारे गांव की स्त्रियां भी तो नाचती होंगी ? लोक नृत्य होते हैं। ब्याह शादी के समय भी नाच होते हैं।'

'नहीं बहिन जो', तिजुआ ने अपनी जानकारी प्रकट करते हुए उत्तर दिया, 'गांव में स्त्रियां अपने घरों के भीतर नाचती हैं और केवल स्त्रियों के सामने। पुरुषों के सामने तो पतुरियां वतुरियां बुलाई जाती हैं नाचने के लिए। सो भी होली के मौके पर; और, पैसे वाले ही उन्हें बुलाते हैं। वैसे दूर दूर तक मुझको ही बुलाया जाता है।'

'पतुरियाँ वतुरियाँ' का शब्द अचल को बहुत खटका, कुन्ती को तो ऐसा लगा जैसे कान सन्न रह गए हों। निशा ने फिर घड़ी की ओर देखा। पञ्चम के अन्तर्मन को वह शब्द भला लगा। कुछ आल्हाद हुआ। परन्तु उसने तिजुआ को डाटा,

'तू आया बड़ा जानकार ! पहिन घुँघरू और कर शुरू !!'

निशा ने कहा, 'अब समय हो गया है, अचल बाबू।'

कुन्ती ने कहा, 'चलो निशा।'

पञ्चम ने हठ किया, 'ज़रा ठहरिए, बहिन जी। थोड़ा सा तिजुआ का काम देखे जाइए।'

गिरधारी बोला, 'ऐसी फिरकियां किसी स्कूल में नहीं सिखलाई जाती होंगीं।'

'चुप,' अचल ने तेज़ होकर कहा, 'उनका घर जाने का समय हो गया है। तुम्हारा नाच मुझही को देखना पड़ेगा या यह ज़बरदस्ती चाहे जिसके साथ करोगे ?'

वे लोग इस फटकार पर सहम गए। कुन्ती को अचल का यह समर्थन अच्छा लगा। परन्तु झिड़की द्वारा उत्पन्न किए गए आतंक की जगह वह अपने मीठे बर्ताव द्वारा स्थापित श्रद्धा को उन लोगों में छोड़ जाना चाहती थी।

निशा से बोली, 'इन लोगों के आग्रह का आदर करना चाहिए। चार पांच मिनिट में क्या बिगड़ता है ! देखलो और फिर चलो।'

गांव वालों की सहम चली गई और उनके चेहरे कुछ मुक्त हो गए। वे लोग अचल की ओर देखने लगे।

निशा अधीर थी। परन्तु उसने विवशता अनुभव की। उसको 'हां' करनी पड़ी।

कुन्ती को अवगत हुआ उसके और निशा के थोड़ी देर बैठे रहने से गांव वालों का मानसिक स्तर ऊँचा होगा और श्रद्धा के प्रभाव से इतने

नव जायंगे, सोचेंगे कि इन निर्भीक लड़कियों के लिए घुँघरू पहिनकर, पुरुषों के सामने नाचना कौनसी बड़ी बात है। वे अपने भ्रम की पाश से मुक्त हो जायंगे।

तिजुआ ने घूँघट डाला और विविध प्रकार मटकना चटकना शुरू किया। गांव वाले हर्ष-मग्न हुए। अचल ग्लानि में डूबने लगा। कुन्ती कभी कभी क्षीण मुस्कराहट द्वारा मानो यह कह रही थी—बिलकुल भद्दा है, परन्तु तुम लोगों का मन रखने के लिए सहन कर रही हूं। निशा को लग रहा था मानो उसके छहों भाई और पिता भी दरवाज़े पर खड़े खड़े देख रहे हों कि वह किस प्रकार के कलाकारों के बीच में बैठी है। पसीने में डूबी जारही थी। कुन्ती अपने हठ और अपनी निर्भीकता से अपने को उभार रही थी।

तिजुआ के घूँघट में से कभी कभी उसकी मूछें दिखलाई पड़ जाती थीं। उस समय अचल की ग्लानि और बढ़ जाती थी। उसे लगता था कुन्ती और निशा कब बैठक को छोड़ कर चली जायँ। उसने घड़ी पर एक तेज़ नज़र डाली और ज़रा सा कुन्ती की ओर देखा। वह समझ गई।

उसने निशा से कहा, 'अब चलो।'

वे दोनों उठ खड़ी हुईं।

तिजुआ ने घूंघट उघाड़ लिया। हाथ जोड़कर बोला, 'एक फिरकी देखली जावे।'

कुन्ती ने मुस्कराहट के साथ कहा,—जैसे कुछ दान कर रही हो,—'अब बहुत समय हो गया है। कभी तुम्हारे गांव में आऊँगी तो देख लूंगी।'

'हठ मत करो जी, बड़ी फिरकी तुम्हारी,' अचल ने हलकी सी फटकार दी।

नमस्ते करके कुन्ती मुस्कराती हुई चली गई। निशा उसके पीछे पीछे।

उस फटकार के ऊपर कुन्ती, शायद, अपने लिए उन ग्रामीणों में कुछ श्रद्धा छोड़ गई।

तिजुआ का नाच थोड़ी देर होता रहा। अचल विरत सा हो रहा था, परन्तु उसने अभिरुचि का आडम्बर दिया। नृत्य की समाप्ति पर मुक़द्दमें के सम्बन्ध में कुछ चर्चा हुई। थोड़े समय उपरान्त अचल ने एकान्त पाया। उस सांझ की घटनाओं का सही रूप आंकने में उसको कठिनाई पर कठिनाई का सामना करना पड़ा, तब भी भ्रमों से छुटकारा न मिला। एक जगह मनको सान्त्वना मिल रही थी—कुन्ती निर्भीक और दृढ़ है; उसकी जैसी स्थिति में यदि निशा होती तो शायद अचेत हो जाती।

[१३]

'राजनैतिक डकैती' डालने वालों का अभी मुक़द्दमा खतम न हुआ था, परन्तु ज़मानत देने के कारण सुधाकर का नाम सरकारी विभागों की ठेकेदारी की सूचियों से काट देने की आज्ञा हो गई। रेलवे और स्थानिक बोर्डों की सूचियों में उसका नाम अब भी था। घर में पैसे और आराम की कमी न थी। कमाई करने का हौसला मन में था। इसलिए सुधाकर दबा नहीं।

अपने पुराने सांझिया के साथ काम करने का सुभीता उसको अब भी था। अलग नाम से काम न भी करता तो कोई बात नहीं थी। जेल जाने की इच्छा से निरत हो चुका था इसलिए अपने भीतर बड़प्पन महसूस करने के लिए कुछ सूचियों से नाम का काटा जाना कोई बुरा उपकरण नहीं रहा। उसने गर्व के साथ सिर ऊँचा किया। जिन लोगों को खबर लग गई थी उनमें भी विज्ञापन किया। सुनने वालों ने मन में इस त्याग को बहुत महत्व नहीं दिया, परन्तु सरकार के ओछेपन को कोसा खूब। सुधाकर ने दृढ़ निश्चय किया, 'रुपया कमाने के प्राप्त साधनों को तत्परता के साथ काम में लाना चाहिए और, नए साधनों की खोज में लगे रहना चाहिए।'

घरेलू जीवन को रुचिर बनाने के लिए और, शायद, उसकी ओर से निश्चिन्त होने के लिए केवल ब्याह की कसर थी।

उसकी फूफी को यह कसर ज्यादा खटका करती थी। घर सूना सा रहता है। बहू की चांदनी और मुस्कानों से ही भर सकता है। बिना गृह-लक्ष्मी के घर की लक्ष्मी फीकी है। ज़िन्दगी के थोड़े से दिन रह गए हैं, रामनाम जपूँगी और घर की ज़िम्मेदारियों से छुटकारा पाऊँगी। इस अवस्था में तो घर भर में बच्चों की किलकारियां सुनाई पड़नी चाहिए थीं जिससे मेरा दिन रात सुख से भर जाता।

असल में बुआजी का मन नौकर नौकरानियों के ही शासन से सन्तुष्ट न था। जिसको दुनियां घर की मालिकिन कहे उस पर भी मालिकी की हविस इन अनुरोधों का कारण अधिक थी। बहुएं घर में आकर झगड़ा भी कर सकती हैं—परन्तु, ऐसी बहू को भी तो देखना है जो मेरे क़ानून क़ायदे को तोड़े और मेरी बांधी हुई मर्यादा को टसमस करे! एक भावना और थी—सुधाकर यद्यपि अपना व्यवसाय मन लगा कर कर रहा था, परन्तु क्या ठीक था कि फिर जेल की तरफ़ रुख न फेर दे? विवाह इसका अच्छा इलाज था। बुआजी ने एक दिन अवसर निकाल कर सुधाकर से हठ किया।

'सुद्धी, मैं अब और नहीं मानने की।'

'क्या नहीं मानने की, बुआजी?'

'ब्याह करना होगा?'

'क्यों? कौन सा काम अटक गया है?'

'सभी काम अटके पड़े रहते हैं। मैं कहां तक संभालूँ? अपने परलोक को भी बनाऊँ या तुम्हारी पहरेदारी और मुनीमी करते करते ही चल बसूँ?'

'अरे अभी बहुत दिन जिओगी। ऐसी क्या जल्दी पड़ी है?'

'हां जिऊँगी! तुम्हारी बेगार करते करते मर जाऊं!! यही चाहते हो न? इस इतने बड़े घर में अकेले भड़भड़ा जाती हूँ। सूना सूना लगता है। बहू आजायगी तो दिप जायगा।'

'कौन कहता है कि दिन भर भजन-पूजन न करो? जो थोड़ा सा समय बचे उसमें नौकरों को काम बतला दिया करो और रात को मौज में सो जाया करो।'

'हां सो जाया करो, जैसे तुम बेफ़िकरे हो!'

'मैं तो बेफ़िकरा नहीं हूँ। अपने काम में मस्त रहता हूँ।'

'इस बीच में मैं मर गई तो पछताओगे।'

'तुम नहीं मरोगी और न मैं पछताऊंगा।'

'क्यों रे क्या इसी ज़िद के लिए मैंने इतना बड़ा किया?'

'तो हुकुम हो बुआजी, क्या करूँ, कहां अर्ज़ी पुर्ज़ी दूं?'

'देख, मेरे साथ ठठोली मत करना नहीं तो चांटे लगाऊंगी। समझता होगा बड़ा हो गया है।'

'नहीं बुआजी, बिलकुल पांच बरस का हूं। पर यह तो बतलाओ किसके सामने घिघियाऊँ पतिताऊँ ब्याह के लिए?'

'देख मेरे साथ मुँह ज़ोरी मत कर। तू घिघियायगा या लड़की वाले? जियाराम बिचारे कितने फिरे सम्बन्ध के लिए, पर तूने हाथ ही नहीं धरने दिया। ज़रा मुझसे हामी तो भर फिर देख देहली को कितने बड़े बड़े लोग घिसे डालते हैं। तू घिघियायेगा! हमारे पुरखों के धरम करम अभी बहुत जीते जागते हैं। ऐसी हेटी बात मत कभी करना। जियाराम की लड़की कैसी गौरी जैसी है। बड़ी सीधी और शीलवाली। कैसा मौक़ा हाथ से खोया! मैं ऐसी बहू को पाऊँ तो ऐसा घड़ूँ, ऐसा सँवारू…'

'कि दूसरा ब्रह्मा बन जाऊँ।'

'अच्छा मैं जाती हूँ। तू मुझको रुलाने को फिरता है।'

'नहीं बुआजी, हाथ जोड़ता हूं। पर यह तो बतलाओ, आज इतना हठ क्यों कर रही हो?'

'तो कैसे काम चले? सुबह होते ही बाहर काम पर चले जाते हो। दुपहर थोड़ा सा खाया, आधी घड़ी मुश्किल से आराम कर पाया कि फिर काम पर निकल गए! शाम को दो कौर मुँह में डाले सिनेमा देखने चले गए। आए, हिसाब लिखा सो गए! मेरे साथ बात करने का समय ही नहीं मिल पाता।'

'तो अब काम पर जाऊं? बात होगई।'

'जब तक ठीक ठिकाने की बात नहीं हो जायगी मैं काम पर नहीं जाने दूँगी।'

'मैं ठहरा हूँ। किसके साथ सम्बन्ध होने जा रहा है?'

'मैं सब तय कर लूंगी। तू पक्की हामीं तो भरदे। बस।'

'यानी सूत न कपास कोरी से लट्ठम् लट्ठा!'

'मैं एक हफ्ते के भीतर ढूँढ़ दूंगी। भर हामी।'

'भरदी हामीं, बस? या और कुछ?'

'बस अब जा काम पर।'

'कुछ मैं भी कहूं बुआजी?'

'कह ना! मैंने क्या रोका है? तेरे मन की जान लूं तो मेरा काम सहज हो जायगा, क्योंकि आजकल बिना लड़का लड़की से पूछे काम भी तो नहीं चलता।'

'खूब चल सकता है। गुड्डा गुड़ियों का ब्याह कैसे हो जाता है?'

'हँसी मतकर। मैं मूर्ख नहीं हूँ। संसार देखे हुए हूँ। अपनी बात कह।'

'हँसी नहीं करता हूँ। कहता हूँ। जिसके साथ सम्बन्ध होने वाला हो पढ़ी लिखी तो हो ही। हिन्दी का दर्जा चार या मिडिल नहीं; काफ़ी पढ़ी लिखी हो। सीना पिरोना मेरी चिन्ता की बात नहीं है, वह तुम जानो। गाना बजाना अवश्य जानती हो।'

'गाना बजाना तो ग्रामोफ़ोन, रेडियो और सिनेमा में भी सुन लेते हो, पर खैर यह तो रिवाज़ ही चल पड़ा है और ऐसी ही बहू घर में आयगी जिसने यह सब सीखा हो। सीना पिरोना भी लड़कियाँ जानती हैं। नहीं जानती हैं तो रसोई का काम। सो अब उसकी ज़रूरत भी कितनी रह गई है?'

'रिवाज़ तो और भी बहुत से चल पड़े हैं और वे बुरे भी नहीं हैं।'

'जिन अच्छे घरों की लड़कियां बी० ए०, एम० ए० पास न हों तो उनको अच्छे लड़के भी न मिलें?'

'अच्छे लड़के खरीदे भी तो जाते हैं।'

'तुम दान दहेज़ को खरीदना कहते हो !'

'दान दहेज़ तो भिखारियों और कोढ़ी अपाहिजों को दिया जाना चाहिए। मैं कहता हूं जिनको दान दहेज़ नहीं लेना है उनको उसकी जगह बी० ए०, एम० ए० मिल जाय तो क्या बुरा है ?'

'उससे क्या हो जायगा ? मैं पूछती हूं।'

'जीवन को, अपने काम वग़ैरह को, काफ़ी सहायता मिलती रहती है।'

'अच्छी बात है। यह भी हो जायगा। पर मैं सोचती हूँ क्या बी० ए०, एम० ए० पास करने से ही अकल को तिलक छाप लग सकती है ! वैसी तो और सब मूर्ख होती होंगी ?'

'नहीं बुआजी। मैं हाथ जोड़कर क्षमा चाहता हूं। मेरी मां और तुम कोई भी बी० ए०, एम० ए० की हवा के पास तक नहीं फटकीं, परन्तु बी० ए०, एम० ए० को बरसों सीख देने की क्षमता मां में थी और तुम में है। लेकिन इस ज़माने में जब हम लोग स्त्रियों को पुरुषों की बराबरी का पद देने पर ज़ोर लगाते हैं तब घर में एक स्त्री अवश्य ऐसी होनी चाहिए। वह स्त्रियों के आन्दोलन का भी काम कर सकेगी।'

'घर फूक तमाशा देखना इसी को कहते हैं। पर खैर तेरा हठ पूरा हो जायगा। और कुछ ? अब जा काम पर। हफ्ते के भीतर कुछ न कुछ कर लूंगी।'

'बुआजी, एक रिवाज़ और चल गया है। बुरा न मानो तो कहूं ?'

'कहो ना, कौन सा रिवाज़ है ?'

'यदि लड़की नाचना भी जानती हो तो कैसा रहेगा ?'

'नाचती खेलती तो हम लोग भी थीं, परन्तु आपस में, स्त्रियों के सामने। अब सुनती हूँ सयानी लड़कियां पुरुषों के सामने निर्लज्ज होकर नाचती मटकती हैं। मेरा तो सिर शरम के मारे नीचा पड़ जाता है। कैसे हिम्मत पड़ती होगी ?'

'नृत्य तो एक बड़ी कला है बुआजी।'

'भाड़ में जाय वह कला जिसको दिखलाने के लिए स्त्री पुरुषों के सामने बंदरिया सी कुदकती फुदकती फिरे।'

'सो बात नहीं है बुआ जी। यह कला शरीर को फुर्ती देती है और रोगों को निकट नहीं आने देती।'

'तो पुरुषों के सामने ही नाचने से ये गुण मिलते हैं!'

'नहीं—सो तुम ठीक कहती हो, बुआजी। अपने घर में आने पर लड़की पुरुषों के सामने कैसे नाचेगी! और फिर तुम्हारी शिक्षा दीक्षा का भी तो उसके ऊपर प्रभाव पड़ेगा।'

'प्रभाव तो, बेटा, ऐसा नहीं ऐसा पड़ेगा कि नाच के सब पैंतरे भूल जायगी और जिस तरह बहू बेटी को घर में रहना चाहिए उसी तरह रहेगी।'

'तब ठीक है मुझे और कुछ नहीं कहना है। हफ्ते के भीतर मैं भी तुमसे शायद कुछ चर्चा करूंगा।'

'मुझे बड़ा हर्ष होगा, बेटा। मैं तो ढूंढ़ खोज करूँगी ही, पर यदि तुम्हारे मन की कोई लड़की निगाह में हो, या आ जाय, तो मुझको बतलाने में संकोच मत करना। अब तुम बड़े हो गए हो। शरारत में कहते थे पांच वर्ष का हूँ। सचमुच पांच वर्ष के नहीं हो। कहने में हिचकना मत।'

'नहीं हिचकूँगा, पर कहीं ऐसा न हो कि जितना हठ तुमने किया है, उतना मुझको करना पड़े।'

'पागल हो गए हो क्या! जाओ काम पर। अब और अधिक नहीं रोकूँगी।'

सुधाकर काम पर चला गया। बुआ आनन्द-विभोर हो गईं।

सुद्धी जिसको चुनेगा वह गोरी पीली होगी। उसकी आंख नाक सब अच्छी होगी। बी० ए०, एम० ए० पास होगी तो क्या सब अदब क़ायदा ताक पर उठाकर रख देगी? मैं भी तो कुछ हूं। ज़रा ज़रा सी ग़लती

पर टोकूँगी, होश ठिकाने लग जायंगे। और, बी० ए०, एम० ए० पास करने से लड़कियां फूहड़ थोड़े ही हो जाती हैं। नाचना सीखा होगा तो घर में नाच लेगी। मैं देखूँगी। बाहर तो नाचती फिरेगी नहीं।

आत्म गौरव ने बुआजी को काफ़ी हर्ष प्रदान किया। और, एक आंसू भी।

[१४]

निशा का विवाह हो गया। वर सुरूप था, पढ़ा लिखा और धनी घराने का। उसके पीले चेहरे पर ओज था। क्या स्वास्थ्य और बुद्धि का द्योतक ? देखने वालों ने ऐसा ही समझा। उसकी आंखों में दमक थी जो चेहरे को तेज अधिक देती थी और सौन्दर्य कम।

विवाह के अवसर पर कुन्ती से नृत्य के लिए कहा गया। उसने इनकार कर दिया।

निशा ने ताना दिया, 'तो सीखा काहे के लिए है ?'

'अभी कसर है। और सीखूंगी।'

'मैं पूछती हूँ, किस वास्ते ?'

'स्वान्तः सुखाय। अपनी खुशी के लिए।'

'ओहो ! कला के लिए कला !! तो क्या आगे अकेले में नाच कूद कर मस्त हुआ करोगी ?'

'नहीं तो। तुम जब लौटकर आओगी तुम्हारे सामने नाचूंगी।'

'अकेली मेरे सामने ?'

'नहीं तो ?'

'नहीं तो ! क्या बात हो गई है ? विरक्त सी कैसी हो गई हो ?'

'विरक्त तो कभी नहीं हूंगी। साहस हीनता, विक्रम शून्यता यदि विरक्त का दूसरा नाम है तो उसका तीसरा नाम मौत है। यदि जीवन में साहस और विक्रम नहीं है तो जीवन में फिर कुछ है ही नहीं।'

'फिर इस अवसर पर साहस और विक्रम की इतनी कमी क्यों ?'

'जी नहीं चाहता और कुछ नहीं।'

'शायद उस दिन से डर गईं जिस दिन गांव के वे लोग आ गए और तुमको घुंघरू पहने देख लिया ?'

'डरी तो नहीं थी। तुम जरूर सकपका गई थीं जैसे कोई पाप कर रही हो।'

'झूठ नहीं बोलूंगी। अवश्य कुछ घबरासी गई थी। तुम्हारी हिम्मत ज़रूर स्थिर सी दिखलाई पड़ी थी। पर इस अवसर के इनकार का कारण समझ में नहीं आ रहा है। लोगों में तुम्हारी नृत्य-कला की कीर्ति है। देखने के लिए लरज रहे होंगे। तुम्हारी नाहीं से सब के सब निराश होंगे।'

'मैं नाचती, परन्तु मां ने मना कर दिया है।'

'हमारे यहां नाचने से?'

'नहीं। उन्होंने कहा है बाहर कहीं भी प्रदर्शन मत करो कुछ दिनों।'

'यह घर तो बाहर के अर्थ के भीतर नहीं है। क्यों कहा उन्होंने? उस दिन का हाल तो उनको मालूम नहीं हुआ होगा?'

'मुझको उसकी परवाह नहीं थी। मालूम भी हो जाता तो कोई अपराध तो मैंने या तुमने किया नहीं था।'

'अच्छा! मैं अब समझी!! माता जी सोचती होंगी कि बाहर नाचने का समाचार यदि फैलेगा तो विवाह सम्बन्ध में कुछ अड़चनें आ जायंगी। है भी ठीक। अभी अपना समाज इतना आगे नहीं बढ़ा है कि उसकी बिलकुल उपेक्षा की जा सके।'

'मुझको ऐसे समाज की बहुत चिन्ता नहीं है। वह इस विषय में आगे बढ़ेगा या नहीं बढ़ेगा, मुझको नहीं मालूम। शायद ही कभी बढ़े यह धारणा उस दिन से मन में हो रही है जिस दिन उन देहातियों को बैठक में घुस पड़ते देखा। परन्तु माता जी की बात का कुछ लिहाज़ मन में आया, और—'

'और क्या? और किसका?'

'और किसी का नहीं।'

'हिश! बतला नहीं रही हो। क्या अचल बाबू ने कुछ कहा?'

'हां कहा था। तुम जानती हो मैं उनका सम्मान करती हूँ।'

'उन्होंने क्यों कहा? वे तो आज़ादी के बहुत पक्षपाती हैं।'

'कह नहीं सकती। परन्तु पहले संकेत में और फिर उन्होंने स्पष्ट कहा।'

कुन्ती जब कुछ कहना आरम्भ करती थी तो रुकना कम जानती थी। कहती चली गई।

'कहते थे सुपरिचित पुरुषों के सिवाय और किसी के सामने नहीं नाचना चाहिए। समाज की कुछ परवाह करनी ही पड़ेगी, क्योंकि उसी में रह कर चलना है। देहात के समाज में और शहर के समाज में तो अन्तर है ही; शहर के शहर में ही एक एक समूह और एक एक खंड में काफ़ी व्यवधान है। जान पड़ता है वे किसी मेम्बरी के लिए खड़े होंगे, इसलिए कुछ विशेष सावधानी बर्तने लगे हैं। घुंघरू उन्होंने अपनी अलमारी में से हटादी है मुझसे घुंघरू बांधकर नाचने के लिए फिर कभी नहीं कहा और न अपना ही प्रदर्शन उन्होंने घुंघरू बांधकर दिखलाया। वैसे ही सिखलाते बतलाते रहे हैं। उन्होंने कुछ ढारें और टवनें तो बहुत ही बांकी बतलाई हैं, जब लौटकर आओगी, तब दिखलाऊंगी।'

निशा ने ज़रा इधर उधर दृष्टि करके कहा, 'जान पड़ता है इन दिनों में अचल बाबू का तुम्हारे ऊपर अधिकार कुछ बढ़ गया है।'

कुन्ती तिनककर बोली, 'अधिकार! कैसा अधिकार? उनका कभी कोई अधिकार मेरे ऊपर न था और न है। वे सिखलाते हैं मैं सीखती हूँ। वे स्नेह करते हैं, मैं आदर करती हूँ। मैं शिक्षक और शिष्य तक का सम्बन्ध अधिकार का नाता नहीं मानती। और उनमें भी इतनी महानता, या उदारता कहलो, है कि वे इस पवित्र सम्बन्ध के मार्ग से कभी राईरत्ती इधर उधर डांवा डोल होते नहीं दिखते।'

'तो भी एक दिन तुम्हारा उनका ब्याह होगा।'

'हुं! मैं प्रणय की भीख मांगूगी!! क्यों? यही मतलब है न तुम्हारा?'

'नहीं, अभी तो संसार भर में स्त्रियों की कहीं भी इतनी दुर्गति नहीं हुई है कि वे इस तरह की भीख मांगें। वे तुमसे स्वयं कहेंगे किसी दिन।'

'स्वयं उन्होंने सैकड़ों बार सैकड़ों जगह कहा है कि विवाह नहीं करूँगा। तुमको मालूम है, फिर भी ऐसा क्यों कहती हो ?'

'यदि उन्होंने किसी दिन तुमसे चर्चा की तो।'

'कभी नहीं। यदि की तो पहले मुझको कुछ दिनों दर्शन शास्त्र पढ़ना पड़ेगा, फिर अपने माता पिता की इच्छा मालूम करनी पड़ेगी।'

'हां, माता पिता की इच्छा का जानना तो ज़रूरी है ही, पर जब स्वयम्वर होता होगा तब माता पिता की इच्छा का प्रसंग किस स्थल पर आता होगा ?'

सो तो स्वयम्वर वाले जानें, परन्तु जिन देशों में स्वयम्वर की परिपाटी आजकल भी जारी है वहां माता पिता या बड़े बूढ़ों की सम्मति का प्राप्त कर लेना अच्छा समझा जाने लगा है, क्योंकि स्वयम्वर करने वाले दम्पतियों ही में तो सम्बन्ध-विच्छेद, तलाक़ के मामले उन देशों में बहुधा होते हैं। स्वयम्वर करने वाले आगा पीछा ज़्यादा नहीं सोच सकते। मैंने इस विषय पर एक पुस्तक और कुछ लेख पढ़े हैं।'

'अरे! यह कहो तय्यारी बहुत दिनों से हो रही है।'

'अच्छा निशी, तुम्हीं बतलाओ, इस बात में बुराई कहां है ? तुमने अपने ब्याह में अपनी इच्छा का कहां तक पालन या अनुगमन किया है ?'

'मैं तो उनको पहले से जानती भी न थी। नाम सुना, फिर कुछ हाल। सबसे पीछे बड़ी भावज ने फोटो हाथ में दिया। मान लो मैं इनकार भी कर देती तो फिर क्या करती ? माता पिता ने काफ़ी ढूंढ़ खोज की। माली हालत जान समझकर, फिर सम्बन्ध किया। मैं मीनमेख निकाल ही क्या सकती थी ! और, क्या कोई भी क्या मीनमेख निकालती ! मीनमेख निकालो तो अपना वर खुद ढूंढ़ लो और फिर जीवन में ठोकरें खाओ अपने लिए सबसे अधिक सुख और सुविधा का मार्ग यही है कि बड़े बूढ़ों के चुने हुए वर को इनकार करने के पहले निन्नानवे बार अपने विचार में तोलो।'

'तो तुम भी मुझ से सहमत हो। मानलो कि अचल ने प्रणय की चर्चा मुझसे की और मैं सहमत हो गई। मानलो कि माता पिता सहमत न हुए, तब या तो मुझको पूर्णविद्रोह कर डालना चाहिए या माता पिता की राय पर चलकर सम्बन्ध की बात को दो टूक तोड़ डालना चाहिए। तो ऐसी नौबत आने ही क्यों दी जाय? न वे प्रेम की बात कभी करेंगे और मैं तो जीभ पर लाने ही क्यों चली!'

'सुनती हूं कुन्ती, कि प्रेम ऐसे सीधे मार्ग पर नहीं चलता। उसकी पगडंडियां हैं और बहुत निराली।'

'हम-तुम दोनों इस मामले में अनुभवशून्य हैं। अब तुमको अनुभव मुझसे पहले हो जायगा।'

'हां, सो तो ज़ाहिर ही है, परन्तु मेरे अनुभव से तुमको क्या फ़ायदा होगा! मुझको माता पिता ने पति दिया। हम दोनों एक दूसरे को प्रेम करेंगे ही। संसार में जीवन को और जीवन में संसार को खपाते मिलाते रहेंगे। जैसा कि लगभग सब स्त्री-पुरुष करते हैं।'

'सो तो ठीक ही है। यह अनुभव तो सार्वभौम है। आर्थिक परिस्थतियां और सामाजिक योजना पर निर्भर है। मैंने एक पुस्तक में सैक्स, काम–प्रसंग, पर पढ़ा है कि वासना के प्रवाह के ठंडे और धीमें पड़ जाने पर परस्पर, एक दूसरे को, अनुकूल बनाने के सिवाय और कोई उपाय नहीं रह जाता है। बहुत अधिक संख्या वाले दम्पतियों का जीवन और संसार इसी प्रकार चलता है। असाधारण स्त्री-पुरुषों के जीवन ही असाधारण होते हैं।'

निशा हँस पड़ी। बोली, 'कुन्ती, तुम साधारण नहीं हो। तुम असाधारण हो। तुम्हारा जीवन भी असाधारण रहेगा।'

कुन्ती ने कहा, 'ओ हो ज्योतिषी जी! भांवर के पड़ते ही इतना बड़ा परिवर्तन! ऐसा विश्लेषण!! मेरा जीवन कैसा असाधारण रहेगा? तुम्हारा मतलब है किसी दिन अचल बाबू कह बैठेंगे—मैं तुमसे प्रेम करता

हूं, कुन्ती, मेरी पत्नी बन जाओ। मैं कह दूंगी, अचल मैं तुमको चाहती हूं तुम मेरे पति हो जाओ। बस हो गए हम दोनों पति पत्नी। मैं असाधारण जो ठहरी। अरी पगली, यदि कभी सुने कि कुन्ती ने अपने माता पिता की मर्ज़ी के खिलाफ़ ब्याह किया, तो उसकी नाक काट लेना, उसकी गर्दन क़लम कर देना। और ज़्यादा तुमसे क्या कहूँ? तुमको मेरे हठ में तो विश्वास है ही!'

'सोतो मैं जानती हूँ। परन्तु कुन्ती, कोई भी स्त्री साधारण या असाधारण नहीं ढाली गई होगी। साधारण असाधारण हो सकती है और असाधारण साधारण।'

'कहतो दिया कि देख लेना।'

'अच्छा, कहना, तुम्हारे हृदय में अचल के लिए प्रेम नहीं है?'

'पहले एक बात तुम मुझको बतलाओ। यदि तुम्हारी चलती, और सब बातें अनुकूल पड़जातीं, पिता जी सहमत हो जाते, तो तुम अचल के साथ विवाह न करतीं?'

'अब तो यह सवाल बिलकुल व्यर्थ है।'

'मैंने पूछा है—बहस की बात जो है। मानलो, हम लोग कालेज की वाद-सभा में बात कर रही हैं।'

'वाह! वाह!! कैसे मानलो?'

'वही पुरातन पन्थ! पतिव्रता बनने का डरावना ढोंग!! अब बहस भी नहीं कर सकतीं!!! सब आज़ादी ग़ायब!!!!'

'नहीं, बहस तो कर सकती हूँ। बहस में कोई डर नहीं। मैं निश्चय के साथ कह सकती हूँ कि यदि मुझसे पूछकर ब्याह की बात चलाई जाती तो मैं अचल के साथ विवाह करने से कतई इनकार कर देती। ऐसे दार्शनिक, नपे तुले और शायद रूखे आदमी के साथ तो मेरा निभाव कभी न होता! अब तुम मेरे सवाल का जवाब दो।'

'एक बात और पूछती हूँ। तुम्हारे सम्बन्ध की चर्चा सुधाकर से चली थी। पिताजी उनके साथ सम्बन्ध करना चाहते थे। तुम्हारा जी उनके साथ ब्याह करने को चाहता?'

'बहस की ही बात तो है—मैं ब्याह कर लेती। अब और कोई सवाल मत करना। मेरी बात का उत्तर दो।'

'मेरे हृदय में अचल के लिए क्या है यह मैं पहले ही बतला चुकी हूं। केवल इतना और कहती हूँ कि वह जो कुछ भी है, कम भी हो सकता है और बढ़ भी सकता है।'

'सच कहती हो? बिलकुल यही है?'

'बिलकुल सच कहती हूं। ठीक यही है। यह ज़रूर है कि अचल की गहराई नापने के लिए कभी कभी कुछ क़दम बढ़ा देती हूँ। निरीक्षण करने में आनन्द आता है ये किस जगह डिगमिग होते हैं।'

'उस तरह का नृत्य क्या इसी जांच-पड़ताल के लिए किया था?'

तुम्हारे यहां जो किया था वह इस नियत से नहीं किया। उनकी बैठक में जो किया था उसमें यह नियत शामिल थी।'

'और तुम स्वयं उस नियत से अपनी वासना को दूर रख सकीं?'

'मुझको तो विश्वास है।'

'और अचल पर क्या प्रभाव पड़ा होगा?'

'यदि उन्होंने सोचा होगा तो कहते होंगे कि विलक्षण है यह। इतने उद्दीपन की काररवाई करने पर भी, और बातचीत में भी कभी कभी विचित्र सा बर्ताव करती हुई भी, इतनी तटस्थ, इतनी संयत और इतने प्रबल शील वाली है!'

'तुमने यह नहीं बतलाया कि उनके ऊपर क्या प्रभाव पड़ा होगा?'

'उनके बर्ताव ही से पता चल सकता है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुंची कि वे संयमी हैं—पहले ही तुमको बतला चुकी हूँ।'

'कोई उनसे पूछे और वे बतलाएँ तभी इसका ठीक ठीक पता चल सकता है।'

कुन्ती ने हँसकर कहा, 'तुम पूछ देखना किसी दिन ससुराल से लौटने पर।'

निशा हँस पड़ी।

बोला, 'तुम भी खूब हो, कुन्ती। जब उन दिनों में नहीं पूछा तो अब क्या पूछूँगी। तुम्हीं न सवाल करो एकाध दिन ?'

कुन्ती और भी ज्यादा हँसी।

'मुझको तो तुमने बिलकुल पागल समझ रक्खा है, निशी।' हँसी रोककर पूछा, 'कबतक आजाओगी ?'

निशा ने उत्तर दिया, 'जल्दी आने की कोशिश करूँगी। मैं परीक्षा पास करना चाहती हूँ। वे बी० ए० पास हैं, मैं उनसे कम नहीं रहना चाहती।'

'वहां तो पढ़ना लिखना संभव नहीं है। हँसी खेल में दिन जायगा। शाम को सिनेमा। उसके बाद तो पढ़ता कौन है ?'

'नहीं मैं थोड़ा बहुत अवश्य पढ़ती रहूंगी। इस साल पास अवश्य करना है।'

'लौटकर आओ तो गांवों में कुछ राजनैतिक काम भी करेंगीं हम तुम।'

'समय मिला तो। अचल ने कहा है क्या ?'

'हां, कहते थे।'

'थोड़ा सा उसको भी देखूँगी। परन्तु तुमको और मुझको उस काम के लिए थोड़ा सा ही समय मिल सकेगा।'

कुछ घन्टों के उपरान्त निशा की बिदा होगई और कुन्ती अपने घर चली गई।

[१५]

शरद ऋतु का सबेरा था। सूर्य की मुलायम किरणें चिकने पत्तों और दूब की ओस पर रिपट रही थीं। ठंडी ठंडी धीमी हवा चल रही थी। चिड़ियों की चहल-पहल बिखर गई थी और मनुष्यों की बढ़ गई थी।

सगाई की पक्कयात होने के बाद ही सुधाकर अपनी फूफी के पास पहुँचा। उसने कहा,

'बुआजी, समय थोड़ा है। बरात तो छोटी सी ही ले जाऊँगा, परन्तु अपने घर जेवनार बड़ी करनी होगी। और धूमधाम कुछ नहीं।'

बुआ ने मन की तरंग को ओठों में दबाकर कहा, 'मेरे भाई का जब ब्याह हुआ था इतनी धूमधाम हुई थी कि सारा शहर हिल उठा था। कितनी फुलवाड़ और आतिशबाज़ी थी! पर वह ज़माना निकल गया। अब जेवनार भी बड़ी न होगी क्या? तुम सूची बना लो, बाकी की मैंने जानी। कोई चिन्ता मत करो। पर बरात छोटी ले जाओगे! कैसे बनेगा? इतने जान-पहिचान वाले, साथी-संगी, ब्योहारी हैं! किस किसको छोड़ोगे?'

बुआ कंजूस थी, पर ऐसे अवसरों पर जी खोलकर खर्च करने की तरफ़दार थी। सुधाकर कंजूस नहीं था, परन्तु वह बरात के मेले पर रुपया खर्च करना व्यर्थ फेंक देने के समान समझता था।

बोला, 'अबतो बुआजी इसका रिवाज़ हो गया है। जो लोग बड़ी बरात ले जाते हैं या ब्याहों में धूमधाम करते हैं उनको हम लोग गंवार कहते हैं।'

'जैसा ठीक समझो,' बुआजी ने अपनी साध को तुरन्त ठंडा करके कहा: 'परन्तु देखो बेटा बरातियों की हँसी खुशी का सामान ज़रूर कुछ करना।'

'हो जायगा।'

'क्या हो जायगा? कुछ गाने बजाने का, भांडों का प्रबन्ध कर लेना।'

'हम लोगों ने वेश्याओं का नाच, भांडों का बेहूदापन, फुलवाड़, आतिशबाज़ी इत्यादि सब बंद कर दिया है। लड़कों की एक वादन-मंडली बुलालेंगे और लड़कियों की नृत्य मंडली।'

'क्या ! लड़कियों की नृत्य मंडली कैसी ?'

'तुमको क्या खबर बुआजी, संसार कहां कहां फैल पसर गया है। कुछ लड़कियों ने और स्त्रियों ने भी नाचने की अपनी मंडलियां बनाई हैं। वे ऐसे अवसरों पर नाचने गाने के लिए बुला ली जाती हैं। इस काम के लिए उनको रुपया दिया जाता है। शिष्ट घरों की स्त्रियों को इससे काफ़ी सहायता मिल जाती है। समाज की रुचि वेश्याओं की ओर से मुड़ जाती है और मनोरञ्जन भी काफ़ी मिल जाता है।'

'हे भगवान, मैं यह सब क्या सुन रही हूं ? भले घरानों की लड़कियों की क्या मति मारी गई है जो वे वेश्याओं का काम करने लगी हैं ?'

'अरे हिश ! तुम क्या कह रही हो, बुआजी ? नाचने वे लोग हर जगह थोड़े ही जाती हैं।'

'किसी भी अनजान जगह में जाना हर जगह जाने के बराबर है। इन लड़कियों को क्या और कोई पेशा नहीं मिल सकता है ?'

'अरे यह कोई पेशा नहीं है। अपने अवकाश के समय में वे ऐसा करती हैं। पढ़े लिखे लोगों की लड़कियां हैं। अपने बड़े बूढ़ों के साथ आती हैं।

'आग लगे उन बड़े बूढ़ों में ! तुम्हारे समाज को फैलने पसरने के लिए क्या यही दिशा मिली राम, राम।'

'मैं तो इसमें कोई बुराई नहीं देखता।'

'मुझको इसमें सिवाय बुराई के और कुछ दिखता ही नहीं है। क्या जो लोग उन लड़कियों का नाच देखने का चाव करेंगे वे अपनी लड़कियों का नाच दूसरों को दिखलाने को तय्यार हो जायंगे ! क्या ज़माना आ गया है !'

'और जो तय्यार हों तो उनके सुधारवाद और साहस की सराहना करोगी या नहीं बुआजी ?'

'मैं तो उनकी मूर्खता को गालियां दूँगी।'

'और जो तुम्हारी बहू ही नाचने गाने की शौक़ीन हो और इस विद्या में उसने नाम पाया हो तो ?'

'तुमको कैसा लगेगा, बेटा ?'

'मैं तो स्त्रियों की स्वतन्त्रता का, और पुरुषों के समान पद देने का मानने वाला हूँ।'

'तो इसमें समानपद की कौन सी बात है ! पर खैर देखा जायगा। आने तो दो बहू को घर में।'

बुआ के भीतर हर्ष की उतनी तरंग नहीं रही। कुल का अभिमान, शासन और अनुशासन—यह सब ज़रूर हिलोरें सी मारता रहा।

सुधाकर ने घर को सुयोजित करना शुरू कर दिया बैठक ठीक की। अलमारी की पुस्तकों को झाड़ा पोंछा। अन्य कमरों की सजावट को बदला।

अधेड़ अवस्था वाली फूला नाम की नौकरानी को बुलाया।

'फूला, बुआजी बहुत काम न करने पावें। यह ब्याह कहीं उनको बीमार न करदे। मेरी मां से बढ़कर हैं। जानती है न ?'

'मैं क्या करूँ सुद्धू बाबू, जब वे किसी काम पर जुट जाती हैं, तब किसी की सुनती थोड़े ही हैं।'

दूसरी ओर मुँह फेरकर सुधाकर ने कहा, 'जा, जा, उनकी मदद कर आगे से या तो मेरा पूरा नाम लिया कर या अकेला बाबू कहा कर।'

फूला चली गई।

[१६]

शरद संध्या की लम्बी छाया अभी पड़ने को थी। धूप में सुनहला पन आचला था, परन्तु पूरा सोना तो उसको घंटे डेढ़ घंटे बाद ही बरसाना था। अचल अपनी साफ़ सुथरी बैठक में आगया और तबले निकाल कर रख लिए। एक ओर एक ड्राइंग कापी पेन्सिल और रबड़ रक्खी थी। वह चित्रकारी सीखने पर तुला हुआ था। आसन का दृढ़ था और लगन का पक्का, इसलिए हाथ जल्दी सधने लगा।

तबलों को ठीक किया ही था कि पैरों की आहट सुनाई पड़ी। आहट पहिचानी हुई थी। ओठों पर मुस्कराहट आई और चली गई। घड़ी पर आँख गई कि कुन्ती कमरे में आगई। उसके चेहरे पर किसी विशेष भाव का लक्षण न था। ठोड़ी अवश्य तनी हुई सी थी।

'आज कुछ विलम्ब हो गया,' कुन्ती ने कहा।

'यों ही कुछ मिनिट का। कोई बात नहीं। मैं अपनी, कापी में कुछ उल्टी सीधी रेखाएं बनाता रहा,' अचल बोला।

उसने कापी कुन्ती के हाथ में देदी।

कुन्ती बैठकर उलटने लगी। अचल ध्यान के साथ उसके चेहरे को देखने लगा।

दोनों में पहले की अपेक्षा घनिष्ठता कुछ बढ़गई थी। अचल का मध्यमवर्ती मार्ग कुछ अधिक चौड़ा हो गया था—कुन्ती की ओर।

कुन्ती ने सीधी, वक्र और वृत्ताकार रेखाओं को देखते हुए कहा, 'इस क्रम से आप चार छः वर्ष में कुत्ते, बिल्ली चूहे इत्यादि के चित्र तो बनाने लगेंगे।'

'बड़ी क़दर की मेरे अभ्यास की तुमने कुन्ती,' हँसकर अचल ने कहा, 'चार छः वर्ष में तो मैं बड़े बड़े चित्रकारो से होड़ लगाने की हविस रखता हूं।'

कुन्ती—'लक्षण तो ऐसे नज़र नहीं आते। मैंने सुना है कि सीधी तिरछी रेखाओं का अभ्यास किए बिना ही तुरन्त आकृतिओं का खीचना शुरू कर देना ज्यादा अच्छा है।'

अचल—'यानी मनुष्य की आकृति तुरन्त खीचना शुरू करदे! और मनुष्य की आकृति बन भी जायगी !!

कुन्ती—मैं अगर सीखूँ तो करके दिखला दूँ।'

अचल–'अच्छा किसी ड्राइंग मास्टर या चित्रकार से पूछूँगा। अभी तो एक पुस्तक से कुछ सबक़ लिया है।'

कुन्ती—'जैसे संगीत पुस्तक से सीखा जाता है?'

अचल—'थोड़ा बहुत तो आही जाता है स्वर-लिपि पर अधिकार करले तो फिर सहज हो जाता है।'

कुन्ती—'ताल भी?'

अचल—'हां कुछ कुछ, पर परीक्षा में पास होने लायक़ नहीं।'

अचल हँस पड़ा। कुन्ती थोड़ी सी मुस्कराई।

अचल ने कहा, 'तुम्हारा ताल ज्ञान तो अब बहुत अच्छा हो गया है।'

कुन्ती ने पूछा, 'तो अब बन्द न करदूँ? थोड़ा बहुत अभ्यास घर पर कर लिया करूँगी।'

कुन्ती की चितवन ज़रा तिरछी थी। अचल के मन में उल्लास हुआ। उसने उत्तर दिया,

'जिसका यह अर्थ है कि तुम अब आया न करोगी। मैं कहता हूँ अब बेला बजाना सीखो चाहे इसराज लेलो। मैं दोनों बजा लेता हूं। इनमें से किसी एक बाजे की सहायता से तुम अकेले में बैठकर संगीत का पूरा रसपान कर सकती हो।'

कुन्ती के चेहरे पर उदासी की एक हलकी छाया आई। उसने कहा, 'आज कुछ सिद्धान्त की बात सुनना चाहती हूँ।'

'और मैं तुम्हारा नृत्य देखना चाहता हूं कोई विघ्न बाधा नहीं है, अचल बोला गांव का कोई भी बीच में नहीं आकूदेगा।'

कुन्ती ने एक निश्वास को दबा कर कहा,'नाचूँगी थोड़ा सा, गाऊँगी भी, पर पहले कुछ सिद्धान्त की बात।'

'जिसे तुम रूखा कह उठती हो। मुझको दार्शनिक, साधू सन्त और न जानें क्या क्या। कौन से सिद्धान्त की बात कर उठूँ ?'

'हमारी वाद–सभा में कला के ऊपर तर्क होगा। कोश में कला का अर्थ लिखा है, परन्तु उससे सन्तोष नहीं होता। आप कला की क्या परिभाषा करेंगे।'

'वही जो कोषों में मिली है। एक और मिली है। वह है—कला उस कारीगरी को कहते हैं जो मन को उन कल्पनाओं और विचारों की सेवा करके आकृष्ट करती है जो उस कला के बाहर की हैं और साथ ही सौन्दर्य की भावना को उन सन्धानों के द्वारा जाग्रत करता है जो कला में स्वयं निहित हैं।'

'इनमें से अधिक महत्व किसका है ?'

'तुम तो मेरी परीक्षा सी ले रही हो! अधिक महत्व का सवाल ही नहीं है। कला अपने ही गुण की सेवा आदर्शों को भेट करती है और इस क्रिया द्वारा उन आदर्शों को हृदय में ला बिठलाती है, और साथ ही अपने रस के सन्धानों द्वारा सौन्दर्य को सुमन चढ़ाती है। पर हां, हैं दो पहलू इस एक बात के। वे मनुष्य की अलग अलग समय की वृत्ति पर निर्भर हैं।'

'और कला के लिए कला क्या है ?'

'एक सुन्दर वाक्य है और कुछ नहीं। स्वान्तः सुखाय कुछ हो सकता है, पर कला के लिए कला तो निरर्थक है। बिना किसी प्रेरणा के कला का विकास हो ही नहीं सकता।'

'आपने गाना, बजाना और नाचना भी किसी उद्देश्य से सीखा ?'

'अन्त में किसी को रिझाने के लिए।'

'और चित्रकारी क्यों सीखने जा रहे हैं ?'

'प्राकृतिक दृश्यों के चित्र बनाऊँगा, भावों, कल्पनाओं और आदर्शों को चित्रित करूँगा। और मनुष्यों के भी चित्र बनाऊँगा।'

'अच्छा, मैं संगीत का थोड़ा सा अभ्यास करके जाऊँगी।'

'तुमने यह तो पूछा ही नहीं कि मनुष्यों में किस का चित्र पहले बनाओगे ?'

'बतलाइए। मैंने सोचा इसका क्या पूछना।'

'पहले तुम्हारा बनाऊँगा।'

'क्यों ?'

'क्योंकि मेरी इच्छा है। उसे बनाकर तुम्हें भेंट करूँगा। मुझको अच्छा लगेगा।'

'पर मुझको भी तो अच्छा लगे।'

'तुम आज उदास सी क्यों हो ?'

'बिलकुल नहीं। आप कुछ गाना वाना सुनना चाहते हैं या बातचीत करना चाहते हैं ?'

'मेरे लिए दोनों अच्छे हैं और दोनों को चाहता हूँ। पहले क्या हो यह तुम्हारी मर्ज़ी पर है।'

'तो पहले गाऊँगी। आप इसराज ले लीजिए। ताल नहीं चाहती।'

'और यदि पहले थोड़ा सा नृत्य हो जाय ? अथवा, गायन और नृत्य साथ साथ ?'

'न, बैठकर ही गाऊँगी। नाचने का विचार छोड़ दिया है।'

'पर मैं नाच अवश्य देखूंगा।'

'कदापि नहीं। गाना सुनना हो तो सुन लीजिए।'

'अच्छा, अच्छा ! जैसा ठीक समझो।'

कुन्ती के मन का काम करने में अचल को उत्साह हुआ। उसने अलमारी में से इसराज निकाली, आवरे में से खोली, मिलाई और

बजाना शुरू कर दिया। मिली हुई इसराज पर जैसे ही गज फिरा कुन्ती की आंखों के डोरे लाल हो गए। अचल ने लक्ष नहीं किया। कुन्ती ने गाया—

'मुनि जन निकट बिहँग मृग जाहीं।
बाधक बधिक विलोक डराहीं॥

अचल इसराज अच्छी बजाता था। कुन्ती का गला बहुत मीठा था। अचल ने तन्मय होकर बजाया। कुन्ती थोड़ी देर आंख मीच कर गाती रही।

यकायक उसका गला रुँध गया। आंखों से आंसू बह पड़े। उसने साड़ी के छोर से मुँह ढक लिया।

अचल ने इसराज को एक ओर रख दिया, अचरज और हड़बड़ाहट के साथ बोला, 'कुन्ती!'

कुन्ती ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिसक रही थी।

'कुन्ती! यह क्या?' अचल ने घबराहट के साथ पूछा।

कुन्ती खड़ी हो गई। आलमारी के पास जाकर पीठ फेरली। आंसुओं को पोछती रही। अचल ने देखा उसकी सारी देह कांप रही है।

अचल भी खड़ा हो गया। उसके पास जाने के लिए बढ़ा। कुन्ती ने फटे हुए गले से कहा, 'वहीं बैठिए।'

अचल खड़ा रह गया।

बोला, 'मेरी समझ में नहीं आरहा है, कुन्ती, तुम क्यों दुखी हो। दृढ़ होकर इतनी कातर क्यों हो रही हो? क्या बात है? मैं जानने के लिए अत्यन्त चिन्तित हूँ। क्या किसी ने तुमको दुखाया है?'

कुन्ती ने कठोरता के साथ अपना दमन किया। जहां बैठी थी, वहीं आकर बैठ गई। उसके नेत्र लाल थे और ओठ सूखे।

'थोड़ा पानी पिऊँगी,' कुन्ती ने कहा।

अचल तुरन्त पानी लेने चला गया।

कुन्ती ने ओठ दबाए। भौंहें सिकोड़ीं। मुट्ठियां कसीं। गर्दन हिलाकर सिर को झटके दिए और तनकर बैठ गई। फिर ढीली पड़ गई। अचल पानी ले आया। कुन्ती ने मुँह धोकर थोड़ा सा पानी पिया। पानी पीकर मुस्कराई। मानो वह मुस्कराहट उस गत दृश्य पर पर्दा डालने के लिए ओठों पर आई हो।

बोली, 'आश्चर्य है मुझको आज क्या हो गया। इस चौपाई के भीतर कुछ ऐसी करुणा, कुछ ऐसी दया छिपी हुई है कि बस आंसू उमड़ पड़े और मैं मूर्ख बन गई।'

अचल बहुत उदास और चिन्तित था। इस बात से उसको बिलकुल समाधान नहीं मिला। इस चौपाई के चित्र पर इतना रो गई!

अचल ने कहा, 'इस चौपाई के एक शब्द पर भी मेरे मन में तो कुछ नहीं उमड़ा। तुम्हारा और इसराज का स्वर एक होजाने के कारण मुझको तो ऐसा लगा कि गीत और तुम्हारा गायन अपने ही गुणों द्वारा सौन्दर्य को जगाकर उसकी पूजा कर रहे हैं।'

रूखी मुस्कराहट के साथ कुन्ती बोली, 'और मुझको ऐसा लगा कि गीत, गायन और इसराज के स्वर आदर्श की सेवा द्वारा मानसको जगा रहे हैं।'

'कौनसा आदर्श?' अचल ने पूछा।

कुन्ती के ओठ चिर चिराए। उसने भौंहें सिकोड़ कर गले के नीचे कुछ उतारा। ज़रा ज़ोर से खांसी और बोली, 'आपकी परिभाषा के एक साथ दो रूप हैं। आपतो आदर्शों के भक्त हैं न?'

'ज़रूर।'

'मैं भी आदर्श-भक्त हूँ।'

अचल की समझ में नहीं आया। कुन्ती आज पहेलियों में क्यों बात कर रही है! क्यों पहेलियां सी बूझ रही है?

'मैं ज़रा भी नहीं समझा। मुझको बहुत क्लेश हो रहा है। बतलाओ तुम रोई क्यों? मैं तुमको रोते कभी नहीं देख सकूंगा। तुम्हारा एक एक

आंसू मेरे हज़ार हज़ार रक्तकण के बराबर है। तुम कुछ नहीं जानतीं, कुछ नहीं समझतीं।'

कुन्ती ने फिर एक हिलोड़ को दबाया। गले को सँभाला। उसके मुँह से बहुत धीमें स्वर में निकला,

'आपका जीवन में क्या लक्ष्य है? एम० ए० पास करने के बाद आप क्या करेंगे?'

अचल ने सोचा मैं कुछ ज्यादा कह गया। उत्तर दिया, 'सोचता हूँ क़ानून पढ़ूँगा, कभी सोचता हूं व्यवसाय करूँगा, या चित्रपट सम्बन्धी कोई काम, या अखबार नवीसी, या प्रोफ़ेसरी, या चित्रकारी—'

कुन्ती यकायक हँस पड़ी—जैसे शरदऋतु की वर्षा के तुरन्त उपरान्त सूर्य की किरणें बादल फोड़कर निकल पड़ी हों।

विचित्र सी हंसी, परन्तु अचल को सुहावनी लगी। उसकी चिन्ता भी कुछ कम हुई। शायद, रो पड़ने का कोई बड़ा कारण न था। उसने जो कारण बतलाया शायद वही ठीक हो। परन्तु किसी आदर्श के लिए मुंह लुका कर रोने की क्या ज़रूरत?

कुन्ती ने हँसते हुए कहा, 'या का तो आपने ढेर लगा दिया। सूची समाप्त हो गई या उसमें अभी कुछ बाक़ी है?'

अचल भी हँस पड़ा। बोला, 'हां, हां, सूचीपत्र में अनिश्चय बाक़ी है।'

कुन्ती की हँसी चली गई। केवल मुस्कराहट ओठों पर रह गई।

अचल ने एक क्षण पीछे कहा, 'मैं पास करने के बाद देश का कुछ काम करना चाहता हूँ। एकाध साल काम करने के बाद फिर निश्चय करूँगा।'

'तो आपके जीवन को स्थिर होने में अभी दो एक वर्ष की देर है?' कुन्ती ने प्रश्न किया।

अचल उछल पड़ा। हर्ष के मारे उसका चेहरा खिल गया।

'कुन्ती, !' अचल ने आश्चर्य प्रकट किया: 'तुमने मेरे मन की बात कैसे जानली ? मैंने बहुत दिन हुए तभी यह संकल्प कर लिया था। इसी लिए मैं ब्याह शादी की चर्चा से अलग रहा! जीवन में स्थिर होते ही ब्याह करूँगा।'

'किसके साथ ?' सहसा कुन्ती के मुँह से निकल पड़ा। वह बहुत पछताई। पछतावे की हूल सी कलेजे में गड़ी। नाक से एक फुफकार निकली। गंभीर होकर तुरन्त बोली, 'पर इस समय तो यह सवाल बेकार है। उस समय—'

अचल ने वाक्य को पूरा नहीं होने दिया। मध्यवर्ती मार्ग से जैसे किसी ने उसको उठाकर बाईं ओर फेंक दिया। उसके मुँह से भी सहसा निकला,

'तुम्हारे साथ। मैंने आज तक तुमसे एक अक्षर भी इस विषय पर नहीं कहा। सोचता था उसी समय निश्चय को प्रकट करूँगा। तब तक तुम्हारी भी परीक्षा हो जायगी और मेरी भी। मैं भी थोड़ा सा देश कार्य कर चुकूँगा और तुम भी। चित्र कला सीखने की मेरी साध्य भी तुम्हीं हो। मेरे जीवन की साधक, कला की साधना, मेरे संगीत की स्वर और तानों की अलंकार—'

कुन्ती और भी अधिक गंभीर हो गई। उसने टोक दिया, 'आप क्या इतने असंमयी हैं ?'

'क्यों ?' अचल ने अबाधगति से उत्तर दिया, 'इसमें असंयम कहां है ? अथवा शायद थोड़ा सा है। मुझको यह बात आज से बरस डेढ़ बरस पीछे कहनी चाहिए थी। परन्तु आज मन की किसी स्वयं-सक्रिय क्रिया द्वारा जीभ से फिसल पड़ी। इस क्रिया को मनोविज्ञान में कहते हैं—क्या कहते हैं ? हु—औटो इरोटिक। नहीं यह तो शरीर के अंगों की क्रिया का नाम है। अच्छा खैर। मैं वचन देता हूँ कुन्ती कि इस बरस डेढ़ बरस के भीतर आगे कभी नहीं कहूँगा। केवल आज के क्षण अपवाद रूप हैं। कुन्ती, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। तुम मेरे जीवन की प्राण हो—।'

कुन्ती ने तीक्ष्ण स्वर में कहा, 'इस भाषा को बन्द करिए, और ध्यान के साथ सुनिए, मेरा विवाह आपके साथ नहीं हो सकेगा—'

अचल ने फिर टोका, 'अवश्य होगा। मेरा अन्तर्तम जानता है कि तुम मुझको चाहती हो। मैंने तुमको और निशा को बहुत पहले चीन्ह लिया था। मैं जानता था कि तुम मेरी जीवन संगिनी बनोगी।'

अचल खड़ा हो गया।

कुन्ती ने बैठे ही बैठे धीरे से कहा, 'असंभव है। मेरी सगाई हो चुकी है।'

लहराते हुए पैरों को दृढ़ करके अचल ने बैठे हुए स्वर में और रीती सी दृष्टि से पूछा,

'कब ? किसके साथ ?'

बहुत धीमें स्वर में उत्तर मिला, 'आज सवेरे। सुधाकर के साथ।'

'ओफ़ !' अचल के मुँह से निकला। उसके पैर लड़खड़ा गए और धम से गिर पड़ा।

कुन्ती घबराकर उसके सिरहने कूद कर आगई। साड़ी के छोर से उसके मुंह पर हवा करने लगी। अचल के माथे पर पसीना आ गया। और कुन्ती के सिर से तो टपकने ही लगा।

अचल को जल्दी चेत आ गया। वह उठ बैठा। हाथों से पसीना पोंछा। आंखें मलीं। गले को खांसी से साफ़ किया। फिर पागलों जैसी निगाहों से इधर उधर देखने लगा।

'अचल बाबू, संभलो,' कुन्ती ने सावधान किया।

'हां' अचल ने कहा, और उसको फिर मूर्छा आने को हुई।

कुन्ती तुरन्त बोली, 'अचल बाबू धीरज धरो। मैं यदि विवाह करूँगी तो आपके साथ करूँगी। मैं सगाई को तोड़ दूँगी।'

अचल को मूर्छा नहीं आई। वह अपने कुर्ते से हवा करने लगा। कुन्ती अपना आंचल पसार कर हवा करने के लिए उसके ज़रा पास आने को हुई।

अचल ने हाथ का संकेत करते हुए कहा, 'ठहरो। कुन्ती, तुम अपनी प्रतिज्ञा का पालन नहीं कर सकोगी। यह सगाई क्या तुम्हें जतला कर की गई है?'

'हां', कुन्ती ने उत्तर दिया।

अचल कांपते हुए स्वर में बोला, 'तुम उसी समय प्रतिवाद नहीं कर सकीं, यह स्पष्ट है।'

कुन्ती ने भी कांपते हुए स्वर में कहा, 'मैं अपने माता पिता का अपमान नहीं कर सकती थी। दूसरे, आपने कभी भी अपने को प्रकट नहीं किया। मुझको आपकी गहराई का पता न था।

'तुम रोई क्यों थीं?'

'क्योंकि इस बैठक में आकर फिर आमोद-प्रमोद नहीं करना था। उसके स्मरण से आंसू आ गए थे। मैं निर्बल पड़ गई थी।'

'और अब सबल हो गई हो! कुन्ती मैं तुमको तुम्हारी ही निगाह में नीचे नहीं गिरने दूंगा।'

अचल खड़ा हो गया। उसके पैर कांप रहे थे। परन्तु लड़खड़ा नहीं रहे थे।

कुन्ती ने चिन्ता के साथ अनुरोध किया, 'कहीं फिर न गिर पड़ना।'

'अब नहीं गिरूंगा', अचल ने कहा।

कुन्ती बैठी रही।

कुन्ती बोली, 'आप दुखी हैं।'

अचल ने कहा, 'नहीं तो। तुम पास हो जाओ। मैं पास हो जाऊँ। तुम्हारा विवाह हो जाय और सुखी रहो। मैं भी सुखी बना रहूंगा।'

कुन्ती चुप रही। अचल कमरे में टहलने लगा।

कुछ क्षण उपरान्त अचल बोला, 'कुन्ती, तुम सुखी रहने की प्रतिज्ञा करो।'

'मेरा सुख दुख मेरे हाथ में नहीं है।'

'अवश्य है। मन को जैसा बनाओ, बन सकता है। अन्तर्मन पर थोड़ा सा ध्यान देने की ज़रूरत है। वह बड़ा छलिया है। वही इधर उधर ढकेल देता है। उसकी जांच पड़ताल ज़रूरी है। उसकी जांच पड़ताल और कार्य–कारण का सम्बन्ध समझते रहने का अभ्यास ही अन्तर्मन के नियन्त्रण और अनुशासन का काम करता है।'

'होगा।'

'होगा नहीं, है। पुस्तकों में लिखा है। ऋषियों और शास्त्रियों ने कहा है। कवि और लेखक इसको दुहराया तिहराया करते हैं। परन्तु हां, भूल भटक सब जाते हैं। कवि लोग बादलों पर कविता करते करते स्वयं हिलडुल जाते हैं और उड़ भी जाते हैं। मेरा एक निश्चय सुनो कुन्ती। पहले प्रतिज्ञा करो कि सुखी रहूँगी। किन्तु परन्तु नहीं चाहता। सीधी प्रतिज्ञा चाहता हूं। अभी के पहले का सब भूल कर प्रतिज्ञा करो।'

कुन्ती के ओठों पर लहर गया, 'अच्छा, की।'

अचल ने टहलना रोक कर, खड़े खड़े कहा,

'मैं तुम्हारी प्रतिज्ञा में सहयोग देता हूँ। मैं प्रण करता हूँ कि मेरा और तुम्हारा विवाह नहीं होगा।'

कुन्ती के मुँह से निकला, 'हु।' और नथनों से एक हलकी फुफकार निकली।

अचल कहता गया, 'यदि तुम्हारे माता पिता की मर्ज़ी के खिलाफ़ मेरे साथ विवाह हुआ तो वे लोग कहेंगे अचल हमारी लड़की को उड़ा ले गया। जिसके साथ तुम्हारी सगाई हुई है वह मेरा मित्र है। वह सोचेगा, अचल डाकू है। समाज कहेगा, अचल उठाई-गीरा है। तुम्हारे मन में भी ग्लानि होगी। पश्चात्ताप होगा और अपने को पतित अनुभव करोगी। मैं तो अपने को ऐसी दशा में पतित समझूँगा ही। इस समय यकायक मेरे ऊपर कुछ बुरा असर हुआ इसको भूल जाना। मेरा मार्ग निश्चित है और तुम्हारा भी। है न?'

कुन्ती ने कहा, 'हां है।' उसके गले में कम्प न था।

उसकी आंखों के सामने एक क्षण के लिए एक चित्र बना—प्रबल, कठोर, संयमी और निश्चयपूर्ण अचल एक ओर, और हँसमुख, स्निग्ध और दबने वाला सुधाकर दूसरी ओर।

'मुझको भूल सकोगी?' अचल ने पूछा।

कुन्ती ने उत्तर दिया, 'मैं समझी नहीं।'

'उस प्रकार स्नेह की ओर जो हम लोग कुछ बढ़े थे, उसको?'

'हां, असंभव थोड़ा ही है।'

'मुझको तुम्हारी दृढ़ता पर विश्वास है।'

'आप अपनी कहिए। आपका जीवन दुःखमय तो नहीं बन जायगा?'

'नहीं बनेगा। दुःख सुख तो मन की भावना पर निर्भर रहता है।'

'आप अपना विवाह करेंगे?'

'कह नहीं सकता।'

'आपका यह अनिश्चय मेरे कष्ट का कारण हो सकता है।'

'क्यों?'

'यों ही।'

'अच्छा, मैं कहता हूँ कि ब्याह करूँगा। कब करूँगा, यह बिलकुल नहीं कहा जा सकता।'

'मैं परीक्षा में बैठने की इच्छा को नहीं छोड़ सकती। क्या आप कभी कभी मेरी सहायता करते रहेंगे?'

'अवश्य'

'और उसी तरह का बर्ताव करते रहेंगे जैसा करते आए हैं?

'उसमें कोई बाधा नहीं पड़ सकती। केवल नाचने के लिए नहीं कहूंगा।'

'मैं शायद ही कभी नाचूँ। पर यदि नाचना चाहूँगी तो क्या आप मना कर देंगे?

'मना तो मैं तुम्हें किसी बात को भी नहीं करूंगा।'

इस बात में किसी अधिकार की गन्ध अनुभव करके अचल ज़रा शिथिल पड़ा। अधिकार तो हर प्रकार का सुधाकर को रहेगा। अधिकार!

बोला, 'कुन्ती, सुधाकर को उतना तुम नहीं जानतीं जितना मैं जानता हूँ। सज्जन जिसको कहते हैं वह पूर्ण रूप में वैसा है। तुम जैसी शिक्षित हो और जैसे-स्वतन्त्र वातावरण में तुम पलीं और बढ़ीं हो तुम्हारे लिए सुधाकर वैसा ही उपयुक्त है। स्त्री की स्वतन्त्रता का पूरा पक्षपाती, पुरुष के समान पद का कट्टर हामी और ऐसे आचार विचार वाला है कि तुम को कभी कुछ अखरेगा ही नहीं।'

कुन्ती ने कहा, 'हूँ।'

अचल कुछ न कुछ कहने चले जाने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा था। कहता गया,

'सुधाकर तुमको सुखी रखने में सुख मानेगा। तुम भी उसको सुखी करना। कुन्ती, तुम चुप क्यों हो? बोलो न।'

'हां तो कहती हूँ,' कुन्ती ने कहा।

अचल बोला, 'मैं तुम दोनों को सुखी देखकर सुखी रहूंगा।' अचल की आंख कुछ रीती सी पड़ गई।

'आप चित्रकारी सीखने का प्रयत्न जारी रक्खेंगे?,

'एं?'

'आपने सुना नहीं मैंने क्या कहा?

'तुमने चित्रकारी के सम्बन्ध में कुछ पूछा था?'

'हां बतलाइए आप चित्रकारी छोड़ तो नहीं देंगे?'

'क्यों छोड़ दूँगा? मैं लगन के साथ सीखूंगा।,

'मेरा चित्र बनायंगे न?'

'अवश्य। सुधाकर का भी बनाऊँगा। वह बड़ा सज्जन है।'

कुन्ती की आंख घड़ी पर गई। उसने एक लम्बी सांस खींची और छोड़ी। अचल ने उसको सुन लिया।

अचल ने कहा, जैसे कोई महत्व की बात प्रकट कर रहा हो,' समय हो गया है। अब तुम को जाना चाहिए।'

कुन्ती धीरे से उठी। उसने तन कर खड़े होने का प्रयास किया, परन्तु गर्दन एक ओर ज़रा झुकी सी रही। नमस्ते करने के लिए हाथ उठाने को ही थी कि आंखों के डोरे लाल हो गए। उसने भोंहें सकोड़ी, ठोड़ी को कंठ-कूप की तरफ़ अड़ाया और बोली,

'तो मैं जाती हूँ। नमस्ते। अब शायद कई दिन बाद मिल सकूँगी

अचल ने नमस्ते के लिए हाथ बांधे और जाने की अनुमति या सहमति के लिए नम्रता पूर्वक सिर हिलाया। जब वह बैठक के दरवाज़े पर धीरे धीरे पहुँची तो यकायक बोला,

'वह कब है ?'

उत्तर मिला, 'आठ दस दिन में। आपके पास तो दोनों पक्षों से निमन्त्रण आयगा।'

'अवश्य। अवश्य।' अचल ने कहा।

कुन्ती ने पीठ फेरी और वह चली गई। अचल मुहँ मोड़ कर तबलों की ओर देखने लगा। एक क्षण बाद उसने फिर दरवाज़े की ओर देखा। 'उससे एक बात और कहदूँ,' उसने सोचा। वह बैठक के दरवाज़े तक आया, परन्तु फिर उसने विचार बदल दिया। 'बार बार क्या कहना है,' उसने निर्णय किया।

फिर वह बैठ गया। सोया हुआ सा, कुछ खोया हुआ सा। बैठक सुनसान और बुरी लगने लगी, अंधेरी रात के चीत्कार जैसी। उसके मुहँ से निकला, ऐं! हूँ!!' टहलने के लिए वह बाहर निकला पड़ा।

सोच रहा था, 'कुन्ती घर पहुँच गई होगी। मैं उस मार्ग से टहलने के लिए नहीं जाऊँगा।'

[१७]

अचल गलियों और सड़कों पर से घूमता हुआ शहर के बाहर दूर निकल गया। जैसे जैसे आगे बढ़ा आने जाने वाले कम होते चले गए। अन्त में एक स्थल बहुत सुनसान मिल गया। रात भी हो गई थी। अंधेरा था। एक पुलिया पर थका सा बैठ गया।

कुन्ती की सगाई उससे पूछ कर की गई है। न भी पूछा गया हो तो भी उसको जना तो दिया ही गया था। सुधाकर के साथ ब्याह करने की इच्छा उसके मन में न होती तो वह इनकार कर देती। परन्तु भरे हुए घर की लड़की इनकार कैसे करती? लेकिन वह असाधारण लड़की है। बहुत हठीली। तो मेरे लिये उसके हृदय में उतना स्थान था ही नहीं। फिर उसने यह क्या कहा था, 'ब्याह करूंगी तो आपके साथ करूंगी, सगाई तोड़ दूँगी।' इतनी हिम्मत! उस भरे हुए घर की लड़की इतना साहस कर जाती!

दोष मेरा है। मैंने अपने को कभी प्रकट नहीं किया। मैं यह कह देता—'मैं तुमको चाहता हूँ, मेरे साथ ब्याह करलो!' कैसी भद्दी बात होती! प्लेटो बहुत बड़ा दार्शनिक था। उसने तो फूँक फूँक कर, दूर से पुचकार पुचकार कर, कला की सूक्ष्म और ललित बारीकियों में होकर प्यार को अग्रसर करने की बात कही है। प्लेटो मूर्ख तो है नहीं। मूर्ख होता तो दर्शनशास्त्र के इतिहास में आज उसका नाम ही न रहता। मैंने उसके मार्ग का यथावत् अनुसरण भी किया। फिर यह सब क्या हो गया? परन्तु प्लेटो के मार्ग का अनुसरण स्त्री भी तो करे। सुधाकर ने क्या किया होगा? क्या वह कुन्ती प्लेटो से मिलता रहा होगा?

तो कुन्ती ने यकायक कैसे कह दिया? —मैं सगाई तोड़ दूँगी। और फिर हठीली होती हुई भी उचट गई। 'अब शायद कई दिन बाद मिल सकूँगी, 'आठ दस दिन में ब्याह होगा, ब्याह के बाद मिलूँगी'; 'आपके पास दोनों पक्षों की ओर से निमन्त्रण आयगा।' सब खतम। इतनी जल्दी!

आध घन्टे के भीतर ही क्या क्या हो गया ? मैं गिर पड़ा ! निर्बल, दुर्बल मूर्ख ! मूर्ख अवश्य, परन्तु उसने अपने अञ्चल से हवा की थी। उसके चेहरे पर चिन्ता अधिक थी, प्यार शायद कम। अरे तो मैं किस जगह चूका ?

मैं बहुत ढीला ढाला रहा। पतले, महीन और अस्पष्ट संकेतों को प्यार का हथियार बनाना चाहता था ! प्लेटो शायद ग़लत है, या उसका उपदेश किसी और प्रकार के मनुष्यवर्ग के लिए हो। मैं मूर्ख अवश्य हूं। बिलकुल ढीला, ऊलजलूल सा और बेवकूफ़। प्यार पार्थिव और स्पष्ट उपकरणों द्वारा विकसित होता है। उसने अपने नृत्य द्वारा कई बार प्रकट किया। गाते गाते रो उठी। यह सब पार्थिव साधन था। मुझको किसी दिन उसका हाथ पकड़कर, कन्धा हिलाकर कहना चाहिए था—कुन्ती, प्यारी कुन्ती, मैं तुम्हारे साथ ब्याह करूँगा। वह कहती,—प्यारे अचल, मैं तुम्हारी पत्नी बनूँगी। परन्तु अचल का दिमाग़ तो कहीं घास चरने लगा था। शायद निशा भी मुझको चाहती थी, परन्तु उसको ओले की तरह ठंडा समझकर मैंने उसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। पर है क्या ? कोई बात नहीं।

इतने में एक मोटर आई। उसकी रोशनी तेज़ थी। अचल ने आंखें नीची करलीं। मोटर निकल गई। काफ़ी धूल छोड़ गई। अचल ने कुछ समय बाद धूल से निष्कृति पाई।

परन्तु विवाह प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक और अनिवार्य तो है नहीं ! एकान्त जीवन ! यह तो भयभीतों, पागलों या आत्मघात की तय्यारी करने वालों की धारणा हो सकती है। या यदि कोई मुनि होते हों तो उनकी। उसने गाया था—मुनिजन निकट बिहँग मृग जाहीं। तो क्या मुझको मुनि समझा ? छिश ! वह सब एक तरफ़ रखकर मुझको संसार में प्रबल बनकर कुछ करना चाहिए। पुरुषों में, स्त्रियों में—दोनों में—कुछ काम करूँगा। जो लोग सोचते हैं कि भीड़-भाड़ में रहने

से भीतर की शान्ति और एकाग्रता क्षीण हो जाती है वे ग़लत समझते हैं। बिलकुल ग़लत। जब अपना आन्तरिक सञ्चय बाहरी त्रुटियों के टक्कर में आता है तभी वह उभरता और बढ़ता है।

और, इस क्रिया में परोपकार करने के कितने अवसर प्राप्त नहीं होते हैं!

अचल का सिर हिल गया और वह मुस्करा पड़ा। परोपकार! वाह!! मानव-जीवन का सबसे बड़ा और सबसे अधिक सरस उद्देश्य। इसी का प्रयत्न करूँगा। इसी से अपने जीवन की बेल को सीचूँगा और बढ़ाऊँगा। वाह! ज़िन्दगी को सुख से भर देने का कैसा अजीब और सहल नुस्खा है!!

इतने में दूसरी मोटर आई। अचल ने दांत मींचे और आखें नीची करलीं। इसकी भी रोशनी तेज़ थी।

मोटर ज़रा धीमी पड़ी और पुलिया से ज़रा आगे जाकर रुक गई। उसका भोंपू बजा। अचल ने सोचा मार्ग की किसी बाधा को हटाने के लिए शोर कर रही है। फिर भोंपू, रोशनी और मोटर के एन्जिन की भरभर सब बन्द हो गई। धूल का गुबार उठा। अचल ने रूमाल से नाक, मुँह सब ढक लिया। मोटर से कोई उतरा। अचल के निकट आया। बोला,

'अजीब खब्ती हो जी, तुम! क्या कर रहे हो?'

यह सुधाकर की आवाज़ थी। अचल ने पहिचान ली। नाक दाबे हुए अचल खड़ा हो गया। हँसते हुए उसने पूछा, 'यहां कहां से आ टपके?'

'मैं तो कहीं से नहीं आ टपका। काम पर गया था। ज़रा देर लग गई। तुम बतलाओ यहां कब और कैसे इतनी दूर आ गए? चलो, मैं घर पहुंचा दूं।'

'भाई, मैं तो अभी थोड़ी देर और बैठूंगा। आज इच्छा हुई कुछ दूर अकेला टहल आऊं। इसलिए चला आया।

'तो मैं भी यहीं बैठूंगा। आखिर किसी समय तो इस बेचारी पुलिया की जान को बख्शोगे। रात भर तो इसको घिसते नहीं रहोगे।'

'तो थोड़ी देर बैठो। मैं तुम्हारे साथ ही चला चलूंगा।'

सुधाकर उसके पास बैठ गया। बोला, आखिर तुम्हें यह क्या सूझी आज! कौन सा खब्त घसीट लाया तुमको यहां!'

'थोड़ी लम्बी टहल लगा दी तो खब्त हो गया!'

प्लेटो, सुकरात, अरस्तू, ह्यूम, काट वग़ैरह के सिवाय भी तो दुनियाँ कुछ और है।'

'हां है। इन नामों के अलावा और ऊपर गांधी बाबा हैं—'

'मैं बहस करने के लिए नहीं बैठा हूँ, मेरा मतलब है तुम अपनी शादी करलो। शादी होने के बाद जीवन में एक बड़ा परिवर्तन आ जायगा।'

'करूँगा, परन्तु अभी नहीं।'

'तुमको कुछ नहीं करना पड़ेगा। उपयुक्त लड़की मैं ढूंढ़ दूंगा। फिर तुम अपने पैमानों से जांच करके मन्जूर कर लेना। मैं भी गृहस्थी वाला होने जा रहा हूं। आज शायद सूचित करने के लिए न आ पाता। कल तो किसी तरह भी न चूकता।'

बिना किसी कुतूहल के अचल ने पूछा, 'क्या!'

सुधाकर ने अचल के कन्धे को ज़रा सा झटका देकर, कहा, 'तुमको सुनकर अचम्भा भी बहुत होगा।'

साधारण स्वर में अचल बोला, 'क्या!'

सुधाकर ने उमङ्ग भरे स्वर में कहा, 'आज कुन्ती के साथ मेरी सगाई हो गई है। शादी जल्दी होगी। बुआजी आतुर हैं और मैं अपने काम से अवकाश कम पाता हूँ, इसलिए जल्दी निबटना चाहता हूँ। दो दिन के लिए अध्ययन से छुट्टी मांग लेना।'

'खूब! खूब!! तुमने पहले कभी चर्चा नहीं की!!!'

'चर्चा क्या करता ? मुझको खुद कुछ मालूम न था। एक दिन बुआजी ने हठ किया कि मैं घर बसा लूँ। थोड़ी सी बहस के बाद मैं मान गया। ढूंढ खोज के लिए महीनों का समय मेरे बसका था नहीं। मुझको मालूम था कि कुन्ती के माता पिता विवाह के लिए चिन्तित हैं। मुझको भ्रम था कुन्ती का मन किसी दूसरे ठौर में न हो, इसलिए तलाश करवा लिया। बुआजी राज़ी हो गईं और सगाई पक्की हो गई। इतना समय नहीं मिला कि तुम से ज़िकर छेड़ता।'

अचल ने सोचा, 'कुन्ती का मन मेरे ठौर में न था। जो कुछ हुआ अच्छा हुआ।' बोला, 'कुन्ती बहुत अच्छी है। एक साथ इतने गुण एक स्त्री में शायद ही कहीं मिलें।'

सुधाकर ने कहा, 'सो तो है ही। जिसको बुआजी सरीखी बुढ़ियाँ त्रुटि या अवगुण समझती होंगी उसको हम लोग तो एक बहुत बड़ी बात समझते हैं। नाचने वाचने का हाल सुनकर उनको ज़रा धक्का सा लगा था, परन्तु संभल गईं। उनको अपनी नियन्त्रण-शक्ति और शासन-सत्ता का भरोसा है। कुन्ती भी ऐसी नहीं है जो उनका अदब लिहाज़ न माने। मैं पहले सोचा करता था कि ब्याह अनजानी जगह में करना चाहिए। उसमें कुछ रोमान्स मिलेगा, परन्तु ख्याल बदल गया। कुन्ती तो पूरी समूची रोमान्स है। अनजाने स्थान में रोमान्स तलाश करने की ज़रूरत नहीं रही। सोचा यहीं मिल गया।'

'ठीक कहते हो। परन्तु वह केवल रोमान्स ही नहीं है। वह बुद्धि के लिए अद्भुत और विवेक के लिए अगम्य है।'

'यह तो लगभग सभी स्त्रियों के लिए कहा जाता है। जहां पुरुष ने अपनी बे समझी के कारण ठोकर खाई, वह स्त्री के सिर दोष मढ़ने लगा। तुम्हारी नई भाषा की बात पुरानी भाषा में कही जाती थी, त्रियाचरित्र न जाने कोई, पर क्या यह स्त्री मात्र का अपमान नहीं है ? तुम तो मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण शास्त्र में बहुत सिर खपाया करते हो, क्या

नर चरित्र, नारी चरित्र से कुछ कम दुर्बोध है ? अथवा, यों कहो कि चतुर के लिए क्या दोनों सुबोध नहीं हैं ? क्या कहते हो ?'

अचल जैसे जाग पड़ा हो।

बोला, 'भाई मुझको क्षमा करना। तुम बिलकुल ठीक कहते हो। मैं कुन्ती का अपमान नहीं कर रहा था। कुन्ती में इतने गुण हैं कि एक दूसरे की क्रिया और प्रतिक्रिया के फल स्वरूप तरह तरह की सूक्ष्म रेखाएं, छायाएं, स्वर, अनुस्वर और श्रुतियां, अभिव्यक्तियाँ और अभिरञ्जनाएं मिलती हैं। बुद्धि चकित हो जाती है और उनकी द्रुतगति के कारण विवेक सन्न सा रह जाता है।'

सुधाकर सन्तुष्ट नहीं हुआ। अपनी भावी पत्नी के विषय में वह कोई स्पष्ट अच्छी बात सुनना चाहता था।

उसने पूछा, 'निशा भी तुम्हारे सम्पर्क में रही है। उसकी बाबत तुम्हारी क्या राय है ?'

अचल ने उत्तर दिया, 'निशा में भी गुण हैं। वह जीवन-चित्र की रूपरेखा बनाने में सहायक होने की समर्थता रखती है, पर उस चित्र को रंग, चमक और उभार, शायद नहीं दे सकती। मुझको विश्वास है कुन्ती तुम्हारे जीवन को चिरसुख देगी, और तुम भी उसको हर तरह सुखी रक्खोगे।'

सुधाकर को खुशी हुई।

बोला, 'मैं कुन्ती के सुख में अपना सुख समझूंगा। तुमको मेरे सामाजिक विचार और सिद्धान्त मालूम ही हैं, व्यवहार में मैं उसको इतनी आज़ादी दूँगा कि सिद्धान्त मात खा जाय।'

फिर उसने अनुरोध किया, 'चलो न अब ? मुझको भूख लग रही है। तुम्हें भी लग रही होगी। चलो मेरे घर खाना खाओ। ज़रा बुआजी की भी सुनना। वे नाचने के नाम से भन्नाती हैं। बौखला उठती हैं। मैंने उनसे कह दिया है कि कुन्ती अपने घर आने पर पुरुषों के सामने नहीं

नाचेगी, उसके लिए घर का काम ही इतना रहेगा कि फ़ुरसत नहीं मिलेगी बाहर निकलने तक की, परन्तु वे ज़रा कुड़बुड़ा जाती हैं, फिर अपनी सत्ता के विश्वास पर दृढ़ और स्निग्ध भी जल्दी हो जाती हैं।'

अचल को खटका—सिद्धान्त और व्यवहार के द्वन्द्व में क्या सिद्धान्त की यही मात है और व्यवहार की जीत?

उसने कहा, 'चलो, मुझको घर पर छोड़ देना। खाना घर पर ही खाऊँगा।'

'मैं नहीं मानूंगा। आज मेरी सगाई का दिन है।'

'वाह, वाह! मां से कुछ नहीं कह आया। मेरी बाट देख रही होंगी।'

'अभी कहते चलेंगे।'

'आज का भोजन जो ख़राब जायगा।'

'ओहो! बड़े मितव्ययी हो न।'

'आज तो नहीं खाऊँगा तुम्हारे यहां। फिर किसी दिन सही। दो दिन तो लगातार तुम्हारे साथ छक्के पञ्जे उड़ेंगे ही।'

'अच्छा, यही सही। बरात के लिए यहां की वादन मंडली का प्रबन्ध करे लेता हूं, गायन और नृत्य के लिए लखनऊ से लड़कियों की मंडली को बुलवाए लेता हूँ।'

नृत्य के शब्द पर अचल चौंक सा पड़ा। बोला, 'एँ! हुं। हां, ठीक है। ठीक है।'

वे दोनों चले गए।

[१८]

सुधाकर और कुन्ती का ब्याह हो गया। कुन्ती ने जब मायका छोड़ा बहुत रोई। एक ही शहर में मायका और ससुराल। आने जाने का पूरा सुबीता। मायके में तांगा और ससुराल में मोटर। दोनों घर सुधारवादी। भविष्य में क्लेश की कोई छाया या कल्पना नहीं। रुदन सुनने वालों के मन में कुछ इसी प्रकार की बात उठी। फिर भी कुन्ती बहुत रोई।

सुधाकर के घर पहुंचकर उसको बुआजी का आदर और प्यार मिला। उसने मायके में सुना था कि बुआजी कुछ कर्कश हैं, परन्तु बुआजी में उसने स्नेह की बाढ़ देखी। कर्कशता का नाम नहीं। फूला नौकरानी तो मानो आमोद प्रमोद का खज़ाना बन गई थी। उसके गाने बजाने और नाचने कूदने ने तो घर में तूफ़ान सा ही खड़ा कर दिया।

फूला को खुशी थी—बाबूजी अब काम की उतनी हाय हाय नहीं मचाते, और न मचावेंगे।

सुधाकर थोड़ी ही देर के लिए ठेकेदारी के काम पर जाने लगा। कभी कभी बिलकुल नाग़ा। काम कराने के लिए मेट, गुमाश्ता और काम करने के लिए मज़दूर थे ही।

कुन्ती का गाना सुनने में उसको जो मज़ा आता था वह पहले कभी कहीं नहीं मिला। ब्याह के पहले खुद कुन्ती के गाने में नहीं मिला था। ज़रा सी तान, ज़रा सी मुरकी पर वह उछल पड़ता और प्रशंसा बरसाने लगता। ताल या तान की बारीक छान बीन करके, 'यह स्वर ठीक नहीं लगा,' 'सम चूक गई,' 'बेताली हो गई' इत्यादि खटकने वाली आलोचना—जो अचल किया करता था—अतीत में—किसी दूर अतीत में—बिला गई।

कुन्ती प्रसन्न थी। सुधाकर का प्रेम पाकर सुखी थी।

'तुम काम पर बहुत कम जाने लगे हो। ठीक नहीं मालूम होता।'

'बहुत काम किया। अब थोड़ा विश्राम लेरहा हूं।'

'विश्राम कहां करते हो ? लेटते तो बहुत कम हो ।'

'तुमको देखता रहता हूँ । तुम्हारे मीठे स्वरों को कानों में होकर पीता रहता हूँ । यह किस विश्राम से कम है ? तुम क्या जानो मुझे कितना आनन्द मिलता है ।'

कुछ इस तरह की बात कुन्ती ने किसी और से भी सुनी थी । उस स्मृति को सहज ही मन से हटाकर, कुन्ती हँस पड़ी ।

'पर तुम्हारा इस तरह निरन्तर साथ रहना, मुझे हमेशा किसी न किसी बहाने अटकाए रखना कहां की भलमन्साहत है ?'

'मैं तो अटके रहने को कभी नहीं कहता । तुम स्वयं अटकी रहती हो । गाते गाते क्यों नहीं थकतीं ? एक गीत खतम होने के बाद ही दूसरा क्यों शुरू कर देती हो ? मुस्कराती क्यों रहती हो ?'

'तो तुम मेरी तरफ़ टकटकी लगाकर क्यों देखते रहते हो ?'

'टकटकी तो नहीं लगाता, आंखें यों ही कहीं पहुंच जाती हैं ।'

'तो मैं बुआजी के पास अधिक बैठा उठा करूंगी । क्या कहती होंगी वे—कैसी आई है यह !'

'बुआजी को तो मानो घर में चांद मिल गया है । तुमने अपना गाना सुनाया उनको ?'

'सुनाया था डरते डरते, परन्तु वे प्रसन्न हुईं ।'

'किसी दिन नृत्य भी दिखलाओ । देखो क्या कहती हैं ।'

'मेरी हिम्मत नहीं पड़ेगी । मैं उनको रुष्ट नहीं करना चाहती ।'

'मुझको तो दिखलाना पड़ेगा । अकेले में ही सही—क्या हर्ज़ है ? मेरी तो बड़ी इच्छा है ।'

'दिखला दूँगी कभी, पर बुआजी को मालूम न हो पाय ।'

'वाह । वाह । मालूम हो जायगा तो क्या होगा ? मेरे सामने नाचने में निन्दा की क्या बात है ? परन्तु मेरे पास घुँघरू नहीं हैं । अचल से मांग लाऊँगा; उसके पास हैं ।'

घुँघरू और अचल के नाम से एक स्मृति फिर जागी। कुन्ती ने उसको भी सहज ही दूर कर दिया।

'नहीं, किसी के यहां से मांगकर मत लाना,।'

'क्यों?'

'जिसके यहां मांगने जाओगे ढेरों सवाल करेगा। मैं अपना नाम नहीं आने देना चाहती। चाहते ही हो, तो बाज़ार से ले आओ।'

'ले आऊंगा क्या, मैं चांदी की घुँघरू बनवाऊंगा। तुम्हारे पैरों में पीतल की घुंघरू नहीं दिपेगी। मैं तो सोने की बनवाता—'

'सोने की घुँघरू बज नहीं सकती। चांदी की घुँघरू में पीतल वाली से खनक भी कम रहेगी, अच्छी रहेगी।'

'मैं सोचता हूं आज ही बनवाऊं और आज ही तुमको पहिने देखूँ।'

'वाह! वाह! कोई जल्दी है क्या?'

'तुम्हें न होगी, मुझको तो है।'

'भला क्यों?'

'तुम क्या जानो। रात की चांदनी को क्या मालूम वह कितनी लुभावनी है। सवेरे की ऊषा क्या जाने वह कितना सुहावनापन बरसाती है।'

'तुमतो कविता कर उठे!'

'कविता से तो मैं ओत-प्रोत ही हूँ। तुम मेरी कविता हो, मैं तुम्हारा कवि हूं—अथवा मैं कविता हूँ और तुम कवि हो।'

'तुम से कोई कहानियां लिखने को कहे तो शायद उनको मुझ ही मुझसे भर दोगे। अच्छा बतलाओ क्या क्या लिखोगे उनमें?'

'मैंने कभी कहानियां नहीं लिखी हैं—'

'अरे तो क्या हुआ। जितनी कहानियां छपती हैं उनमें सार की बात कितनी रहती है? तुम्हारी कहानियों में तो कुछ तथ्य रहेगा। और सार भी बहुत। पर न जानें तुम उनमें क्या क्या नहीं लिख डालोगे!'

'मैं कहानी लिखूँगा—वह मेरा इन्तजार करते करते सो गईं। कमरे में बिजली की रोशनी थी! मसहरी फूलों से सजी हुई थी, कमरे में ऊदबत्तियों की महक भरी हुई थी। चेहरा खुला हुआ था—'

'और आते ही मैं जाग पड़ी और मैंने पूछा इतनी देर कहां लगाई?'

'यह नहीं। चेहरा खुला हुआ था। मैंने हाथ ठोड़ी पर रक्खा। वह कोई सपना देख रही थीं, मुस्कराईं—'

'इस तरह की कहानी तो कोई भी पत्र नहीं छापेगा। उस पर 'धन्यवाद सहित लौटाया' भी लिखा हुआ नहीं आयगा। जबतक मियां बीबी की लड़ाई, या कोई निन्दाचार, स्कैन्डल, मियां बीबी के बीच में न आवे तब-तक कोई भी पत्र तुम्हारी कहानी पर नज़र भी नहीं डालेगा।'

'मैं किसी पत्र में छपने के लिए अपनी कहानी भेजूंगा ही क्यों? मैं अपने शब्द चित्र तुम्हीं को भेंट क्यों न कर दूंगा? तुम उनपर लिखोगी बिना किसी धन्यवाद के बक्स में धरोहर बनाकर रख लिया।'

कहीं कोई ड्राइंग सीख रहा होगा, शायद चित्रकारी भी, किसी का चित्र बनाने के लिए। स्मृति में एक चित्र बना और बिगड़ा। हलकी सी छाप कर गया, परन्तु और कुछ नहीं—कोई प्रभाव नहीं छोड़ गया।

कुन्ती हँस पड़ी।

'तुम्हारी बातें समाप्त नहीं होतीं। यदि कोई तुम्हारी बातों का आलेखन करे तो पोथे के पोथे भर जायें।'

'सचमुच, तुम्हारे गीतों, बातों और हँसी को ग्रामाफ़ोन में भर सकूँ तो फिर चैन के साथ काम पर चला जाया करूँ। जब चाहे तब चूड़ी चढ़ाई, सुई लगाई और सुन लिया। परन्तु तुम्हारी मुस्कानों को, तुम्हारी आंखों की झलकों को, बरोनियों की चमक को, और मुखमंडल की आभा को ग्रामाफ़ोन या कोई भी फ़ोन कैसे पेश कर सकेगा?'

'तो मैं तुम्हारे साथ काम पर चला करूँ?'

'तब या तो तुम्हें न देख पाऊँगा या काम न कर पाऊँगा। और फिर गाना कैसे सुनाओगी?'

'हां, यह ज़रा मुश्किल। मैं तो गाने सुनाने को उत्कंठित तक रहूँगी, पर काम की उलझन तुमको सुनने ही न देगी।'

'इसी लिए तो मैं काम के झंझटों में पड़ नहीं रहा हूँ। चाहता हूं तुमको नए कपड़ों, नए गहनों और हमेशा ताज़े फूलों से सजाए रहूँ। तुम्हारे तन के सौरभ से उन फूलों का परिमल संयुक्त होकर मुझको स्पर्श देता रहे। लगता है तुमको उठाकर अपने हृदय के भीतर भर लूँ।'

× × × ×

एक दिन सुधाकर ने कहा, 'हमारे क्लब ने नाटक खेलने का निश्चय किया है। उसमें तुम कोई अभिनय कर सकोगी? तुम्हारे गायन और नृत्य की कीर्ति ने मित्रों द्वारा यह प्रार्थना करवाई है!'

'मुझे कोई इनकार नहीं। बुआजी कभी कभी ज़रा कुढ़ जाती हैं। थोड़ी और सही। पर नाटक लम्बा नहीं होना चाहिए।'

'एकांकी है।'

'एकांकी यानी छोटा नाटक?'

'उसको हमलोग एकांकी ही कहते हैं।'

'तुमलोग एकांकी कहते हो या परिभाषा और रूढ़ियों की पूजा एकांकी कहती है? बिना थोड़े से भिन्न भिन्न दृश्यों के नाटक अच्छा नहीं लगता। मैं तो उसे छोटा नाटक कहूँगी, चाहे कोई भी एकांकी कहे।'

'हां वही। कुल तीन पात्र होंगे। दो तीन दृश्य होंगे। तीन चार दिन की एक घटना की कहानी होगी। थोड़ा सा गायन और नृत्य है।'

'तुम भी अभिनय करोगे न?'

'हां, हां, मैं भी अभिनय करूँगा।'

'तुम्हारे क्लब ने काम तो बहुत अच्छा लिया है हाथ में। गायन वादन के साथ साथ संस्कृति और शिक्षा का भी प्रचार होगा।'

'अच्छा काम होते हुए भी हमारे थोड़ेसे मित्रों की ही स्त्रियां आतीहैं। सो भी एक तरफ़ बैठ जाती हैं। हम चाहते हैं स्त्रियां और अधिक आवें।'

'वे लोग स्त्रियां का अलग क्लब बनाने की सोच रही हैं। कोई कोई कहती हैं कि व्यायाम, कसरत इत्यादि किया करेंगे।'

'है तो अच्छा।'

'क्यों नहीं ? कसरत व्यायाम करने से हाथ पांव काठ के सोंटों जैसे हो जायंगे। नृत्य से शरीर को जो छरेरापन, सौष्ठव और लाघव मिलता है वह मुग्दर, दंड बैठक इत्यादि से क्या खाक मिलेगा ? टेनिस तक तो ग़नीमत थी, पर मुग्दर दंड बैठक और पहलवानी से क्या मतलब ?'

'तुम बिलकुल ठीक कहती हो। बन्दूक चलाना सीखोगी कुन्ती ?

'बन्दूक़ चलाना केवल या निशानाबाज़ी भी ?

'निशाना बाज़ी।'

'अवश्य सीखूंगी। बन्दूक़ कहां है ?'

'लाइसैन्स ले लूंगा।'

'मिल जायगा ?'

'हां, आशा तो है। कांग्रेसी समझा जाने पर भी मैंने कुछ सरकारी कामों में चन्दा दिया है, बन्दूक़ का लाइसैन्स मिल जायगा।'

'अवश्य ले लो। मैं नाटक के खेल से भी बढ़कर उसको मनोरंजक समझूंगी।'

कुन्ती ने नाटक में अभिनय किया। बहुत प्रसंशा मिली। परन्तु नाटक की सफलता सभी पात्रों के अच्छे अभिनय का योग-फल होती है। उसमें अपना थोड़ा सा ही स्थान देखकर कुन्ती सन्तुष्ट नहीं हुई।

'कुछ दिनों बाद सुधाकर को बन्दूक़ का लाइसैन्स मिल गया। बन्दूक़ ख़रीद ली गई। कुन्ती अभ्यास करने लगी। बन्दूक़ ने उसको बहुत मनोरंजन दिया।

× × × ×

बुढ़िया देखते देखते और सुनते सुनते हैरान हो गई। फूला उसको तब समाचार दिया करती थी। ठीक समाचार पत्र जैसा—पत्रों के मोटे मोटे शीर्षकों का काम फूला के मुख की आकृति करती थी, समाचार अतिशयता से रंजित, और सम्पादकीय टीका टिप्पणी की जगह फूला का निज का मन्तव्य।

जब माला के गुरियों को ओठों की हवा का साथ न मिला, तब बुआजी ने नाक भों सिकोड़ कर माला गोद में रखली और फूला से कहा,

'मैं कहती हूँ यह सब देखने के लिए मैं क्यों ज़िन्दा रही? पर्दा छोड़ दिया तो खैर कोई बात नहीं। मुँह उघाड़े फिरो, अपने हाथ हाट बाज़ार करो। अपने घर में चाहे जितना चिल्लाकर गाओ उसमें कोई ऐब नहीं, पर बन्दूक़ चलाना! क्या शिकार खेलेगी? जानवरों को मारेगी और मास खायगी? हे राम! हे भगवान!! और अब क्या होगा?'

फूला बोली, 'बुआजी, अब क्या कहूँ, कहते मेरे मुँह में आग सी लग जाती है। मर्दों के साथ नाटक खेलती हैं। नाटक-घर में गाती और नाचती हैं। मर्द तालियां पीटते हैं, आवाजें कसते हैं, और—और—बुआजी, मैं क्या कहूं। छुटपन से इस घर का निमक खाया है! तुम्हारे सामने ही मैं मर जाऊँ तो समझूं मेरा बड़ा भाग्य है।'

'ओ भगवान, नाटक में नाचती है! मर्दों के सामने!! अरे मैं पहले से कुछ कुछ जानती थी, पर अक्कल पर पत्थर पड़ गए। और सुद्धू कहां रहता है?'

'बाबूजी भी नाचते कूदते रहते हैं और यह सब देखते रहते हैं। क्या कहूँ बुआजी हम लोगों का भाग्य फूट गया है।'

'अरी देख तो फूला, मैं क्या करती हूँ। होश ठिकाने लगा दूँगी, होश! बीते डेढ़ बीते का था सुद्धू तब से मैंने ही पाला पोसा है। मेरे भाई जब नहीं रहे तब ज़रा सा बच्चा था। मैंने ही पढ़ाया लिखाया और इस डूबते हुए घर को उबारा। अब भी मैं ही आड़े आऊँगी।'

'बुआजी, मेरा नाम ज़ाहिर न होने पावे, नहीं तो मैं मुफ्त में मारी जाऊँगी। मैं तो मजूरिनी ही हूँ। वैसे मैंने सुना है कि खबर के कागदों तक में छप गया है। लोग दूकानों पर पढ़ रहे थे और ठट्ठा कर रहे थे। मैं तो कानों में तेल डाल कर चली आई। पर कहां तक मन को मारती! सोचा तुमको तो सुना ही दूँ।'

'नहीं, तुमने अच्छा किया। तुम्हीं इस घर के हित की न सोचोगी तो हो चुका। लोग कुछ और कहते हैं?'

'किस किस की ज़बान पकड़ें बुआजी! लोग बहुत बुरी बुरी बातें कहते हैं। मैं दुहरा नहीं सकती।'

बिना कुछ कहे ही फूला बहुत कुछ कह गई। बुढ़िया क्रोध के मारे भभक उठी।

× × × ×

बुआजी ने अवसर की ढूढ़ खोज के बाद भी उपयुक्त घड़ी मुश्किल से पाई।

'बहू जी,' बुआजी ने कहा: हमारे पुरखे बहुत बड़े आदमी थे। जब बाज़ार में होकर निकलते थे तो उनके सामने सिर झुक जाते थे। लोग रास्ता छोड़कर एक तरफ़ खड़े हो जाते थे।

कुन्ती बोली,'बुआजी, अब तो बाज़ारों में इतनी भीड़ लगी रहती है कि पैदल चलने वाला कोई राजा महाराजा भी हो तो बिना दो चार धक्के खाए गैल नहीं कर पाता है और लोग इतनी जल्दी में इधर से उधर जाते हैं कि कोई किसी को पहिचान भी नहीं पाता। पहिचानने की फ़ुरसत ही नहीं, बात करने की कौन कहे।'

'स्त्रियां भी बाज़ारों में धक्का मुश्ती करके चलती हैं क्या? क्योंकि बाज़ार में जाए बिना उनका काम ही नहीं चलता। काम न भी हो तो बाज़ार जाये।'

'स्त्रियों को धक्का मुश्ती तो नहीं करनी पड़ती, क्योंकि पुरुष ऐसे अशिष्ट और ढीठ नहीं हैं, परन्तु यदि करनी पड़े तो स्त्रियां अब कमज़ोर भी नहीं हैं।'

'हाँ मजूरिनियां तो अब मर्दों के कान काटती हैं, और मुहँ लग जायँ तो चबाही डालें।'

'मजूरिनियां भी तो मनुष्य हैं, बुआजी। जब मजूर आदमी बन रहे हैं तो उनकी स्त्रियां ही कैसे पीछे रह सकती हैं?'

'बड़े आदमियों की, भले मानसों की आई आफत।'

'आफ़त बुलाने से ही आती है, अपने आप तो आती नहीं।'

'कम्बख्ती जब आती है तब ऊँचे चढ़े ही कुत्ते काटते हैं।'

'अभी तक न तो ऐसे कुत्ते देखे और न ऐसे अभागे ऊँट सवार।'

'तुमने, बहू, अभी देखा क्या है? स्कूल में चार छः किताबें पढ़ली। बातें चबाना सीख लिया। हुड़दंग लीला में नाच कूद लिया। बस मानो सारे ज़माने की नस नस पहिचान ली! हमारी भावी ऐसी देवी थी, ओह! ऐसी देवी थी कि कोई यह भी न जान सका कि कहां रहती है, क्या करती है, क्या खाती है। और भाई भावज तो मेरे सामने कभी भी बात न करते थे।'

'हुँ! हुं! ऊँ।'

'यह फूला फला घर उसी लक्ष्मी का आशीर्वाद है। आज कल की जैसी स्त्रियों सी फूहड़ होती तो रसातल को चला गया होता।'

'आप तो संभालने को हैं।'

'हद हो गई फूहड़पने की, हद। इससे ज्यदा बेहयाई और क्या हो सकती है! मर्दों के सामने नाचना! उनसे मुहँ जोड़ कर बात करना!! डुबोदी हमारे कुल की सारी मर्यादा!!!

'इतनी बुरी लगती हो ऊँ तो अपने मायके चली जाऊँ?'

'वहीं से तो सारा सत्यानास शुरू हुआ है ! वहीं से तो ढल कर आई है यह मूरत !! देखते देखते मैं तो हैरान हो गई । सोचती थी मेरी देखा देखी सुधर जायगी, पर कोई भी तो असर नहीं हुआ । एरफेर कर समझाया—बहू इस तरह चलना चाहिए; बहू, गृहस्थों का रहन सहन ऐसा होता है, ऐसा नहीं होता है परन्तु बहू के कानों पर जूँ तक न रेंगा मायके चली जाऊँगी !! जिस में बुआजी की नाककटे । अरी तुम्हारा वह बाप कैसा जिसके ज़िन्दा रहते यह सिखापन संजोया !! और वह मां कैसी !!! दोनों नकटे होंगे, नकटे !!!!'

'बुआजी, बस । बहुत हो गया । मैं अपने मां बाप की बुराई नहीं सुनसकती, मुझको चाहे जैसी गालियां दे लीजिए लेकिन मेरे मां बाप तक मत जाइए मैं बिलकुल नहीं सहसकती, ज़रा भी नहीं ओढ़ सकती ।'

'आने दो उस सुद्दुआ को । उसीने तो सिर पर चढ़ा रक्खा है । वह पुरुष है, या हिजड़ा ? आने दो, उसको । अगर वह भी मेरी नहीं सुनेगा तो गला घोंट कर मर जाऊँगी, ज़हर खाकर मर जऊँगी ।'

'आप क्यों ज़हर खाकर मरें ? मरना ही पड़ा तो मैं मरूँगी । भगवान करे आप अभी सौ बरस और जिएँ और इस घर को संभालती रहें, रसातल में जाने से बचाए रहें ।'

'हायरे ! हायरे !! आज मुझको यह बातें भी सुननी पड़ीं !!!'

× × × ×

सुधाकर ने कुन्ती को सान्त्वना देते हुए कहा, 'वे बुड्ढी हैं, चिड़चिड़ी हैं, कुछ परवाह मत करो । मैं तो कुछ नहीं कहता ? जहां जाना चाहो वहां जाओ; जो कुछ करना चाहो, करो । मैं कभी आधी बात भी कहूँ तो गुनहगार ।'

'बहुत दफ़े हो चुका है, अब सहा नहीं जाता ।'

'तुम उनके सामने ही मत जाया करो । इतनी बड़ी कोठी है, एक तरफ़ करलो अपना रहन सहन । खाना पीना, नौकर चाकर, उठना बैठना

सब अलहदा। जब चाहो जब जाओ, और चाहो जब आओ। बुआजी से वास्ता ही क्या रहेगा?'

'वे तो मौके ढूंढ़ती रहती हैं टक्करें मारने के। ज़रा सा उकास पाया कि लगीं तड़ातड़ झाड़नें।'

'मेरे सिर पर ज़्यादा पड़ती हैं।'

'खाक पड़ती है तुम्हारे सिर पर। सबेरे काम पर चल देते हो। दुपहरी में आए, खाना खाया, ज़रा लोटे और चल दिए। कह गए चार बजे के पहले आ जाऊँगा और आए पांच बजे कभी कभी छः बजे। मैं अकेली पड़ी रहती हूँ भुनगी की तरह!'

'नहीं कुन्ती, मेरे साथ न्याय करो, मैं भीख मांगता हूं। काम पर जाना ही पड़ता है। न जाऊं तो सब चौपट हो जाय।'

'शाम को क्लब। मेरे लिए बस थोड़ा सा ही समय। कभी कभी तो मैं रो तक देती हूँ।'

'अच्छा, अब कल से दो घंटे सबेरे और दो घंटे तीसरे पहर के पहले। काम को केवल इतना दूंगा, बाक़ी सरकारी हाजिरी में। लो बस अब हँस दो।'

'मैं ऐसे नहीं मानूँगी। बुआजी को अच्छी तरह समझादो नहीं तो किसी दिन मुझको मरा हुआ पाओगे। मैं उनकी चोटें नहीं सह सकती। किसी की नहीं सह सकती—तुम्हारी भी नहीं सह सकती।'

'बिलकुल नहीं। मैं कब कहता हूँ? बल्कि बन्दा सारी फ़ौज कशी का पड़ाव बनने को तैयार है। लो अब हँस दो।'

'इस तरह जबरदस्ती हँसाने से क्या होता है? मैं अपने आप हँसू तब है। ह! ह!! हुं--ऊँ।'

'नहीं, मैं ठीक कहता हूँ। बुआजी कितने दिन की और हैं? उनके रास्ते में मत पड़ो, या उनको अपने रास्ते में मत आने दो। एक ही बात है। मैं आज से ही अलग अलग इन्तज़ाम किए देता हूँ।'

'लोग मुझको ही बुरा कहेंगे। कहेंगे कुन्ती बड़ी लड़ाकू है; बुआजी तो बड़ी सीधी है, यह बहू ही मुंहज़ोर है। इसने आते ही घर को अखाड़ा बना दिया!'

'अरे मूर्खों के कहने की फ़िकर मत करो। मैं तो कुछ नहीं कहता। तुम्हारा मायका तो कुछ नहीं कहेगा। फिर ऐरों ग़ैरों की चिन्ता क्या?'

'तुम्हारे ऊपर चोटें करेंगी बुआजी—मुझसे नहीं सुना जायगा, और न सहा जायगा।'

'मैं बड़ी मोटी खाल का हूं। मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा।'

'उधर बुआजी की हां में हां मिलाओगे? ठीक इसी तरह न?'

'मैं बुआजी से तुम्हारी किसी तरह की भी कोई बुराई न करूंगा। बस, बाक़ी की तुम्हें क्या फ़िकर! मैं कुछ भी कहूँ।

'हुँ—ऊं।'

'मैं बुआजी को बतलाऊंगा, ज़माना अब दकियानूसी नहीं रहा। स्त्री और पुरुषों के समान पद का समय आ गया है। स्त्री का विश्वास किया जाना चाहिए।'

'जिसमें वे मुझको और भी कोसें।'

'भरोसा रक्खो–वे अकेली तुमको नहीं कोसेंगीं। मुझको, मेरे सरीखे समस्त पुरुषवर्ग को और आज कल के पूरे स्त्री समाज को गालियां देगीं इतने विराट वर्ग में होने के कारण फिर तुमको अकेली बुआजी की ज़बान की परवाह नहीं करनी चाहिए।'

'एक शर्त है—मैं तुम्हारे क्लब के या किसी पुरुष कब नाटकों में भाग नहीं लूंगी और न नृत्य करूँगी। करना ही चहूंगी तो किसी स्त्री–क्लब में करूँगी। ज्यादा तर शाम के समय तुम्हें अकेले कहीं न जाने दूंगी।'

'सिनेमा चला करेंगे।'

'जरूर। कई दिन से देखा भी नहीं है। एक शर्त और है—जिस समय में तुम बाहर रहा करोगे मैं बी० ए० की परीक्षा की तैयारी किया किया करूँगी। बैठूंगी ज़रूर, चाहे फेल क्यों न हो जाऊं।'

'इसमें मुझको कहना ही क्या है? करो तैयारी मौज के साथ। मुझको बहुत अच्छा लगेगा।'

'परन्तु तुम अपने काम के घंटे नहीं बढ़ा सकोगे। सोचोगे छुट्टी मिल गई, पर यह नहीं हो सकेगा।'

'अरे भाई मैं कब कहता हूँ? तुम्हारी सब शर्तें मंज़ूर करता हूं।'

'एक बात और है। बुआजी का और मेरा बटवारा मत करना। मैं निभाने की कोशिश करूंगी।'

'यह ज़रा मुश्किल है। वे फिर कुछ कह बैठेंगीं तो मुझको बहुत बुरा लगेगा।'

'कहती हूँ जल्दबाज़ी मत करो। कुछ दिन यों ही चलने दो। देखो कि निभाव असंभव है तो जैसा ठीक समझो कर लेना।'

'तुम्हारी मर्ज़ी। तुमको बहुत अखरा था इसलिए मैंने उस इलाज को सोचा था।'

'स्त्रियां खुद भी आपस में अपना कुछ इलाज़ कर लेती हैं—'

'बुआजी आपस के अर्थ से कुछ दूर हैं।'

'देखा जायगा। अभी तो मुझको पढ़ने की धुन सवार है।'

'उस धुन में मुझको न भूल जाना।'

'और काम की धुन में तुम मुझको। 'पढ़ने में कुछ मदद करोगे।'

'सामने बैठा रहूँगा। और कर ही क्या सकता हूँ? तुमने एक विषय संगीत ले रक्खा है जिसका आनन्द तो मानो ब्याज समेत ले सकता हूं, परन्तु सिखा विखा नहीं सकता हूं।'

'अचल से सीख आया करूं! और, फिर तुमको सुनाया करूं! अभ्यास दुहरा हो जायगा।'

'अचल को तो मैं यहीं बुला सकता हूँ—लेकिन वह कुछ व्यस्त रहता है, बहुत कम मिलता है, अथवा, मैं ही उससे बहुत कम मिल पाता हूँ। परन्तु—तुम उसके यहां जाकर सीखना चाहो तो मना कहां करता हूँ ? तुम्हारी स्वतन्त्रता में किसी भी तरह की बाधा नहीं है। जब चाहे तब हो आया करो।'

'मैंने सोचा था यहां बुलवा लिया करूं, परन्तु उनके घर जाना ही ठीक होगा।'

'मुझसे पूछने की ज़रूरत नहीं।'

'पूछा नहीं, वैसे ही कहा।'

'तो अब मैं काम पर जाऊं ?'

'तो क्या यहां बैठना भार हो गया है ?'

'भार नहीं हो गया है। सोचा कुछ काम ही कर लूँ। बखेड़े में पड़ गया है। जब तक बैठा हूं, कुछ गाना ही सुनाओ।'

'कुन्ती ने गाना शुरू किया। सुधाकर ने वाह, वाह। आंख मीच कर ध्यान लगाया कि झपकी लग गई। जैसे ही कुन्ती ने यकायक ऊंची तान ली, उसकी झपकी टूट गई और वह चौंक पड़ा। चौंक को उसने वाह वाह में परिवर्तित किया। कुन्ती ने नहीं समझ पाया। यह वाह वाह कुछ ज्यादा तीखे स्वर में हुई थी, और बे मौके भी। कुन्ती ने कल्पना की कि रसिक तो हैं परन्तु संगीत के पेचों के जानकार नहीं हैं।'

× × × ×

कुन्ती ने लिपस्टिक से ओठों को संवारा। कमरे के दो तीन चक्कर काटे, फिर शीशे में अपने को देखा। लिपस्टिक को छुटा दिया। चेहरे को फिर शीशे में देखा। कपोलों पर हाथ फेरे। 'स्वस्थ हूँ !' ज़रा टहली फिर थोड़ा सा पाउडर लगाया। गौर के साथ अपने को देखती रही। एक क्षण सोचा। पाउडर को पोंछ डाला। ऐसे ही जाऊंगी, उसने निश्चय किया।

जब वह घर से चली उसके चेहरे पर मुस्कराहट थी। ज्यों ही अचल के दरवाज़े पर पहुंची धुकधुकी कुछ तेज़ हो गई। एक दो सांसों में उसने ठीक कर लिया। बैठक के दरवाज़े पर पहुंचने के पहले उसको कुछ बोझ मालूम पड़ा। ओठ सटाते ही वह बोझ हट गया। उसने सोचा, 'यदि बैठक में न हुए तो लौट जाऊंगी, जब मिलेंगे तो उलहना दूंगा—आप मिले ही नहीं,'

परन्तु अचल बैठक में लेटा हुआ कोई पुस्तक पढ़ रहा था। उसको कुन्ती के आने की आहट नहीं मिली। बैठक के दरवाज़े पर पहुंचते ही कुन्ती ने नमस्ते की। चौंक कर अचल ने पुस्तक रख दी। तुरन्त उसका अभिवादन किया और आदर के साथ बिठला लिया।

वार्तालाप कुन्ती ने शुरू किया।

'आप कुछ दुबले मालूम होते हैं। क्या आजकल ज्यादा पढ़ रहे हैं?'

'नहीं तो—हां—परीक्षा की पुस्तकें कम पढ़ी हैं। इधर उधर की पढ़ता रहा हूँ। तुम्हारी पढ़ाई का क्या हाल है?'

कुन्ती के चेहरे पर एक हलकी सी लाली दौड़ गई। उसने उत्तर दिया, 'कभी कभी थोड़ा सा पढ़ा है, (पढ़ा उसने बिलकुल नहीं था) परीक्षा में बैठने का संकल्प मेरा पक्का है। आपके पास कुछ समय हो तो—'

'मेरे पास समय की कमी कभी नहीं रही,' अचल ने कहा: 'जितना चाहो लेलो। फ़ीस भेजने का समय आ गया है। उसके बाद परीक्षा के वक्त थोड़ा सा ही है लेकिन हाज़िरी की कमी का क्या होगा?'

कुन्ती को हाज़िरी की कमी की चिन्ता न थी। पहले एक दिन भी नहीं चूकी थी।

कुन्ती बोली, 'शायद थोड़ी सी कमी रह जाय, तो माफ़ी मिल जायगी। परिश्रम करूंगी तो पास हो जाऊंगी।'

'संगीत में फ़ेल नहीं होगी, इतना तो मैं कह सकता हूं।'

'और विषयों में भी थोड़ी सी सहायता करते रहिएगा।'

'हां, हां, क्यों नहीं ? संगीत का कुछ अभ्यास करती रही हो ?'

'थोड़ा सा तो करती ही रही हूँ नाटकों में भी भाग लिया है। लोग तो कहते थे अच्छा रहा। आपको भी निमन्त्रण दिया था, परन्तु आप एक बार भी नहीं आए ! कभी चाय में भी शामिल नहीं हुए !!'

'परीक्षा निकट आ रही है, इसलिए मैं किसी जलसे में शामिल नहीं होता हूँ।'

'गांव वालों के मुक़द्दमें का क्या हुआ ?'

'अभी चल रहा है। पुलिस ने उस मैजिस्ट्रेट के यहां से मुक़द्दमा उठा लेने की दरख्वास्त दी है।'

'क्यों ?'

'क्यों कि मैजिस्ट्रेट ने मुलज़िमों को ज़मानत पर छोड़ दिया था। पुलिस ने दरख्वास्त दी है कि इस मैजिस्ट्रेट के यहां इन्साफ़ पाने की, यानी सज़ा करा पाने की, आशा नहीं है। मामला हाईकोर्ट गया है। अभी तो ठहरा हुआ है। शायद परीक्षा के बाद उसकी सुनवाई की नौबत आवे।'

'परन्तु सबूत तो पुलिस के पास कुछ था नहीं ?'

'अब बनाएगी। काफ़ी मौक़ा मिल गया है। पुलिस देरदार चाहती थी सो उसको मिल गई।'

'क्या ऐसा भी होता है ? पुलिस की गांठ में सबूत होता तो पहले ही न सामने आ जाता ?'

'सब होता है। मामले को राजनैतिक डकैती का रंग दे दिया गया है। वकील कहते हैं कि पुलिस चल तो क़ानून के अन्दर रही है।'

'आप वकील होते तो कितना अच्छा होता।'

'सोचा है एम० ए० के बाद क़ानून की परीक्षा दूंगा। इस परीक्षा का पास कर लेना काफ़ी सस्ता है। बहुत समय मिलेगा। तब हा हा टी टी, क्लब, गपशप वग़ैरह, सबको, अपना लूँगा।'

कुन्ती ने मुस्कराकर कहा,'ठीक है।'

उस परिचित मुस्कराहट में अचल को वह आभा नहीं मिली जिससे वह परिचित था।

'मालूम होता है घर के काम काज में बहुत घिरी रहती हो। व्यायाम नहीं मिल पाता, इसलिए कुछ दुर्बल हो। हो न ?'

शरम को दबाकर कुन्ती ने उत्तर दिया, 'नहीं तो। शायद कारण सरदी हो। नाटकों में काम करते रहने के कारण ज़रा ज़्यादा जागना पड़ा। क्लब से देर में लौटी, खाने पीने के नियम में बाधा पड़ी, ये ही सब कारण हो सकते हैं।'

अचल जो एक मात्र प्रश्न कुन्ती से करना चाहता था और नहीं कर पा रहा था, वह कुछ और था। अचल ने एक क्षण के लिए अपनी दृष्टि रीती सी की। कुछ सोचा और फिर कहने लगा,

'असल में हम लोगों के जीवन का कुछ विचित्र हाल हो गया है। हम लोग अपने जीवन की क्रियाओं को तीन चौथाई तो विलायती निगाहों से देखते हैं और एक चौथाई या उससे भी कम हिन्दुस्थानी या पुरानी निगाह से। कभी कभी शक होता है कि जान बूझकर हम हिन्दुस्थानी निगाह से शायद किसी भी प्रश्न या समस्या को नहीं देखते। जीवन में स्वाभाविकता कम है।'

कुन्ती को अपने जीवन में किसी बात की भी कमी महसूस नहीं हो रही थी। उसने सोचा यह उसके वर्त्तमान जीवन की आलोचना सी है। परन्तु उसको बुरा नहीं लगा। उसको मालूम था अचल कुछ तटस्थ सा होकर वस्तुस्थिति पर अपना विचार दौड़ाया करता है। उसी प्रकृति का सिलसिला था या है।

कुन्ती बोली, 'हिन्दुस्थानी दृष्टिकोण में है तो बहुत कुछ, परन्तु वह हमको दिखलाई नहीं पड़ता है, क्योंकि हम हिन्दुस्थानी हैं और वह जीवन में घुला हुआ है।'

'यह हो सकता है। शायद ठीक भी हो। जीवन को प्रबल और सशक्त बनाने की ज़रूरत है। चाहे जिस आदर्श या उपाय से बने। शरीर को भी सबल रखने की ज़रूरत है क्योंकि जीवन का उससे घनिष्ठ संबन्ध है।

'मैं कभी कभी नृत्य भी करती रही हूं। नृत्य से मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहता है।'

जिस प्रश्न को अचल मन में दबाए हुए था, वह निकल पड़ा,'तुम सुखी हो कुन्ती ?'

प्रश्न करने के उपरान्त अचल को ऐसा लगा मानो भीतर की कोई रग कहीं उमेठ खागई हो।

कुन्ती ने बिना किसी हिचकिचाहट के उत्तर दिया,

'हां, मैं बिलकुल सुखी हूं।

उत्तर देने के बाद कुन्ती को मन में भासा जैसे उसका कोई भारी बोझ उतर गया हो। और, उसने किसी अनजाने प्रवाह में पड़कर उससे पूछा, 'आप भी सुखी हैं ?'

पूछते तो पूछ गई परन्तु उसने सोचा मुझको ऐसी बात नहीं पूछनी चाहिए थी।

इस प्रश्न के सुनते ही अचल का सारा शरीर तन सा हो गया। एक क्षण वह कुछ उत्तर न दे सका ! फिर बोला,

कुन्ती, मेरे लिए अपने परिचितों और मित्रों के सुख में बहुत सुख है। तुम्हारे सुख की चिन्ता मुझे लगी रही है। मुझको उस चिन्ता के प्रकट करने में कोई अड़चन नहीं मालूम पड़ी। हिन्दू नारी कितनी भी स्वतंन्त्र हो जाय उसका जीवन क्रम अपने पुराने कलेवर से खंडित या अलग नहीं हो सकता। हम लोग शायद एक दूसरे को सुखी कर सकते थे, जन्म भर करते रहते; परन्तु, यह भी संभव है कि तुमको चिर दुःखिनी ही होना पड़ता। तुमको सुखी पाकर मैं वास्तव में बहुत सुखी हूँ। चाहता हूँ सदा सुखी रहो।'

'मैं सच मुच सुखी हूँ और सुखी रहने का उपाय मेरे हाथ में है। इस प्रसंग पर अधिक बात चीत करने की ज़रूरत भी नहीं मालूम पड़ती। परन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि मैं आपके सुख की बात आपसे न पूछूं। तत्काल तो मैं यह कहती हूँ कि आप अपना विवाह करलें। यों अकेले पड़े रहने से कोई सनक सिर पर सवार होगी! बिना इसके कैसे काम चलेगा?'

'जैसे ऊँची जाति की विधवा स्त्रियों का।'

'या जैसे प्राचीन काल के ऋषियों और बौद्ध जैन साधु सन्तों का?'

'ठीक वैसे तो नहीं। मैं अपने को क्षीण नहीं कर सकता?'

'वे संयमी लोग क्या अपने को क्षीण ही करते रहते थे? खूब कहा आपने!'

'वे लोग संगीत को राग दोष में गिनते थे और मैं संगीत को प्राणों के भीतर का जीवन समझता हूँ और आत्मा की स्फूर्ति, समाज का शृङ्गार।'

अचल अपने ही उत्साह पर हँसने लगा।

बोला, 'मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कोई सनक सवार नहीं होगी। आगे चलकर देखूँगा। अभी तो पढ़ने की चिन्ता ज्यादा है।'

'और पढ़ाने की?' कुन्ती ने मुस्कराकर पूछा।

अचल ने उत्तर दिया, 'वह उसी चिन्ता का अङ्ग समझो। नियम पूर्वक काम चलेगा। तुम अनुमति तो ले आई होगी?'

'अनुमति! किसकी अनुमति? मैं चाहे जो कुछ करूँ। फिर उनको मालूम भी है।'

'मैं सुधाकर को जानता हूँ। तो आज कुछ हो?'

'कल से। कभी कभी नृत्य भी करूँगी। चांदी की घुँघरू बन गई हैं।'

'अच्छा! बहुत अच्छा हुआ। चांदी की घुँघरू की खनक भी बहुत मीठी होती है और—'

अचल ने वाक्य पूरा नहीं किया। कुन्ती पूरे वाक्य को सुनना चाहती थी। उसने एक क्षण प्रतीक्षा भी की। परन्तु वह वाक्य को पूरा करने का अनुरोध नहीं कर सकी। एक बार हठ थोड़ा सा उठा भी, किन्तु उसने दबाव नहीं डाला।

कुन्ती घर चली गई।

अचल के मन ने चांदी की घुँघरू की कल्पना करके कुछ काल्पनिक चित्र बनाए और बिगाड़े।

चांदी की घुँघरू से पैर कैसे सज उठेंगे। पैरों में महावर लगा हो तो चांदी का घुँघरू नृत्य सौन्दर्य का प्रवाह सा बहा देगी।

अचल ने एक जोड़ चांदी का घुँघरू अपने यहां भी रखने का निश्चय किया। अविलम्ब बनवा कर रक्खूंगा। कल तक शायद न बन पावे, परन्तु दो एक दिन में अवश्य।

× × × ×

सुधाकर का काम बढ़ने लगा और वह उसका अधिक समय लेने लगा। कुन्ती ने पुस्तकों को अधिक समय देने का प्रयास किया, परन्तु उसका मन पुस्तकों से उतना ही ऊबने भी लगा।

सुधाकर ने कुन्ती को सोने से सजाया, मोतियों से चमकाया और फूलों से सुरभित किया। जिस शृंगार को दो एक बार देख लिया, फिर उसको नहीं दुहराया। शृंगारों के चित्र लिए। फूलों की सजावट बहुत सुहावनी लगती है। वे ज़िन्दा पेड़ पर ज़िन्दगी लिए हुए लहराते रहे हैं। तोड़ने वालों ने सोचा जब ये किसी का शृंगार करेंगे तो उसी ज़िन्दगी को लहर देते रहेंगे—उन्होंने उसके खण्डित क्रम को शायद कभी नहीं देख पाया।

सुधाकर प्रत्येक शृंगार के चित्र ले लेता था। थोड़े समय ही में चित्रों का एक बड़ा एलबम बन गया। उसका मन रीझने की ओर जितना अग्रसर था, उतना रिझाने की ओर न था। कुन्ती को भी शायद

यह सब सुहाता था। परन्तु उसको एक बात खटकने लगी थी—बार बार शृंगार के उपकरणों का उपयोग—वे सब राग रञ्जन, पाउडर इत्यादि। उसको मालूम होने लगा कि स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। नृत्य के सिवाय और कोई व्यायाम नहीं करती थी—न जानती ही थी, शायद वह अन्य कसरतों को भद्दा और भोंडा समझती थी। परन्तु नृत्य में भी उसको उतना उल्लास न रहा, क्योंकि सन्ध्या के उपरान्त सुधाकर की वही सब सजावट, शृङ्गार का कोई नया दृश्य, रीझ का कोई नया पहलू, मन की कोई नई करवट। परन्तु इन नये नये पहलुओं, रीझों और करवटों में वासना को तृप्त करने के लिए ताज़गी न रही। लू की तीखी लपटों में फूलों का टटकापन चला गया और वे मुर्झाने भी लगे।

कभी कुन्ती के मन मे जलन तो कभी सुधाकर के मन में। उस जलन को मिटाने की कभी इसने कोशिश की तो कभी उसने। जलन दबी और भभकी, भभकी और दबी।

मोटर की यात्रा और सिनेमा, एक दूसरे को वास्तव के संसार से हटाकर केवल कल्पना के संसार में देखने के प्रयत्न। दोनों जर्जर से हो उठे।

कुन्ती को अपने स्वास्थ्य की कभी कभी बहुत चिन्ता होने लगी।

जो कुछ कुन्ती चाहती थी उसको सुधाकर नहीं दे पारहा था और जो कुछ सुधाकर चाहता था उसको, शायद, कुन्ती समझ नहीं पारही थी।

उस दिन वे दोनों सिनेमा देखने नहीं गए।

सुधाकर ने कहा, 'काम पर जाता हूं तो ठिकाने से ध्यान ही नहीं लगा पाता हूँ। तुम्हारा तक़ाज़ा बार बार याद आता है, सवातीन बजे ज़रूर आजाना।'

'फिर भी समय पर कभी नहीं आते हो।'

'इसीलिए, तुम तालीम के लिए निकल पड़ती हो।'

'यहां सड़ते सड़ते थक जो जाती हूं। और, मेरा मन सबसे ज़्यादा परीक्षा के पास करने की ओर है भी।'

'मैंने तुम्हारे सजाने के लिए कमल के फूल लाने की इच्छा की, परन्तु मिल नहीं सकते हैं जाड़ों में। इसलिए, गुलाब के फूल लाया हूं। हैं ताज़े और अच्छे। देखोगी तो जान पड़ेगा मानो पौधों पर लहलहा रहे हों।'

'मैं तो थक गई गुलाब के फूलों से। गुलाब से तो जी मचला उठता है।'

'चमेली भी लाया हूं।'

'चमेली से मुझको घिन है। मालूम होता है जैसे मौसम को बीमारी लग गई हो।'

'तब क्या करूँ, समझ में नहीं आता।'

'मैं तो सीधे सादे तौर पर रहना चाहती हूँ, जैसे पहले रहती थी। यह सब बनावट छोड़ो। तुमको क्यों इतना मज़ा आता है?'

'सजावट में सौन्दर्य खिल उठता है।'

'और सादगी में?'

'सादगी में भी रहता ही है, पर मुझको सजावट तो नशा सा ही देदेती है।'

'शराब न पीने लगो।'

'तुम जब सामने रहती हो तो शराब की तुच्छता खूब समझ में आने लगती है।'

'मैं कहती हूं अब स्वाभाविक क्रम से रहने की चर्या बनाओ।'

'तुम परिभाषा और रूढ़ियों की भक्त कब से हो गईं?'

'आनन्द के लिए जितना खेलकूद चाहिए उतना नियम भी चाहिए।'

'आज तो बहस शुरू हो गई है, खेलकूद कहां है? बिना आमोद प्रमोद के आनन्द कहां?'

'तो सिनेमा देखने चलो। दूसरे शो के लिए अभी काफ़ी देर है।'

'उसमें भी वही पुराने तर्ज़ के नाच और गाने होंगे। उनसे तो तुम्हारा ही बहुत अच्छा रहता है। हां नम्बर दो के सिनेमाघर में ज़रूर कोई नया नृत्य है। नाचने वाली ऐसी अदा से नाचती है और इतनी तेज़ी, इतनी तेज़ी से भंवरी लेती है कि एक स्थिर चित्र सा बन जाता है। कई नर्तकियां मिलकर कमलों के आकार की, कमलों के खुलने और मुदने की नक़ल करती हैं। कमाल मालूम पड़ता है।'

'उस तेज़ नाचने में कुछ अश्लील भी होगा?'

'ऐसा कुछ अश्लील भी नहीं है। और, कुछ अश्लील तो थोड़ा बहुत सब जगह रहता ही है। बिना थोड़ी सी अश्लीलता के लोगों को मज़ा भी तो पूरा नहीं मिलता।'

'तुमको भी अश्लीलता अच्छी लगती है?'

'थोड़ी सी।'

'और स्त्रियों को भी अच्छी लगे तो?'

'अच्छी न लगती होती तो इतनी स्त्रियां सिनेमाघरों में जाती ही क्यों? मां बाप के साथ जाती हैं, भाइयों के साथ जाती हैं।'

'बात ठीक कहते हो—और शायद ठीक न भी हो। तो चलो सिनेमा देख आवें।'

दूसरे शो में दोनों अच्छी जगहों में जा बैठे। अभी आरम्भ नहीं हुआ था। भवन में बिजली की तेज़ रोशनी थी। बालों में चमाचम तेल डाले हुए बहुत से छोकरे इधर उधर आंखें फेर रहे थे। और कुछ स्त्रियां भी भटकती हुई दृष्टि से कुछ टटोल रही थीं, जैसे किसी खोए हुए को ढूंढ़ रही हों।

खेल शुरू होने के पहले ही अन्धेरा हो गया और अपने समय पर वह नाच वाला दृश्य पट पर आया। लोगों ने हर्षमान होकर वाह, वाह की। कुछ ने तालियां भी पीटीं। दो एक ने कुछ बका भी।

सुनने वालों ने न तो कान मूंदे और न दांत भींचे।

मुधाकर ने धीरे से कुन्ती से कहा, 'इस नृत्य में कला भी है, पर अश्लीलता अधिक। इसीलिए लोग पसन्द कर रहे हैं।'

'अश्लीलता!' कुन्ती ने धीरे से किसी कष्ट की सांस को दबाकर आश्चर्य प्रकट किया: यह तो हद दर्जे की बेशर्मी है। स्त्रीजाति भर को लजाने वाली।'

जब नाच खतम होगया फिर ताली पीटी।

सुधाकर ने फिर धीरे से कहा, 'लोग भिन्नता चाहते हैं। एक रसता में फीकापन आ जाता है। कला तो वह है जो सदा ताज़ा मज़ा देती रहे।'

खेल खतम होने के बाद वे दोनों घर आए। सुधाकर उद्दीप्त था और कुन्ती खिन्न।

सुधाकर ने अनुरोध किया, 'अभी बहुत विलम्ब नहीं हुआ है। जाड़े की रातें हैं। तुम्हारा थोड़ा सा गाना हो जाय और घुँघरू के साथ नृत्य। थोड़ी सी नक़ल उस नृत्य की भी हो जाय। तुम कर सकती हो। कुछ मिनिट के लिए ही सही।'

'कभी नहीं। मुझको नींद आरही है। सोऊँगी।'

'अभी तो नहीं सोने दूँगा।'

'मेरा माथा फटा जारहा है।'

'अच्छा खैर मैं तो देर में सो पाऊँगा।'

'देर में सोओ चाहे जल्दी सो जाओ।'

× × × ×

[१९]

जिन लोगों को उस गांव के 'राजनैतिक डकैती' वाले मामले में दिलचस्पी थी वे सोचते थे, पुलिस झूठा सबूत बना रही है। पुलिस यह सब कुछ नहीं कर रही थी। वह नया मामला गढ़ने में व्यस्त थी। हथियार इकट्ठे करने, या षड्यन्त्र करने के मुक़द्दमें की तलाश में। जहां यह साधन हाथ लगा कि फिर पकड़कर जेल में डाल दिया। कहां तक कोई ज़मानत देगा—देखें।

हिन्दू माली शासन को दिल्ली के पठान बादशाहों ने फ़ौजी मूठ दी। उसके थोड़े से ही परिवर्तित रूप को टोडरमल ने अकबर को दिया। अकबर और उसकी सन्तान ने उसको ईरानी शान के चौखटे में जड़ दिया। अंग्रेज़ों ने उस चौखटे को कोट पतलून और क़ायदे से कस दिया।

अंग्रेज़ी शासन के तीन बड़े आधारों में से जन्मजात अधिकार वाले, फ़ौज और पुलिस—पुलिस जनता के सामने सदा एक न एक रूप में रही है। दुःखदायी रूप में अधिक। पुलिस ने, हिन्दू माली शासन से भविष्य—चिन्ता, पठानी हुकूमत से फ़ौजी मूठ, मुग़ली चमत्कार से ईरानी शान और अपने अंग्रेज़ मालिकों से क़ायदे की कड़क पाई। शायद ही कोई पुलिस वाला इस मिश्र-मेल से बचा हो। जिस एकाध विरले ने इस त्रिकुटि से बचने की फ़िक्र की वह या तो धकिया कर निकाल दिया गया या पुलिस छावनी में उसने अपना जीवन बिताया।

'यू आर मिक्स्ड अप इन सिविलडिसोबिडिएन्स'—किस पुलिस वाले में सुनने की हिम्मत थी?

जिस थानेदार के हलक़े में यह गांव था वह रिश्वत नहीं लेता था। भगवान का नाम भी अक्सर लेता था। परन्तु 'कप्तान साहब' के बतलाए हुए मार्ग की उपेक्षा नहीं कर सकता था।

'कप्तान साहब' ने कहा था, 'हम नहीं चाहते कि झूठा सबूत खड़ा करो। मगर इसमें कोई शक नहीं कि गांववालों की ही बदमाशी है। इस

मामले में सबसे ज्यादा खतरनाक बात यह है कि बदमाशों ने हथियार इकट्ठे किए हैं और उनका उपयोग वे लोग क्रान्तिकारियों के साथ मिलकर करेंगे। बड़ी शरम की बात है, तुम इन हथियारों का पता नहीं लगा सकते हो ! चुस्ती के साथ कोशिश करो।'

थानेदार उत्तर में केवल 'हुज़ूर' कह सका। वह कई बार गांव में दौरा कर चुका था, परन्तु थोड़ी सी हू-हुड़क के बाद लौट आया करता था। अबकी बार 'विशेष प्रयत्न' करने या 'विशेष प्रयत्न' की जड़ डालने का संकल्प करके आया।

उस गांव में शासन का प्रतीक थोबन माते था। थोबन माते से उसने सलाह की।

थोबन ने सुझाव पेश किया, 'किसी के घर में बन्दूक, किसी के में टोपियां और बारूद, और किसी के घर में गोलियां रखवा दीजिए न ! यह न हो सके तो छुरियां और तलवारें ही सही।'

थानेदार ने इस सुझाव को नामन्जूर किया। बोला, 'मेरी थानेदारी का तो कुछ नहीं बिगड़ेगा, लेकिन तुम्हारी मुखियाई, लम्बरदारी झंझट में पड़ जायगी। तुम्हारा लड़का कांग्रेस में है ही।'

थोबन—'कांग्रेस में तो वह मतलब निकालने के लिए है। काम तो वहां कोई खास करता नहीं है। औरतों का एक जलूस निकला था, वह उससे अलग रहा।'

थानेदार—'साहब नाराज़ हैं। इस तरह काम नहीं चलेगा। कुछ करना पड़ेगा।'

थोबन—'कुछ औरतें बड़ी तेज़ी पर आगई हैं। उनकी पकड़ धकड़ का नतीजा अच्छा रहेगा। पद्ममा और गिरधरिया की औरतों को पकड़ते हो। उनमें से कुछ रान उटेंगे।'

थानेदार—'औरतों ने सरकार के खिलाफ़ कुछ कहा था ?'

थोबन—'कहा तो नहीं था, पर गवाहियों से बयान करवाया जा सकता है।'

थानेदार—'इससे प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। औरतें चाहे जहां झंडे उठाकर जलूस निकाल पड़ती हैं। कोई खास बात नहीं है। इन लोगों ने घास की गंजियां, खलियानों या अपनी रिश्तेदारियों में हथियार छिपा रक्खे होंगे। पता लगाओ।'

थोबन—मैं कोई कसर उठा नहीं रक्खूँगा। आग वाले मुक़द्दमें का हाईकोर्ट से कोई फैसला नहीं हुआ अब तक! कब तक होगा!

थानेदार—'कई महीने की देर है। पर उस मुक़द्दमें में होना क्या है टालाटूली हो रही है सबूत कुछ है नहीं। कोरे हाथ आओगे उस मुक़द्दमें में से। इस मुक़द्दमें को करो तय्यार। दस दस बरस की सज़ा होगी। थोड़े से सबूत से ही काम चल जायगा।'

थोबन—'मैं पूरी कोशिश करूँगा।'

थानेदार—'ढीली कोशिश नहीं, जानकी बाज़ी लगा कर कोशिश करना। मुझको बराबर खबर देते रहना। जहां तक हो सके थाने पर खुद आना। देखो डटकर काम करना। नहीं तो अबकी बार तुम्हारी इज्ज़त धूल में मिल-जायगी, मेरा बहुत से बहुत होगा तो यहां से तबादला हो जायगा,

थानेदार चला गया। थोबन प्रयत्न शील हुआ। परन्तु उसके हाथ में सूत कोई पड़ ही नहीं रहा था।

पञ्चम और गिरधारी के दल को विश्वास था कि थानेदार आता है और सिर पटक कर चला जाता है। वो भय भीत नहीं थे। मन में ओज था।

शहर के हिसाब से वे लोग मज़दूर वर्ग के थे और गांव के पैमानों से मध्यमवर्ग के।

शहर के मध्यमवर्ग ने राष्ट्रीयता की चेतना पाई। उस चेतना को शहरों के मजदूरवर्ग ने सबल किया, परन्तु इन दोनों वर्गों में सहयोग होते हुए भी कुछ अन्तर बना रहा। गांवों के मध्यम और मज़दूर वर्गों

में जातपांत के अन्तर के सिवाय कोई खास अन्तर न था। इसलिए गांवों में जो भी आन्दोलन हुआ उसकी गति प्रगति शीघ्र द्रुत हो बैठी। आंधी सी आई और आंधी पर आंधी आई। और यह आंधी न केवल पुलिस के थानों से जा टकराई, बल्कि गांवों के जन्म जात अधिकारों को उसने समूल हिला दिया वे जो इन वर्गों को सदियों से दाबे चले आए थे और अब इन आंधियों को अधिकारियों के सहारे से पुराने रिवाजों की दुहाई देकर, अपनी भद्दरंगी शान में बांधे रहना चाहते थे।

गिरधारी ने पञ्चम से कहा,' थोबन थानेदार से मिलकर कोई रचना रच रहा है।'

पञ्चम ने मन्तव्य दिया,' अरे यार, सब घबरा उठे हैं। वक्त आने पर देखा जायगा। कोई रचना काम नहीं देगी थोबन को यहीं, और थानेदार को वहां के वहां ही ठीक न किया तो बात काहे की।'

'शहर वाले भी अपनी मदद करेंगे।'

'करना ही चाहिए। और चुप भी बैठे रहें तो अपनी लाठी उठखड़ी होने के बाद बैठने का तो फिर नाम जानती नहीं।'

'नहीं वे लोग मदद करेंगे। अब की बार उन बहिन जी को लिवा लाना चाहिए।'

'उनका ब्याह सुधाकर बाबू के साथ हो गया है। शायद दोनों आवें।'

'मैं सोचता था अचल बाबू के साथ होगा।'

'अचल बाबू को लाना चाहिए। सुधाकर भी अच्छे हैं, परन्तु वे रुपया कमाने में लग गए हैं। अचल पढ़ते रहने पर भी अपने यहां कभी कभी आ जाते हैं और राजनैतिक काम के पीछे पढ़ना भी छोड़ सकते हैं सुधाकर अपने गांव में कभी आए ही नहीं।'

'परन्तु उनसे भी कहेंगे। जब कभी उनके घर जाओ खाना खिलाए बिना नहीं मानते। सुधाकर और उन बहिन जी को अवश्य बुलाना चाहिए। वे काफ़ी तेज़ है। उनको देखकर थोबन और भी बहुत

सिकुड़ेगा। हमारे आन्दोलन में स्त्रियाँ जब इतनी तेज़ हैं तो पुरुष कितने कितने विकट न होंगे।'

'अच्छी बात है। अचल बाबू किसी न किसी तेज़ स्त्री को साथ लायंगे। उनका बहुत मान है। अपनी फ़सल काटकर गाहलें फिर यही सब तो करना है।'

[२०]

सुधाकर के क्लब में उस रोज़ केवल वह और उसके दो मित्र थे, स्त्री कोई न थी। कुन्ती ने क्लब में आना लगभग छोड़ दिया था।

ठंड उतार पर आगई थी, परन्तु उस दिन तेज़ हवा चलने के कारण कुछ तीखी थी। क्लब में गरम चाय और चटपटी पकौड़ियों की ठहरी।

चाय और पकोड़ियों के बीच में सुधाकर के एक मित्र ने कहा, 'मेम्बरों के लिए कम से कम एक घंटे की हाज़िरी अनिवार्य कर देनी चाहिए। जो कोई बिना किसी विशेष कारण के नियम भंग करे उस पर सब मैम्बरों की एक चाय का जुरमाना किया जाय।'

दूसरे मित्र ने समर्थन किया, स्त्री–मेम्बरों के लिए भी यह नियम अनिवार्य रक्खा जावे, पर उन्होंने तो अपना अलग क्लब ही कर लिया है।'

इस समर्थन के भीतर स्त्रियों के सम्बन्ध का संशोधन सुधाकर को नहीं रुचा।

'स्त्रियों के लिए अनिवार्य करना व्यर्थ है। आना न आना उनकी इच्छा पर छोड़ना चाहिए। स्त्रियों के लिए कोई आकर्षण, कुछ नया मनोरञ्जन रक्खा जाय तो नई मैम्बर भी बन सकती हैं,' सुधाकर ने पकोड़ियां खाते खाते कहा।

'कुन्ती का जब नाटक में अभिनय और नृत्य होता था तब स्त्रियां अधिक आती थीं। वे फिर आने लगें तो क्लब चेत जाय,' एक मित्र ने अनुरोध किया।

दूसरे ने हल निकाला, 'यदि उनसे कहा जाय कि वे स्वयं नाटक लिखकर खेलें तो उनका उत्साह फिर जाग उठेगा।'

सुधाकर ने उन लोगों के उत्साह पर पानी डाल दिया, 'वे अपनी परीक्षा की तैयारी की धुन में हैं; दूसरे, क्लब के जीवन से कुछ विरक्त सी हैं; तीसरे, जब कभी जाना होता है तब स्त्रियों के क्लब में चली जाती हैं।

मैं उनकी स्वतन्त्रता में रत्ती भर भी बाधा नहीं डालना चाहता और न डालता हूँ।'

अपने हल पर इस प्रकार पानी पड़ते देख कर उस मित्र को अच्छा नहीं लगा, बोला,

'चौथे, वे बचे खुचे समय में अचल कुमार के यहां जा बैठती हैं।'

सुधाकर के कलेजे में सांग सी छिद गई।

'मैं कुन्ती को पूरी आज़ादी दिए हूँ, चाहे जहां बैठा उठा करें।'

'सो तो मैं भी आज़ादी का सोलह आने पक्षपाती हूँ, परन्तु उनके कार्य क्रम से हमारा क्लब सूना हो गया है और शायद किसी दिन हम तुम तीन चार मैम्बर ही रह जायंगे जिनको ब्रिज, सोलो और रमी अपनी जान से कम प्यारे नहीं हैं। बाक़ी सब फिसल जायंगे। नियम की अनिवार्यता सिर्फ़ काग़ज़ पर लिखी रह जायगी।' उस मित्र ने दूसरे को टेहुनी की टेक देकर कहा, 'तुम तो पकौड़ियां पर ऐसे चिपट गए हो कि जैसे कभी आगे मिलेंगी ही नहीं।'

दूसरा मित्र बोला, 'मैं सोचता था तुम दोनों निबट लो, तब तक चटपटी पकौड़ियां और गरम चाय की मदद से मैं अपना एक थीसिस (प्रसंग) पका लूँ फिर अखाड़े में उतर पड़ूँ।'

सुधाकर—'ज़रा मैं भी सुनूँ हज़रत का थीसिस है क्या?'

दूसरा मित्र—'ज़रा ठहर कर। मैं खाने पीने के मामलों में अखंड क्रम का भक्त हूँ।'

पहला मित्र—खाए जाओ, परन्तु इतनी गुंजाइश रखना कि क्लब में फिर आने के लिए मनमें प्रेरणा बनी रहे। तब तक मैं ही सिलसिला जारी रखता हूं।'

उसने चाय पीते पीते शीघ्रता के साथ एक बारीक दृष्टि सुधाकर पर डाली और दूसरी ओर पलट दी। शंका थी, कुन्ती को क्लब में बुलाने की हठ मूलक इच्छा पर, सुधाकर को कोई खुटक तो नहीं हुई है।

उसको ऐसा कोई लक्षण प्रतीत नहीं हुआ। बोला, 'स्त्रियों और पुरुषों के जब तक सम्पर्क नहीं बढ़ते तब तक केवल पर्दा टूटने से स्त्री को अधिक लाभ नहीं है।'

सुधाकर ने कहा, 'परन्तु यह सम्पर्क स्त्रियों की मर्ज़ी के खिलाफ़ तो बढ़ाए नहीं जा सकते।'

उस मित्र ने एक सुझाव दिया, 'उत्साहित तो किए जा सकते हैं? अभी तो ऐसा जान पड़ता है जैसे स्त्रियों के अलग काबुक हों और पुरुषों के अलग।'

सुधाकर ने प्रश्न किया, 'क्या कारण हो सकता है?'

उस मित्र ने उत्तर दिया, 'पुराना अभ्यास कारण हो सकता है। बुड्ढी बुढ़ियों का प्रभाव। प्राचीन—अति प्राचीन—आचारों विचारों से उत्पन्न हुआ अज्ञान।'

पहले मित्र ने पकौड़ियां छोड़कर चाय पीना शुरू किया और बात करना!

बोला, 'स्त्रियों को आज़ादी अभी मिली कहां है? आज़ादी की झांई या परछाईं ही शायद दिखलाई पड़ी है। मैं तो स्त्री की आज़ादी की कसौटी समझता हूँ किसी भी स्त्री का अकेली यात्रा करना। समाज की सभ्यता की यही कसौटी समझी जानी चाहिये।'

सुधाकर—'परन्तु स्त्री इतनी दृढ़ और प्रबल हो जाय तब न? स्त्री दूर यात्रा में कहीं अकेली गई और किसी ने उस पर वार कर दिया तो?'

दूसरा मित्र—'बर्बर समाज में ही हो सकता है यह। इसीलिए तो मैंने उस बात को समाज की सभ्यता की कसौटी कहा है। शरीर की दृढ़ता और सबलता आदर करवा लेती है यह सही है, परन्तु दुर्बल स्त्री के साथ भी कोई किसी किस्म की छेड़छाड़ न कर सके तब समझिए समाज में पूरी सभ्यता का नियन्त्रण है।'

पहला मित्र—'तो यही था तुम्हारा वह प्रसङ्ग, थीसिस, जो इतनी पकौड़ियों का कचूमर करवा कर प्रकट हुआ ? पहाड़ खोदा, चुहिया निकली !!'

दूसरा—यह तो तुम्हारी बात के सिलसिले में मैंने कहा। मैं जो पेश करना चाहता था वह यह है। इस आजादी के क्रम में स्त्रियों को संबन्ध विच्छेद डिवोर्स का अधिकार मिलना न मिलने के बराबर है। कितनी कठोर कठिनाइयों के बाद स्त्री अपने कूड़ा कर्कट रूपी पति से पीछा छुड़ा सकती है ! पहले स्त्री को आर्थिक स्वतन्त्रता मिले तब वह संसार में अपना व्यक्तित्व या निजत्व पा सकती है और बढ़ा सकती है। तुम कहोगे, पुरुष ही तो बेकारी के मारे परेशान हैं, स्त्रियां काम के बटवारे में शामिल हो गईं तो बेकारी कई गुनो बढ़ जायगी। मैं कहता हूं उत्पादन और उपज को बढ़ा दिया जाय तो बेकारी किसी को भी नहीं सता सकेगी।'

पहला—'यह हुई आपकी दूसरी चुहिया ! जिस बात को सैकड़ों बार कह दिया गया है उसको पकौड़ियों के हज़म करने का नुस्खा ही बना रहे हो न !'

दूसरा—'सुने भी जाओ—'

सुधाकर—'अभी क्या हुआ है ? पकौड़ियों के अनुपात से हो चाय पेट में जा रही है। तीसरे प्याले पर शायद प्रसङ्ग का रूप प्रकट हो। अभी तो उसका यह पेशखेमा है शायद। क्यों जी !'

दूसरा—'कुछ, कुछ। खाने पीने और ज़रज़ेवर की परिस्थितियों के कारण स्त्री को पुरुष का जो परावलम्ब लेना पड़ता है और जिसके कारण स्त्री स्वाधीन नहीं हो पाती, वह तो इस प्रकार हल हो जायगा। भूख ने जो ढेरों कुरूप शकलें पैदा की थीं वे खतम हो जायंगी, परन्तु यह तो स्त्री की दासता का एक ही पहलू है। हंगर (भूख) का पहलू। दूसरा है सैक्स का। उसको यौन या काम सम्बन्धा कहलो। कुछ लोग सोचते हैं भूख सम्बन्धी समस्याएं अपने आप हल हो जायंगी। मैं कहता हूँ कभी नहीं।'

सुधाकर—'क्योंकि तीसरा प्याला अभी हाथ में नहीं आया है, और पकौड़ियों की तरफ़ शायद नियत में फिर चल पड़ उठे। ·ठीक थोड़े ही है।

दूसरा—'यह संभव है। संभव जो नहीं है' वह है सम्बन्ध–विच्छेद वाले लुञ्जपुञ्ज क़ानून द्वारा स्त्री को वास्तविक आज़ादी का दिलाना। न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी। सम्बन्ध–विच्छेद–क़ानून ने इतनी कराल शर्तें रख छोड़ी हैं कि शरम वाली स्त्री तो कचहरी के दरवाज़े पर जावेगी नहीं। इससे तो हिन्दू नारी आत्मघात कर लेना ज्यादा अच्छा समझेगी। मेरी समझ में मन–मुटाव होते ही स्त्री पुरुष को एक दूसरे से अलग हो जाना चाहिए और क़ानून को इसे मान लेना चाहिए।'

सुधाकर—'उस मन–मुटाव को दूर करने के प्रयत्नों, साधनों और उनकी व्यवस्थाओं से आपको कुछ मतलब ही न ठहरा! आपके सपने के लोक की और कोई बात?'

पहला—'शायद क़ानून की रोकें-टोकें और बाधाएं इसीलिए हैं कि दम्पति आपस के मन–मुटाव को शान्त करलें और भेदों को पाट पूट लें। परन्तु जहां व्याह सम्बन्ध प्रेम द्वारा होते होंगे, जैसे स्वयम्बर, वहां जन्म-पर्यन्त मन–मुटाव और भेद पैदा ही न होते होंगे।'

सुधाकर ने एक उठी हुई सांस को नाक से सहसा फटकार दिया।

दूसरे ने प्रश्न किया, 'तो फिर रनवासों में एक के बाद दो और दो के बाद चार और चार के बाद बेहिसाब रानियां और दासियों का होना क्या साबित करता है?'

पहला—'राजा लोग अपवाद हैं। इतना ढेरों खाने को और आराम करने को, कि, पेट में हजारवां हिस्सा भी जिसके लिए जगह नहीं; उनको एबनॉर्मल, विरल, कहना चाहिए। जिनको मिहनत करके कमाना खाना पड़ता है उनकी बात करो। उनके लिए एक विवाह काफ़ी है, एक स्त्री के रहते दूसरी वर्जित जैसा यूरोप, एमेरिका इत्यादि सभ्य देशों में है।'

दूसरा—'इस व्यवस्था से या सम्बन्ध-विच्छेद से मन-मुटाव और भेद बन्द नहीं हो सकते हैं। सैक्स की समस्या इससे हल ही नहीं हो सकती। जिन देशों में एक विवाह की व्यवस्था जारी है उन देशों के नर-नारियों-दोनों-में, सम्बन्ध-विच्छेद के कम बढ़ सुबीते होते हुए भी अकल्पनीय व्यभिचार है। जिन देशों में स्त्री पुरुषों के सहज मिलन के खिलाफ़ कड़े प्रतिबन्ध हैं उन देशों में सैक्सपर्वर्ज़न्स, काम-विकृतियां, ठसाठस भरी पड़ी हैं।'

सुधाकर—'जैसे? किन देशों में?'

दूसरा—'जैसे' बतलाने के बाद दंगा-फ़सादों की नौबत आ जायगी—'

सुधाकर—'अच्छा, अच्छा। खतम करो न अपना थीसिस।,

दूसरा—'चाय खतम हो गई, अब थीसिस भी समाप्ति पर आ रहा है। अकुलाओ मत। घर पर-घर पर-अभी घर जाकर करोगे भी क्या?'

पहले ने बिना किसी उद्देश्य के कहा, 'अभी कुन्ती देवी घर लौट कर न आई होंगी।'

सुधाकर के हृदय में दूसरी सांग सी चुभी।

सहकर बोला, 'अभी वे अपने क्लब से न लौटी होंगी।'

बिना किसी उद्देश्य के ही पहले के मुँह से निकला। 'या और कहीं से।'

इसको भी सुधाकर ने सह लिया।

उन दोनों में से किसी ने नहीं देखा कि आधे क्षण के लिए सुधाकर का चेहरा गर्दन तक लाल हो गया था।

दूसरा कहता गया, 'बात यह है कि शारीरिक सौन्दर्य कोई टिकाऊ चीज़ नहीं है, जन्म भर तो किसी भी हालत में नहीं रहता। यदि सौन्दर्य अनन्त हो तो उससे बढ़कर बुरा और कुछ हो नहीं सकता—'

पहले ने टोका—'पुराने ऋषि इस बात को जानते थे। विवाह को उन्होंने सन्तान उत्पन्न करने का और एक अवस्था तक शारीरिक सुख पाने

का अपरिहार्य काम वासना शान्त करने का, साधन बतलाया था। उस अवस्था के तुरन्त पीछे उन्होंने आध्यात्मिक क्रियाओं की व्यवस्था की थी जिसको किसी ने रामभजन का रूप दिया, किसी ने परसेवा, एकान्त मनन, तीर्थ सेवन इत्यादि का। पुरानी व्यवस्था को वर्तमान समाज की आधुनिक मांगों के अनुसार बदल कर अपना लिया जाय तो कोई कष्टदायक सवाल उत्पन्न नहीं हो सकता कि शारीरिक सौन्दर्य कितने दिनों रहता है और कितने दिनों नहीं रहता।'

दूसरा—'उन ऋषियों के ही ज़माने में तो राजा और अभिजातवर्ग के लोग बहु विवाह इत्यादि द्वारा सौन्दर्य की नित्य नई चाह को शान्त किया करते थे।

पहला—'प्रतिबन्धों का सामूहिक नाम व्यवस्था है। ऋषियों के समाज में दोष दिखलाई पड़े, उन्होंने व्यवस्थाओं के रूप में अपने सुझाव दिए। उस व्यवस्था को तब नहीं मान पाया तो अब माना जा सकता है।'

सुधाकर—'बात तो ठीक है।'

दूसरा—'बिलकुल ठीक नहीं। अब सुनो मेरा थीसिस। मेरी राय है कि विवाह संस्कार कदापि न माना जाय। सिवाय हिन्दुओं के अब उसको कोई नहीं पूजता। विवाह को महज़ एक सिवल कन्ट्राक्ट, केवल एक पारिस्परिक इक़रार माना जाय। और, उस इक़रार की ज़िन्दगी एक साल या दो साल की रक्खी जाय। पति पत्नी हर दूसरे तीसरे साल उस इक़रार को ताज़ा कर सकते हैं। न करें तो विवाह सम्बन्ध को छिन्न-भिन्न खण्डित समझ लिया जाय। बस सम्बन्ध-विच्छेद की यही शकल उचित और विवेक संगत जान पड़ती है।'

वे दोनों यकायक हँस पड़े। इतना हँसे कि हँसी का प्रवाह सा फूट पड़ा। थीसिस वाला गुस्से में तश्तरी की ओर देखने लगा जिसमें थोड़ी सी पकौड़ियां और पड़ी थीं।

सुधाकर ने हँसते हुए कहा, 'यार मेरे मुझको नहीं मालूम था तुम इतने बड़े विचारक और संसार-सुधारक हो ! और वकीलों के मित्र !! दो दो तीन बरस बाद इक़रारनामों को ताज़ा करो !!! करो इस क़ानून के अर्थ और अनर्थ !!!!'

अपने गुस्से को दबाते हुए वह बोला, 'किसी दिन महसूस करोगे मेरी बात की सचाई को ।'

सुधाकर के पहले मित्र ने कहा, 'अपनी श्रीमती जी से बहस करके आए या नहीं इस विशाल प्रसङ्ग के ऊपर ?'

दूसरा बोला, 'किसी श्रीमती से बहस करने की ज़रूरत नहीं है। क़ानून बना दिया जाय बस सब मान लेंगी।

पहला—'भाई गुस्सा मत हो। क़ानून बना डालने से सब कुछ नहीं हो जाता। समाज की अवस्था के अनुरूप क़ानून बनता है।'

दूसरा—'तो तुम्हारे ऋषियों ने अपने युग के समाज के अनुरूप व्यवस्था क्यों नहीं की ? क्यों अपनी व्यवस्था में इतने कठोर, और अस्वाभाविक बन्धन भर दिए ?

सुधाकर मज़ाक पर आ गया। बोला, 'क्या श्रीमती जी तुमको छोड़ने वाली हैं ?'

उसने ज़हरीला तीर छोड़ा, 'श्रीमती जी छोड़ना चाहेंगी तो मैं इनकार नहीं करूँगा, परन्तु,—थोड़ी देर के लिए मान लो,—तुम्हारी श्रीमती जी किसी दूसरे पुरुष से प्रेम करने लगें और वे तुमको छोड़ना चाहें तो तुम क्या करोगे ? या तुम किसी से प्रेम करने लग जाओ तो क्या होगा ?'

सुधाकर सन्न रह गया। गले तक क्रोध उमड़ आया। कुछ कर बैठने के लिए उसकी बाहें फड़क गईं। आधे क्षण के लिए एक चित्र आंखों के सामने घूम गया—कुन्ती अचल के साथ प्रेम करती है—परन्तु वह भयंकर चित्र तुरन्त नष्ट हो गया। मन के एक कोने से आवाज़ निकली, असम्भव।'

सुधाकर और उसके मित्रों का वह क्लब शायद उसी घड़ी अपनी इति कर गया होता, परन्तु सुधाकर के एक दूसरे मित्र ने परस्थिति को संभाल लिया। वह तिनक कर बोला,

'तुम यार न सिर्फ़ ख़ब्ती हो, बेवकूफ़ भी हो। कुन्ती देवी अब भी अपने क्लब की मैम्बर हैं। हमलोग चाहते हैं कि उनकी मैम्बरी जारी रहे तथा अन्य स्त्रियां भी आया करें, परन्तु यदि वे सुनें कि उनके सम्बन्ध में इस तरह की भी बहस हो उठती है तो चला तुम्हारा क्लब खूब! और मिली पकौड़ियां और चाय की बहार बेशुमार!! उसकी जगह पीठ पर पड़ उठेगा कुछ और!!!'

सुधाकर ने क्रोध को पीजाना ज्यादा अच्छा समझा। बातचीत ही तो थी केवल। महज़ मज़ाक ही तो था। उसी ने उस तरह का मज़ाक शुरू किया था। फिर झगड़ा करने का फल क्या? झगड़ा बढ़ा तो नौकर सुनेंगे। बाहर चर्चा होगी। सिवाय बदनामी के और कोई नतीजा नहीं। और बदनामी भी किस कारण? न जिसका सिर, न पैर।

उसने हँसने की कोशिश की। प्रसंग को हँसी में बुझाने की, ठंडा करने की कोशिश। उसके पहले मित्र की बात में कुछ गंभीरता, कुछ भर्त्सना कुछ उलहना था। सुधाकर उसको भी ढक देना चाहता था। उसकी ज़रा भी इच्छा नहीं थी कि उसके दोनों मित्रों में से किसी के भी मन में गंभीरता या खिन्नता की छाप या छाया तक रहे।

सुधाकर को पहले फीकी हँसी आई, फिर वह बरबस खिलखिलाया। बोला, 'क्लब रहेगा और चाय पकौड़ियों की बहार भी बेशुमार रहेगी।'

सुधाकर का वह मित्र मुस्कराया, बरबस हँसा भी। अपने मनमें उसने अपने आप को कुछ मूर्ख सा भी प्रतीत किया। कुछ कहना चाहता था। सुधाकर तुरन्त बोला, 'तुम्हारा थीसिस खतम होगया या कुछ बाक़ी है? इतने पर ही तो किसी सुधार-सभा का तुमको पदक मिलना चाहिए।'

वे दोनों मित्र हँस पड़े।

बीनो को और भी बिसराने के लिए सुधाकर ने अनुरोध किया, 'अभी थोड़ा और बैठेंगे। कल शायद न आसकूं, काम बहुत है। और, आया भी तो ज़रा विलम्ब से आऊँगा। तुम्हारा विषय बहुत रोचक है।'

थीसिस वाले मित्र ने कहा, 'क़ायदे क़ानून तो कौन उस तरह के बनाने चला है? इसके मसौदे की बात चलने ही हाय तोबा और तू तू मैं मैं का ऐसा बेतहाशा तूफ़ान उठेगा कि मसौदा पैदा होते ही खाक में मिल जायगा—इसीलिए मैंने कहा था कि क़ानून पास ही कर डाला जाय, बिना किसी से पूछे तांछे। पर यह संभव नहीं है। एक बात संभव और सहज है संसार भर के लिए लागू हो सकती है। वह यह कि पत्नी के रहन सहन, चाल चलन, गति प्रगति पर पर्दा डाले रहे और पत्नी पति के प्रति इसी तरह का व्यवहार करे। एक दूसरे के खिलाफ़ कोई कितनी भी निन्दा करे कभी कान न दे। जैसे कि—नहीं, उदाहरण देने की ज़रूरत नहीं है, बात सीधी है। न तो पति और न पत्नी ईर्षा, जलन, हसद को मन में न आने दे, और एक दूसरे को अपनी सम्पत्ति न समझे तो फिर सब समस्याएं हल हो जायँ।'

सुधाकर बिना समझे बूझे उछल पड़ा। बोला, 'बिलकुल ठीक कहते हो। समाज की सारी समस्याओं का यह एक बहुत ही बड़ा हल है।'

वह इस प्रशंसा पर सन्तुष्ट हुआ। उसको प्रतीत हुआ, मैं मूर्ख नहीं बना।

सुधाकर के मन के किसी छोर से कई प्रश्न एक साथ हुए, 'क्या? क्यों,? कैसे? कैसे हो सकता है यह?' मन के ही किसी अंग ने उत्तर दिया, 'क्लब की गप शप ही तो है यह। किसी समस्या को सुलझाने का कोई गंभीर प्रयत्न तो है नहीं। कोरी बात चीत।'

'अब मेरा प्रसंग समाप्त हो गया,' सुधाकर के मित्र ने कहा: 'तुम्हारी श्रीमती जी घर आ गई हों शायद। विलम्ब का कारण पूछा जाने पर कह दोगे कि मैंने ढेरों चाय और पकौड़ियों को बरबाद करते करते सारा

समय दा दिया। मेरे थीसिस की तो चर्चा करने से रहे! क्यों कि आरम्भ करते ही अन्त मुसीबत में होगा।'

मुसाफ़र को यह बात फिर गड़ी। परन्तु उसने हँसी में बहा दिया वे सब हँसते हुए चले गए।

[२१]

निशा ससुराल से आ गई। वह स्वस्थ थी। कुन्ती मिलने के लिए आई। वे एक दूसरे से मिल कर सन्तुष्ट दिखलाई पड़ीं कुन्ती ने उसके स्वास्थ से अपने स्वाथ्य की तुलना की। जी में एक टीस उठी। कुन्ती ने निश्चय किया, चाहे कुछ भी हो मैं अपने स्वाथ्य को सुधारूँगी और रक्षित रक्खूँगी। दोनों ने अपने मन की कहने के लिए एकान्त ढूंढ निकाला। कुन्ती के कुछ गिरे हुए स्वास्थ्य के विषय में एकाध सवाल पहले कर चुकी थी, और उसका साधारण उत्तर भी पा चुकी थी, परन्तु वह उस प्रसंग पर अधिक छेड़ छाड़ करना चाहती थी। समझती थी कुन्ती को यह छेड़ छाड़ बुरी नहीं लगेगी। परन्तु कुन्ती ने पढ़ाई लिखाई सम्बन्धी चर्चा पहले करना अच्छा समझा।'

कुन्ती ने पूछा,'रोज़ कितना पढ़ लेती थी?'

निशा ने उत्तर दिया,' नियमपूर्वक तो कुछ भी नहीं। कभी बहुत ही थोड़ा और कभी बहुत काफ़ी, शायद बहुत ज्यादा। प्राइवेट इम्तिहान का प्रबन्ध कर लिया है। शायद फ़ेल हो जाऊँ। पास न हुई तो अगले साल देखा जायगा। विश्वविद्यालय का पीछा नहीं छोड़ूँगा। तुम बतलाओ जिनको सब तरह की सुविधाएँ प्राप्त हैं। पास होने में तो कोई सन्देह नहीं।'

'मैंने तो बहुत कम पढ़ पाया। नियम पूर्वक अच्छी तरह से पढ़ना तो मेरा अब आरम्भ हुआ है।'

'फिर क्या करती रहीं इतने दिनों?'

'मैंने दैनिकी तो रक्खी नहीं, 'कुन्ती ने हँसकर उत्तर दिया 'पर यह कह सकती हूँ कि इतने महीने कैसे निकल गए सो याद नहीं पड़ता है।'

निशा ने भी हँसकर कहा,'खूब मौज रही है यह कहो। रात भर का जागना, दिन का सोना यही सब रहा होगा। नृत्य गान भी कुछ होता रहा है या नहीं?'

निशा कुन्ती के चेहरे को ज़रा बारीकी के साथ देखने लगी। कुन्ती ने अपनी आँख बचाई। स्वास्थ्य के विषय में अपने को निशा की अपेक्षा पिछड़ा हुआ मान करके उसने अपने को ऊँचा उठाने के लिए दूसरी दिशा में प्राप्त महत्व को मुस्करा कर प्रकट किया,

'पुरुष और स्त्रियों का एक क्लब बनाया गया था। उसमें छोटे नाटक खेले गए। मैंने भी कई बार अभिनय किया। दर्शक चुने हुए थे। सब पढ़े लिखे, काफ़ी संख्या में। उन सबों ने बहुत पसन्द किया। यकायक उन लोगों के मुँह से वाह वाह निकल आती थी। तालियों से मुझको नफ़रत है, परन्तु तालियां भी बेभाव पिटती थीं। नृत्य गान भी खूब होता था, फिर मन उचटने लगा। हम स्त्री मेम्बरों ने अपना क्लब अलग खोल लिया है। कभी कभी संयुक्त क्लब में भी जाती हैं —'

निशा ने टोका, 'सुधाकर बाबू भी नाटक में अभिनय करते थे ?'

कुन्ती ने उत्तर दिया,' हां हां प्रायः अभिनय करते थे। कभी कभी मंचपर एक विलक्षणता भी आजाती थी। एक बार उनके एक मित्र से मुझको उनके ही सामने कई बार 'प्यारे' कहना पड़ा। मैं सूक्ष्मता के साथ लख रही थी कि इनके ऊपर इसका क्या प्रभाव पड़ता है। मैंने देखा उनको एकाध बार अच्छा नहीं लगा—ख़ास तौर पर जब नशीली सी आंखों और लचकती गर्दन करके मैंने कहा। एक दिन मैने सोचा यह अभिनय किसी दिन खटपट पैदा न करदे तो मैंने छोड़ ही दिया। स्त्रियों के क्लब में खेलेंगे। तुम भी मेम्बर हो जाओ।'

निशा ने प्रस्ताव पर ध्यान नहीं दिया। पूछा, 'सुधाकर बाबू का स्वास्थ्य तो अच्छा है ?'

'बिलकुल टैया से हैं' कुन्ती ने बिना किसी संकोच के जवाब दिया, 'काम में ज्यादा लगे रहते हैं मेरा मन भी पढ़ने की ओर ज्यादा झुक गया है।'

'दिन रात काम थोड़े ही करते रहते होंगे ?'

'पहले तो एक मिनिट के लिए भी काम पर नहीं जाते थे। दिन भर गपशप, छेड़ छाड़। शाम को नाटक या नाच गान या सिनेमा, कभी कभी नाटक के बाद सिनेमा का दूसरा शो अपनी कला की तुलना या प्रेरणा के लिए। फिर घर लौट कर गपशप, छेड़ छाड़ और जागरण। मैं तो बिलकुल परेशान हो गई। सबका सब वही सब एक रस, एक ही धारा एक ही प्रभाव। बहुत रूखा और नीरस लगने लगा। बीच बीच में बुआजी से कभी कभी ज़रा झांइ झाइ हो जाती थी। उस एक रसता में थोड़ी सी भिन्नता आजाती थी।'

'अब क्या हाल है?'

'अब मैं छेड़ छाड़ को बिलकुल नहीं सहती। क्योंकि जब कभी मैं छेड़खानी पर उतारू हो जाती हूं तो उनको अखरने लगता है। कभी कभी तो बत बढ़ियाव तक हो जाता है।'

'इससे तो मन मुटाव हो जाने की अशंका है कुन्ती।'

'हो जाय मेरी बला से। परन्तु वे खुशामद कर लेते हैं और मैं ज़िच करने के लिए कभी कभी परस्थितियां भी उत्पन्न कर डालती हूँ।'

'नाटक देखने कभी अचल बाबू भी आए!'

'कभी नहीं।'

अचल के नाम पर कुन्ती के चेहरे से एक छाया उलझती हुई सी चली गई।

'अचल बाबू का क्या हाल है?' निशा ने पूछा।

कुन्ती ने संकोच का दमन करके उत्तर दिया, 'मज़े में हैं। कभी कभी सीखने के लिए उनके पास चली जाती हूं। एक बार क्या, कई बार तुम्हारा भी ज़िकर आया। कुशल समाचार पूछ लेते थे। कहते थे सुखी होगी।'

'सुखी हूँ, कुन्ती!'

'अरे हां, तुम से तो कुछ पूछ ही नहीं पाया ! मैं ही बरबराती चली गई। कैसा स्वभाव है ?'

'मीठा, स्नेह पूर्ण। परन्तु आंधी तूफ़ान उनमें नहीं है। मेरे सुख में अपना सुख समझते हैं और मेरे स्वास्थ्य की उतनी ही चिन्ता करते हैं जितनी अपने की।

'और तुम तो आंधी तूफ़ान कुछ चाहती ही न होगी ? सच बतलाना, निशा, तुम देखने में जितनी कम बोलने वाली और सीधी हो उतनी वास्तव में हो नहीं। तुम्हारा सीधापन दूसरों के पेट में से बातों को खींचने में और अपनी आधी भी न कहने में दक्ष है।'

'अच्छा मैंने कभी तुमसे कुछ छिपाया ?'

'तो बतलाओ तुम अचल से कभी प्रेम करती थी ?'

'कभी नहीं। और तुम ?'

'हां करती थी। एक युग सा हो गया। परन्तु सुधाकर को और भी अधिक चाहा। अब तुम अपनी बतलाओ।'

'स्त्रियां जितना अपने पति को चाहती हैं उतना चाहती हूं।'

'जैसे सारी स्त्रियां और पति एक ही से होते हों ! मानो एक से ही सांचों में ढाले गए हो !! तुम्हारे आंधी तूफ़ानों का क्या हाल रहा है। जब तुम्हारे मन में उमंगें उठती हैं तब तुमको उनका जवाब मिलता है या नहीं ?'

'हमेशा नहीं।'

'तब कैसा लगता है ? मन मुटाव की नौबत नहीं आती ?'

'नहीं, कभी नहीं। मैं सोचती हूं पति अगर दूसरी ओर अपने मन को न भटकावें तो स्त्री को लड़ाई फ़साद करने की ज़रूरत ही नहीं।'

'और यदि पति अन्यमनस्क हो जावे, विरत और अपनी ही किसी धुन में छुनमुन बन जावे तो ?'

'तो तुम्हारा वह उपचार तो है ही। याद है तुमने एक बार क्या कहा था ?'

कुन्ती हँस पड़ी।

बोली, 'उतना मन मुटाव तो नहीं हुआ है। कभी बहुत हो गया तो समझ में नहीं आता क्या कर उठूंगी।

'जूती, स्लीपर, सम्बन्ध–विच्छेद—कई उपाय तो हैं,' निशा ने कहा।

और दोनों हँस पड़ीं।

कुन्ती बोली, 'ये सब उपाय वाद–सभा के हैं। जीवन के शायद नहीं हो सकते।'

'अचल के यहां या कहीं अकेली जाने पर सुधाकर बाबू कोई रोक टोक तो नहीं करते?' निशा ने पूछा।

कुन्ती ने ज़रा भन्नाकर उत्तर दिया, 'रोक टोक कैसे करेंगे? मैं कोई चोरी तो करती नहीं। मानलो मैं अचल को या किसी को चाहने लगूँ तो उनका मार्ग अलग मेरा अलग, परन्तु जब तक वे अपने शरीर को और मैं अपने शरीर को पवित्र बनाए रहें तब तक किसी के मन से किसी को क्या वास्ता?'

'शायद तुम्हारा कहना ठीक हो, परन्तु हिन्दू धर्म में तन और मन के बीच में कोई अन्तर नहीं रक्खा गया है।'

'केवल स्त्री के लिए। पुरुष के लिए सब धान बाईस पन्सेरी। स्त्रियों ने शास्त्रों को लिखा होता तो उनमें कुछ और मिलता। परन्तु निशा यह बैठक कॉलेज की वादसभा की बारहदरी तो है नहीं।'

'सो तो ठीक ही है कुन्ती। शायद पुरुषों की अपेक्षा अपना समाज स्त्रियों पर अधिक टिका हुआ है, पुरुष चाहे इस बात को मानें और चाहे न मानें। पर इन्हीं स्त्रियों को बहुत से अपना शृङ्गार समझते हैं और अनेकों पैर की जूती। मुझको दोनों कल्पनाओं से घोर घृणा है।'

कुन्ती को अवगत हुआ जैसे वह निशा के अच्छे स्वास्थ्य की टक्कर में अपनी जानकारी और चतुराई के प्रदर्शन में काफ़ी ऊँचे स्तर पर उठ गई हो। उसने स्त्रियों के क्लब की सदस्य होने और स्त्री क्लब में नाटक खेलने का फिर अनुरोध किया।

निशा ने कहा, 'नाटक देखने के लिए पुरुष भी आयंगे?'

कुन्ती—'आवें तो क्या हर्ज? वे देखें तो स्त्रियां भी पुरुषों का कितना अच्छा अभिनय कर सकती हैं! जब पुरुष स्त्रियों का रूप धरके अभिनय करते हैं तब हँसी और शरम तो आती ही है, क्षोभ भी होता है।'

निशा—'पुरुषों में ऐसे भी तो स्त्री-अभिनय करने वाले होते हैं जो पूरी तौर पर स्त्री की खाप खा जाते हैं। कोई कह ही नहीं सकता कि ये पुरुष हैं। शायद ऐसे पुरुष डबल सैक्स वाले होते हों। परन्तु मैं यह नहीं कह रही थी। पुरुषों में कभी कभी ऐसे लोग भी आ घुसते हैं जो आवाज़ें कसते हैं, कोई इस प्रकार की साँस या उसाँस भरते हैं जिसको कोई भी भद्र महिला बरदाश्त नहीं कर सकती। तुम कहोगी टिकिट और निमन्त्रण पर चुने हुए लोगों को बुलाना चाहिए। संभव है ठीक हो, परन्तु मुझको कम जचता है।'

कुन्ती—'जैसा तुम चाहोगी वैसा ही प्रबन्ध हो जायगा।'

निशा—'संयुक्त क्लब में भी कभी कभी जाना पड़ेगा!'

कुन्ती—'बिलकुल ज़रूरी नहीं है।'

निशा—'सोचूंगी। अभी तो आई ही हूँ। लोग-बाग सुनेंगे तो कहेंगे भरे भरे घर में मन नहीं लगा और रँगरेलियों पर आगई!'

कुन्ती को भासित हुआ वह अब उतने ऊँचे स्तर पर नहीं है।

बोली, 'ओ हो, लोगों की राय की इतनी परवाह!'

निशा ने प्रश्न किया, 'अच्छा तुम्हीं बतलाओ, क्या तुमको लोकमत की बिलकुल परवाह नहीं है?'

कुन्ती सहम को दबाना अपना एक गुण समझती थी। दूसरों के सामने अपने को ऊँचा उठाए रखने की उसको बान थी। उसकी भौंह पर उपेक्षा आई। परन्तु वह निशा की बिलकुल अवहेलना नहीं करना चाहती थी।

उसने कहा, 'न तो लोकमत की सदा झुक झुक कर पूजा करना चाहती हूँ और न उसको रौंदकर ही चलना चाहती हूँ। क्लब में जाने से रँगरेलियों

पर आना हो गया ! थोड़ी देर के लिए ही आया करो। रोज़ न सही, कभी कभी ही सही।'

'अच्छी बात है', निशा बोली: 'दो एक दिन रहलूँ फिर चलूँगी। कभी नाटक भी तुम्हारा देखूँगी। अभिनय तो नहीं कर सकूँगी।'

'किसी दिन अचल के यहां भी चलना। चलोगी न ? देखना मेरा गायन, ताल इत्यादि अब कैसा हो गया है।'

'चलूँगी। कोई हर्ज नहीं है। तुम्हारा नाच भी होगा क्या वहां ?'

'तुम चाहो तो नाच भी दूंगी। अब तो चांदी की घुँघरू बन गई हैं।'

'चांदी की घुँघरू ! अचल ने कब बनवाई ? वाहरे अचल बाबू ! कलाकार हैं न !!'

'तुम भी खूब हो ! अचल ने काहे को बनवाई ? उनको क्या ग़रज़ पड़ी थी ? पति ने बनवाई हैं।'

'माफ़ करना कुन्ती, सुधाकर बाबू का मन बांसों उछलता होगा तुमको चांदी की घुंघरू पहिनाकर नाचते हुए देखकर ? नित्य देखते होंगे वे तो इस प्रकार के नाच को !'

'अबतो बहुत दिन से मैं नाची ही नहीं।'

'और अचल बाबू के सामने ?'

'उनके सामने भी चांदी की घुंघरू पहिन कर कभी नहीं नाची।'

'कहा तो होगा उन्होंने जब सुना होगा कि चांदी की घुंघरू बन गई हैं।'

'याद नहीं।'

'अचल बाबू प्रसन्न रहते हैं या उदास ? ब्याह करने के विषय में उनका क्या विचार है ?'

'करेंगे, परन्तु पास.वास करने के बाद। जीवन में स्थिर होजाने के उपरान्त।'

'क्या तुमने उनसे पूछा था ?'

कुन्ती के मुँह से यकायक 'हां' निकला और उसके सिर से पैर तक बिजली सी छूट गई।

अपने को संभालते हुए उसने कहा, 'मैंने यों ही पूछा था। तुम जानती हो बात करने की तो मेरी आदत ही है, जब बहुत दिनों बाद उनसे पहली बार मिली उदास और अस्वस्थ सा पाया। बात चीत के सिलसिले में प्रश्न कर बैठी।'

एक क्षण के उपरान्त कुन्ती बोली,

'वे चित्रकारी भी सीखने लगे हैं। मैंने उनकी कापी देखी। टेढ़ी मेढ़ी, सीधी, गोल, और अर्द्ध गोल रेखाओं की भर मार। परीक्षा की तैयारी भी करते जाते हैं और चित्रकारी सीखने के लिए भी समय निकाल लेते हैं। उनकी देह में मानो प्रभात का बल है और सन्ध्या की साधना है। उदासी शायद अकेलेपन के कारण से हुई हो या जिस कारण से हुई हो, परन्तु वे चित्रकारी सीख कर करेंगे क्या?'

कुन्ती थोड़ी सी हँसी। बहुत से बातूनी स्त्री पुरुष शायद यह नहीं जानते कि वे जिस बात को नहीं कहना चाहते वह उनके मुँह से सहज ही निकल पड़ती है। वे पछताते भी शायद कम हैं।

'तुमने पूछा नहीं किस के चित्र बनाने के लिए चित्रकारी सीख रहे हो?' निशा ज़रा शरारत पर आ गई।

'कहने लगे, कुन्ती ने कहा, 'फूल पत्तियों के, प्राकृति के, नर नारियों के और भावनाओं इत्यादि के।'

बोली, 'जब अभी रेखाओं को ठीक करने पर ही हाथ रवाँ कर रहे हो, तब तो नर नारियां और भावनाओं के चित्र बनाने के लिए चार छः वर्ष लग जायंगे।'

'सो बात नहीं है। वे कहते थे कि मनुष्यों के चित्र बनाने में देर नहीं लगेगी। बरस खांड में तो वे हमारा तुम्हारा ही चित्र बनादेंगे।'

'कहते थे क्या?'

'हां। कहते थे कि सुधाकर का भी चित्र बनायेंगे।'

'तुमने सुधाकर से कहा?'

'नहीं तो। कोई ज़रूरत ही नहीं समझी।'

निशा ने देखा कुन्ती में भोलापन या अल्हड़पन भी है।

कुन्ती ने सोचा कोई पूछे तो बतलाऊँ या यों कहती फिरूँ।'

निशा को अपनी भाभियों में भी बैठना था। कुछ और सहेलियां भी आने को थीं, इसलिए उसने चर्चा को और अधिक नहीं बढ़ाया। कुन्ती भी जाना चाहती थी।

उसने प्रस्ताव किया, 'मैं अचल के यहां जारही हूं। चलो न थोड़ी देर के लिए? बहुत थोड़ी देर ठहरूँगी। तुम इधर चली आना, मैं उधर चली जाऊँगी। ज़रा तुम भी उनकी ड्राइंग कापी को देखना। हँसी आयगी।'

निशा ने कहा, 'मैं तो नहीं जासकूंगी। तुम जाओ फिर कभी देखा जायगा। कोई जल्दी नहीं है।'

कुन्ती ने ज़रा हठ किया, 'चलो न। समय ही कितना लगेगा?'

निशा ने प्रतिवाद किया, 'अरे वाह! भाभियों से बात करनी है। सहेलियां आ रही होंगी। मैं नहीं जा सकती।'

कुन्ती चली गई।

[२२]

सुधाकर घर पर ज़रा जल्दी आ गया। कुन्ती एक पुस्तक लेकर अचल के यहां जाने वाली ही थी कि सुधाकर के आजाने से उसको रुक जाना पड़ा। उस दिन वह किसी के यहां भी नहीं जाने पाई थी—निशा के घर भी नहीं। सुधाकर उमंग में था। शाम होते ही उसकी मित्र मंडली में एक जगह खाना पीना था। कुन्ती के लिए भी निमन्त्रण था, पर उसकी इच्छा जाने की न थी। सुधाकर उसको लेजाना चाहता था। क्योंकि वहां केवल खाना पीना ही न था, बल्कि गायन वादन, ब्रिज सोलो रमी इत्यादि भी था और उसके बाद किसी सिनेमा में दूसरा शो। जाड़ा, खतम हो गया था, गरमी आगई थी। दूसरे शो के बाद लौटने पर काफ़ी ठंडक हो जायगी और फिर थोड़े से जागरण के उपरान्त गहरी नींद।

परन्तु यह कार्य-क्रम कुन्ती को पसन्द नहीं आया। उसने कहा, 'परीक्षा के थोड़े दिन रह गए हैं। मैं समय खराब नहीं कर सकती।'

सुधाकर ने खिल्ली उड़ाई, 'ओ हो! एक रात में बड़ा नुक़सान हो जायगा!! दिन भर क्या करती रहीं?'

'तुम्हारा इन्तज़ार।'

'मेरा इन्तज़ार! मुझको कौन तालीम देनी थी। चलो न। कितने दिन से कहीं एक साथ नहीं बैठे उठे।'

फ़ेल हो गई तो सारी जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर डालूंगी।'

और पास हो गई तो श्रेय किसको मिलेगा? फ़जूल बातें करती हो। कभी सिर में दर्द। कभी हाथ पांव में दर्द। कभी परीक्षा की तैयारी। जब चाहता हूं कि एक दो घण्टे मेरे पास रहो, तभी कोई न कोई अजीब सा कारण।'

'और जब मैं चाहती हूं कि पाव घंटे भी मेरे कहने से ठहर जाओ तो ठेकेदारी का काम या क्लब, या कोई न कोई बाधा या बहाना।'

'और आज तो इनमें से एक भी नहीं है।'

'एक तो है। खाना पीना इत्यादि क्लब का ही तो एक रूप है।'

'अकेले तो नहीं जा रहा हूं?'

'अगर मैं कहती कि मेरे पास घर पर ही बने रहो, या मेरे साथ सिनेमा में चलो तो अवश्य कोई न कोई प्रतिकूल कारण खड़ा कर देते।'

'सिनेमा के दूसरे शो के लिए कहा तो है।'

'अच्छा मैं कहती हूँ पहले शो में चलो, चलोगे?'

'वाह! वाह!! पहले शो में चलने से तो हमारा आज का सारा सिलसिला ही चौपट हो जायगा।'

'मेरी मर्ज़ी या राज़ी जैसे कोई चीज़ ही नहीं।'

वहां नृत्य भी होगा जैसा कि मैंने अभी अभी कहा। बाहर से एक मित्र की नातेदारिन आई है। बड़ी तारीफ़ सुनी गई है उसकी। देखना और उसकी खूबियां या कोर कसरें हम लोगों को बतलाना।'

कुन्ती का रुख कुछ ढला।

उसने कहा, 'तो किसी दिन उसको अपने यहां बुला लो। चाय या खाना कर देना। जांच यहां भी हो जायगी।'

सुधाकर बोला, 'मैं चाहता हूँ तुम्हारी चाँदी की घुँघरू पहनकर नाचे वह। फिर देखूँ कैसी लगती है। उसके बाद तुम्हारा नृत्य हो। तब तुलना ठीक हो सकेगी। अपने ही घर पर होकर हो।'

कुन्ती को साल गया। ज़रा रूखी पड़ी।

उसने पूछा, 'तुमने देखा है उस लड़की को?'

सुधाकर ने उत्तर दिया, 'देखा तो नहीं है।'

कुन्ती को थोड़ा सा आराम मिला। मुस्कराकर बोली, 'मैं तो नहीं जाऊँगी।'

सुधाकर ने देखा, 'पानी बिलमा। कहा, 'तुमको मेरी क़सम है। चलो।'

कुन्ती ने पुस्तक एक ओर रखदी और उसके साथ गई।

× × × ×

खाना पीना हुआ। साथ ही गपशप होती चली गई। थोड़ी देर ब्रिज हुआ। सिनेमा के दूसरे शो का समय आ पहुँचा। परन्तु कुन्ती और सुधाकर उसमें नहीं जा सके। उसके किसी मित्र की जो नातेदारिन लड़की आई थी। कुन्ती ने उसके नखशिख का निरीक्षण किया। बहुत भद्दी नहीं थी, बहुत सुन्दर भी नहीं थी। उसके बाल अवश्य कुन्ती की अपेक्षा लम्बे और चमकीले थे। कुन्ती ने सोचा, 'किसी तेल ने यह चमक पैदा की है। गंवारपन की निशानी है, सुन्दरता उसमें क्या है? उसका गान हुआ और नृत्य भी। सुधाकर चाँदी की घुँघरू ले आया था, उसको पहिनकर नाचते हुए देखकर कुन्ती को अच्छा नहीं लगा। 'मेरी घुँघरू इस गंवार के पैर में!'

जब नाच हो रहा था कुन्ती और सुधाकर पास पास बैठे थे। सुधाकर का एक परिचित अपने एक मित्र के साथ उसके पीछे बैठा था।

नाच के किसी अंश पर उसको वाह वाह मिली। सुधाकर का जो परिचित उसके पीछे बैठा था उसने अपने एक पड़ोसी से धीरे से कहा,

'यह भी कोई सुसाइटी गर्ल है। इस वर्ग की संख्या बढ़ती चली जारही है। खैरियत यही है कि थोड़े से बड़े कहलाने वाले लोगों तक ही यह मर्ज़ सीमित है।'

सुधाकर ने मुँह मोड़कर देखना चाहा, अपने परिचित को पहिचानने के लिए नहीं, बल्कि एक मूक भर्त्सना देने के लिए।

नाच के दूसरे अंश पर फिर वाह वाह हुई। कुन्ती ने सुधाकर के कान में कहा, 'वाह वाह के लायक़ इसमें कुछ भी तो नहीं है।'

पीछे वाले परिचित ने अपने पड़ोसी से कहा, 'सोसाइटी गर्ल का दूसरा अर्थ और रूप है वेश्या। जानते हो?'

अबकी बार सुधाकर ने पीछे मुड़कर देखने की बिलकुल इच्छा नहीं की, वरन् वह अपनी कुर्सी से कुछ ऐसा आगे बढ़ गया मानो कोई बात उसके कान में न पड़ रही हो।

उस लड़की का नृत्य समाप्त होने पर ताश और गपशप का ही कार्य-क्रम बाक़ी देखकर कुछ लोग चिल्ला उठे,

'कुन्ती देवी कृपा करें'। जैसे वह मजलिस किसी स्कूल या कॉलेज के लड़कों की हो। दो मित्र तुरन्त सुधाकर के पास आए। उन्होंने अनुरोध किया।

सुधाकर ने कहा, 'वे तो लगभग छोड़ सा चुकी हैं। मेरे ख्याल में गा भले ही दें, परन्तु नृत्य नहीं करेंगी। कोई मौक़ा भी नहीं है। समय भी कुछ अधिक हो गया है।'

उन लोगों ने हठ किया।

सुधाकर बोला, 'मुझको तो नाचना नहीं है। उनसे पूछो। वे शायद नाहीं करेंगी।'

उन लोगों ने कुन्ती से प्रार्थना की।

कुन्ती ने कहा, 'हमारे घर पर किसी दिन चाय पानी होगा। उसमें ये भी अपने नृत्य का प्रदर्शन करदेंगी। मेरा तो आप लोगों ने देखा ही है, उसमें कुछ नयापन नहीं है, तो भी मैं थोड़ा सा कर दूंगी। परीक्षा के बाद हो जायगा।'

उनमें से एक ने प्रतिवाद किया, 'तबतक वे चली जायंगी। कुछ दिन के लिए ही आई हैं। वे भी आपसे विनय करती हैं। हमलोग भी चाहते हैं। लोगों को मालूम हो जायगा कि हमारे क्लब की कला कितने ऊँचे दर्जे की है। मंज़ूर करिए।'

कुन्ती ने स्वीकार कर लिया। उसके खड़े होते ही कमरे में तालियां बजीं। स्वागत और अभिवादन हुआ कुन्ती दूसरे कमरे में जाकर अपनी साड़ी को चुस्त कर आई और चांदी की घुँघरू पहिन आई।

नमस्ते करके उसने नृत्य आरम्भ कर दिया। पहले एक गीत गाया, फिर नृत्य के हाव भाव में गीत के बोलों को सार्थक किया।

सुधाकर के मन में एक गूंज उठी, 'मेरे कहने से घर राज़ी नहीं हुई थी! यहां पर मेरे रुख़ की अवहेलना की!! घर चलने पर एकाध फबती तो कसूंगा ही।'

कुन्ती ने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया।

उसको दिखलाना था कि जिस लड़की की कला की इतनी प्रशंसा दर्शकों ने की है वह वास्तव में कुछ नहीं जानती, हर हालत में उसके मुक़ाबिले में तुच्छ है।

कुन्ती ने भौंहों, बरौनियों, मुस्कानों, ग्रीवा की मरोड़ों और देहलहरी की लहरों से अपनी कला को जगमगा दिया। चांदी की घुँघरू उसके कोमल सुन्दर पैरों को प्रदीप्त कर रही थी और पैर की असंख्य सूक्ष्मगतियों को, जो एक साथ ही विनम्र और प्रगल्भ थीं, चांदी की घुंघरू अपनी मधुर खनक की, मानो, भेंट पर भेंट चढ़ा रही थी।

कुछ दूर पीछे से किसी ने धीरे से कहा, 'ओफ़ हो! कितना ग़ज़ब का लोच है!'

सुधाकर ने सुन लिया, परन्तु वह पहिचान नहीं सका कि किसने कहा।

कुन्ती का नृत्य समाप्त होने के पहले कुछ और तीव्रता पर आया—जैसे बुझते हुए दीपक की लौ।

पीछे बैठे वाले परिचित ने अपने पड़ौसी से कहा, 'यह भी सोसाइटी गर्ल है, जिसका वही मतलब है, वही।'

दूसरे ने केवल 'हूं' की।

उस परिचित को चैन नहीं पड़ रहा था। वह हँसाने के उद्योग में था। बोला, 'अब इनका नाम कुन्ती देवी नहीं मिसर्स कुन्ती डान्स—स्टार हो जाना चाहिए।'

सुधाकर के मनमें आया दांत तोड़दूँ इस बेहूदे के, परन्तु पीकर रहगया।

प्रदर्शन की समाप्ति पर कुन्ती को वाहवाही मिली। वह आश्वस्त थी पछाड़ दिया उसको जो पहले नाची थी। सुधाकर अपने मित्रों की सराहना का उत्तर मुस्करा मुस्कराकर और एकाध शब्द से ही दे रहा था। उसकी आंखों के सामने वह कमरा, नृत्य और मित्र गण कांप से रहे थे, अस्थिर, जैसे किसी सरोवर में परछांइयां बन बन कर बिगड़ बिगड़ जाती हों।

सुधाकर अपने कुछ मित्रों को मोटर में बिठला कर घर चला। मोटर में उसको आभास हो रहा था जैसे कुन्ती अब भी मंच पर अपने 'लोच' दिखला रही हो।

डान्सिंग स्टार! अंग्रेज़ी में उतना बुरा नहीं लगता। परन्तु हिन्दी में उसका अर्थ या भाव क्या होगा? उसके दांत न तोड़ पाए जिसने डान्सिंग स्टार कहा था!! और उसने सोसाइटी गर्ल भी कहा था। सोसाइटी गर्ल का अर्थ और पर्याय भी बतलाया था।

घर पर कभी ऐसा नहीं नाची! प्रमत्त और मादक घड़ियों में भी नहीं!! और, इन दिनों तो जब जब कहा तब तब बहाना कर दिया। सिर की पीड़ा, बदन का दर्द, स्वास्थ्य की रक्षा। आज सब ग़ायब! और इतनी तेज़ी से पैर और हाथ चलाए!!

डान्सिंग स्टार! डान्सिंग गर्ल और डान्सिंग स्टार में कितनी दूरी का अन्तर है?

मित्रों को अपने अपने ठिकाने पहुचा कर वह अपने घर आया।

भीतर पहुंचने पर कुन्ती ने पूछा, 'उस लड़की का नृत्य कैसा लगा तुमको?'

कुन्ती के प्रश्न के भीतर असल में अपनी कला के सम्बन्ध में जिज्ञासा थी।

उस लड़की के नृत्य के सम्बन्ध में उत्तर देते हुए सुधाकर ने अपनी खीझ निकाली,

'दो कौड़ी का सा।'

कुन्ती को इस उत्तर पर असन्तोष नहीं हुआ। उसने अपने नृत्य के सम्बन्ध में स्पष्ट प्रश्न किया,

'और दूसरा ?'

उसने अपने स्पष्ट प्रश्न में स्पष्टता के साथ इस भाषा का व्यवहार नहीं किया, 'और मेरा ?'

सुधाकर के मुँह से निकल पड़ा, 'बिलकुल रंडियां जैसा।'

'मेरा नृत्य !' चकित, विकृत मुख और दलित स्वर में कुन्ती के कांपते हुए ओठों से निकला।

स्तम्भित होकर, कांपते हुए, भयभीत कंठ से सुधाकर ने कहा, 'मैंने तुम्हारे लिए कब कहा ?'

पैनी आवाज़ में विस्फारित लोचनों से कुन्ती बोली, 'तब किसके लिए कहा'?'

पश्चाताप की तपस्या में स्वर को तपाकर सुधाकर ने उत्तर दिया, 'मैंने उस लड़की के लिए कहा था जिसके नृत्य को दो कौड़ी का बतलाया था।'

'झूठ कहते हो, कुन्ती गर्जी: 'तुमने यह गाली मुझको दी है। कुछ समय से तुम मेरी अवहेलना पर अवहेलना कर रहे हो। तुम्हारी इच्छा के प्रतिकूल में नाची इसलिए तुमने आज मुझको वह गाली दी जिसको सुनकर कोई भी स्त्री, 'चाहे जितनी निर्लज्ज हो, मार डालने और मरने पर तुल जाती है।'

सुधाकर ने क़सम खाकर कहा, 'और भी चाहे जिस तरह की सौगन्ध तुम मुझसे लेलो तुम्हारे लिए मैंने नहीं कहा। कह ही नहीं सकता था। मैं कभी किसी प्रकार की अवहेलना ही करता हूँ। तुम सब तरह की आज़ादी पाए हुए हो, कभी उफ़ तक नहीं करता।'

'आज़ादी मेरी कमाई हुई है, तुम्हारी या किसी की दी हुई नहीं है।'

'मैं कब कहता हूं कि ऐसा नहीं है ? पर मैं तुमको विश्वास दिलाता हूं कि उस शब्द का उपयोग तुम्हारे सम्बन्ध में हर्गिज़ नहीं किया। मैं अपने प्राणों की होड़ लगा कर कह सकता हूँ।'

'तो तुमने उस लड़की के लिए ही क्यों कहा ?'

'समझ में नहीं आता उसके लिए क्यों निकला। मैं नृत्य कला के प्रचार का पक्षपाती हूँ; फिर भी न जानें आज मेरी ज़बान को क्या हो गया। मुझको आश्चर्य है। समझ में नहीं आता इसका क्या प्रायश्चित्त करूँ ज़बान काट डालूँ या क्या करूँ।'

कुन्ती का क्रोध कम होने पर आया और क्लेश बढ़ने पर।'

बोली, 'मैं नहीं जानती थी तुम इतने अभद्र हो। बिलकुल जानवर जैसे। पढ़े लिखे आदमी के मुँह से क्या ऐसी बात निकलनी चाहिए ?'

सुधाकर ने अपनी ज़बान काटने की कल्पना को महज़ मूर्खता समझा कुन्ती के कठोर शब्दों का प्रतिवाद नहीं किया। वह किसी भी क़ीमत पर शान्ति स्थापित करना चाहता था।

'कुन्ती प्यारी,' उसने मिठास घोलने की कोशिश करते हुए कहा, 'तुम चाहे जो कुछ कहलो, मैं बुरा नहीं मानने का। मुझको अत्यन्त खेद है कि मेरे मुँह से उस बिचारी लड़की के लिए ही वह बुरा वाक्य क्यों निकला। क्या तुम मुझको क्षमा न कर दोगी ? मैं हाथ जोड़ता हूँ।'

कुन्ती की आंखों से आंसू बह पड़े। वह पलंग पर बैठकर, कपड़े में मुँह छिपाकर सिसक सिसक कर रोने लगी ! सुधाकर घबरा गया।

विह्वल होकर उसने हाथ जोड़े, पुचकारकर उससे कहा, तुम्हारे आंसू मेरा हृदय चीरे देरहे हैं। मैंने वास्तव में यदि तुम्हारा कोई अपराध किया होता तो अलमारी में से बन्दूक उठाकर अभी आत्मघात कर लेता।'

बन्दूक़ दूसरे कमरे में रक्खी थी और कुन्ती बन्दूक़ के ठौर जानती थी। कुन्ती ने आंसू पोंछ डाले ! फन फनाते हुए स्वर में उसने कहा, 'यह दूसरी घिनोनी बात कही तुमने।'

'क्या करूँ तब ?' सुधाकर कांपते हुए स्वर में बोला 'मैंने तुम्हारे प्रति कोई अपराध नहीं किया है इसलिए कह रहा हूँ।'

'अच्छा खैर जो हुआ सो हुआ। यदि किसी और के सामने यह बात तुम्हारे मुँह से निकल गई होती और उस लड़की तथा उसके नाते दारों के कान में पहुँच जाती तो उसका फल सभी के लिए कितना बुरा न होता ?' कुन्ती ने कहा।'

'बेशक बहुत बुरा होता' सुधाकर के मुँह से निकला जैसे किसी मशीन में से शब्द निकले हों।'

ऊपर का वातावरण शान्त हो गया। सुधाकर ने प्यार बरसाने की कोशिश की। दोनों की देहों से मन जैसे अलग हो गया हो। सारी क्रिया जैसे किसी घोर कष्ट को डुबोने का प्रयत्न हो, जैसे किसी मरणोन्मुख के चीत्कार को वीणा की झंकार में छिपा-देने का प्रयत्न हो, जैसे बिजली की कड़क मेह की रिमझिम में छिपा ली गई हो।

सुधाकर सो गया, परन्तु कुन्ती को देर तक नींद नहीं आई। वह रोई क्यों ? उसके आंसू नहीं निकलने चाहिए थे। रोता तो सुधाकर रोता वह तो रोया नहीं।

यह नहीं पूछा था कि मेरा नृत्य कैसा रहा था ? जानकारों ने तो पसन्द किया ही था। शरीर में उतावल न होते हुए भी कितना परिश्रम किया ! कला को कितना विकसित किया !! वह लड़की तो कुछ जानती ही न थी।

यह ज़रूर है कि प्रश्न सीधा नहीं किया था—यह नहीं पूछा था कि मेरा नृत्य कैसा रहा ? पर सिर्फ़ यह कहा था, दूसरा कैसा रहा ? शायद सुधाकर ने उसी लड़की के लिए 'बिलकुल रंडियों जैसा' प्रयुक्त किया हो ! परन्तु उसने नृत्य तो एक ही किया था। दूसरा नृत्य तो उसने किया न था। तब क्या यह मेरे ही लिए कहा गया ? इतनी हिम्मत ! इतनी गिर गई क्या मैं नज़रों में !! परन्तु इस तरह की या इससे मिलती जुलती

कभी कोई बात सुधाकर ने मुझ से पहले नहीं कही। और क़सम भी खाई। परन्तु बात छिपाने और झूठ बोलने का सबसे अच्छा साधन तो क़सम ही होती है न ? लेकिन, नहीं; इस प्रकार की बहुत बड़ी बात मेरे बारे में नहीं कही जा सकती है। शायद मन में रही हो और अनायास निकल पड़ी हो। यह भी संभव नहीं है। चर्चा उस लड़की की हो रही थी। मेरा तो प्रसङ्ग ही नहीं था। सवाल दूसरे का था—दूसरा कैसा रहा ? दूसरा किसका ?

[२३]

परीक्षा के दिन आए और निकल गए। अचल के पर्चे बहुत अच्छे हुए। दूसरी श्रेणी में पास होने के बारे में कोई सन्देह नहीं था, शायद पहली श्रेणी प्राप्त कर जाय। बड़ी बात यह थी कि उसका स्वास्थ्य बचा रहा। निशा और कुन्ती भी परीक्षा में बैठीं, अपने फ़ेल होने में उनको कुछ कोई सन्देह नहीं था।

परीक्षा हो जाने पर भी कुन्ती अचल के पास कभी कभी थोड़ी देर के लिए आ बैठती थी। वह शान्ति या मनोरंजन की खोज में सखियों सहेलियों के यहां भी जाती थी, परन्तु अचल के यहां उसको गाना सुनना सुनाना ज्यादा अच्छा लगता था। कभी भी आवे, परन्तु सन्ध्या के पूर्व चली जाती थी।

दिन लम्बे हो गए थे। लू बढ़ गई थी। चलते चलते लगभग छः बजे के कुछ धीमी पड़ी। अचल कहीं घूमने जाना चाहता था कि कुन्ती आ गई। लू के मारे उसका चेहरा तमतमा गया था। माथे और गर्दन पर पसीना था।

कुन्ती ने कहा, 'आपको जहां जाना हो जाइए। मैं लौटी जाती हूँ। कोई काम नहीं है।'

'अब नहीं जाऊँगा', अचल बोला, 'तुम से बातें करूँगा। सात बजे बाद जाऊँगा। सामने कुछ न होने के कारण ही निकल पड़ने वाला था। आज मैंने नर-विज्ञान के सिलसिले में पढ़ा कि समाज जब टोटम-समूह की हालत में होता है तब एक फ़िर्के के सब लड़के दूसरे फ़िर्के की किसी भी लड़की के सामूहिक रूप से पति होते हैं। जिस फ़िर्के में वह लड़की ब्याही गई हो, और लड़की वाले फ़िर्के की सब लड़कियां उस लड़के की सामूहिक रूप में पत्नियां होती हैं।,

वे दोनों बैठक में जा बैठे दरवाज़े और खिड़कियां खोललीं।

कुन्ती ने कहा, 'अजीब रिवाज़ है! संसार में है अभी कहीं पर यह?'

अचल ने उत्तर दिया, 'हां है, कई भूखंडों में है। आस्ट्रेलिया के आदि वासियों में है। और, हमारे समाज में उसका कुछ क्षीण अवशेष अब भी है। बहिनोई और साली का मज़ाक़, गांवों में लड़के की बरात का वहां की लड़कियों या स्त्रियों के साथ हँसी ठठोली करना, ब्याही जाने वाली लड़की की सहेलियों का, उसके वर को 'जीजा' कहना इत्यादि।'

'परन्तु अंग्रेज़ों में साली के साथ विवाह का होना क्यों वर्जित रहा है ? उनका समाज क्या हमारे समाज से बहुत आगे बढ़ा हुआ है ?'

'बिलकुल नहीं। उसी रिवाज़ का महज़ एक रूपान्तर है। अपनी पत्नी अपने कुटुम्ब का अंग बन गई। पुरानी भाषा में अपने टोटम में शामिल हो गई। उसकी बहिनें भी इसी टोटम की मान ली गईं, बहिन के बराबर। बस, ब्याह शादी बन्द।'

कुन्ती ने हँसकर पूछा, 'यदि आपका विवाह निशा के साथ हो जाता तो मुझको, यदि हम लोग देहाती होते तो, आपको जीजा कहना पड़ता।'

अचल भी हँसा। बोला,

'हां, कोई सन्देह नहीं दिखलाई पड़ता। और यदि हम लोग यूरोपियन समाज में होते तो सिस्टर या कज़िन—इन—लॉं—लगभग बहिन—। विलक्षण है ! देखो न, भावज शब्द की अंग्रेज़ी है सिस्टर—इन—लॉं—लगभग बहिन—!! यह सब कल्पना टोटम समूह से आई है।'

'यह विषय आपकी परीक्षा का तो था नहीं ?'

'नहीं था। मनोरञ्जन के लिए पढ़ता हूं। कुछ और भी पढ़ा है। फ़िर्क़ा कैसे कबीला बना; कबीला कुटुम्ब और कुटुम्ब से विकसित हो कर आजकल का व्यक्ति—'

हँसकर कुन्ती ने कहा, 'मुझको इस विषय में ज़रा भी रुचि नहीं है। अगले साल जब मेरे पर्चे अच्छे हो जायंगे, तब मैं भी कुछ ऐसा ही पढ़ा करूँगी। अभी तो पढ़ने लिखने की ओर से मन बिलकुल ऊब गया है।'

'गाना बजाना होवे ?'

'ज़रा भी मन नहीं चाहता । कोई गपशप हो ।'

'कोई शेख चिल्ली की ? शुरू करो ।'

'अच्छा मान लीजिए कि मैं मर जाऊँ तो आपको कैसा लगे ? कुछ मालूम तो पड़ेगा ही नहीं ?'

अचल को ऐसा लगा जैसे ठोकर खाकर गिर पड़ा हो । सन्न सा हो गया । एकाध क्षण के लिए उसने सिर नीचा कर लिया । एक उठती हुई आह को दबाया ।

सिर उठाकर बोला, 'तुमको कुछ समय से यकायक उदास होता हुआ पाता हूँ । तुम्हारे लिए फ़ेल पास कोई महत्व नहीं रखता । शिक्षा की ये सनदें रोज़गार पाने भर की सीढ़ियां हैं । सो तुमको ज़रूरत नहीं । वास्तविक शिक्षा तो ये देती नहीं । सनद का ही ख्याल है तो अगले साल मिल जायगी ।'

'अरे नहीं', कुन्ती ने हँसते हुए कहा: 'वह बात मैंने यों ही कह दी । बिलकुल यों ही । जाने दीजिए, गाइए कुछ । मैं तबला बजाऊँगी ।'

'मेरे गाने के साथ अब तबले की ज़रूरत नहीं रही ।'

मुँह से निकलते ही अचल की आंखें तरल हो गईं । वह तुरन्त उठा, भीतर जाने के लिए पीठ फेरी और दबे हुए स्वर में कहता हुआ चला गया ।

'बैठना, मैं आता हूं ।'

उसके जाते ही कुन्ती रो पड़ी । रोती रही । जब अचल पानी पीकर और मुँह धोकर भीतर से बैठक में आया तब कुन्ती पोंछे हुए आंसुओं को रूमाल के छोर से फिर पोंछ रही थी ।

अचल ने बैठते ही कहा, 'कुन्ती, यह क्या ?'

'कुछ नहीं, यों ही । आंखों में किरकिरी चली गई थी ।'

'और गले में ?'

कुन्ती खड़ी हो गई । 'मैं अब जाऊँगी', उसने कहा ।

अचल दृढ़ स्वर में बोला, 'बैठो कुन्ती, ऐसे नहीं जाने दूंगा। बतलाओ तुमको क्या दुख है ?'

कुन्ती ने पूछा, 'तो आप बतलाइए, आपकी आंखें क्यों तर होगई थीं ? आप यकायक क्यों भीतर चले गए थे ?'

अचल ने उत्तर दिया, 'बात कुछ नहीं थी। तुम्हारी उस बात पर कुछ पुरानी स्मृति जाग पड़ी। गरमियों के दिन हैं ही, कुछ भावोन्मेष हो गया। पानी पी लिया और ठडक आगई।'

'आपके हठ का यह अर्थ है कि मैं अब और बैठूं नहीं। कुछ और चर्चा करिए', कुन्ती ने कहा।

अचल बोला, 'पञ्चम गिरधारी वग़ैरह का वह मुक़द्दमा अभी तक खतम नहीं हुआ है। पुलिस उन लोगों के ऊपर कोई दूसरा मुक़द्दमा चलाने की तैयारी कर रही है जिसका रूप है सरकार के खिलाफ़ हथियार इकट्ठे करके षड्यन्त्र रचना। उन लोगों को मारा पीटा गया है। उन लोगों ने हमको बुलाया था, परन्तु अपनी उलझनों के कारण जा ही नहीं सके। अब फिर बुलाया है। जाने से उन लोगों का साहस बंधेगा। मालूम हुआ है कि पुलिस स्त्रियों को तंग करेगी। यदि कोई बाधा न हो, और, सुधाकर न रोकें तो चलो न चलो ? काम भी होगा और तुम्हारा मन भी बहलेगा।'

कुन्ता सिहिर उठी।

'मुझको न तो कोई बाधा है और न मुझे कोई रोक सकता है। मैं अवश्य चलूंगी। कब चलना है ?'

अचल ने उत्तर दिया, 'परसों। एक तांगा कर लेंगे। दूसरे दिन लौट आवेंगे। परसों गांव में पुलिस आवेगी। वह गवाहों को इकठ्ठा करती रहे, खानातलाशियां लेती रहे, गिरफ्तारियां करती रहे, हमलोगों को कुछ नहीं कहना है; परन्तु सबूत बनाने के सिलसिले में आदमियों या औरतों की मारपीट नहीं होने देनी चाहिए। इसी के लिए मैं जाना चाहता हूँ।

यदि दो एक साथी और मिल गए तो अच्छा है, न भी मिले तो हमलोग चलेंगे।'

'किसी और साथी की ज़रूरत नहीं', कुन्ती ने कहा: 'हम अपनी मोटर ले लेंगे। तांगा क्यों लिया जाय?'

अचल—'शायद सुधाकर को अपने काम के लिए मोटर की ज़रूरत पड़े।'

कुन्ती—'देखूँगी।'

कुन्ती चली गई। अचल भी घूमने के लिए निकल गया।

[२४]

कुन्ती, अचल और उसका एक मित्र उदयचन्द मोटर से गांव गए। उदयचन्द साथ में अपना जेबी केमरा लेता गया। मोटर उन लोगों को पहुंचाकर लौट आई। लेने को दूसरे दिन आना था।

थानेदार गांव में आचुका था। उस गांव के कुछ लोगों ने, जिनमें एक नचैया भी था, ब्रिटिश-साम्राज्य के खिलाफ़ षडयन्त्र किया था! हथियार इकट्ठे करके वे उस साम्राज्य को नष्ट भ्रष्ट कर डालना चाहते थे!! हथियार तो वहां नहीं थे, परन्तु षडयन्त्र था। पञ्चम के घर में कोई न था। किवाड़ों पर सांकल चढ़ी हुई थी। भीतर सन्नाटा था। यही हाल गिरधारी के मकान का था। षडयन्त्र था—शून्यका, सुनसान का षडयन्त्र।

पहले वाले थानेदार की बदली हो गई थी। उसकी जगह दूसरा थानेदार आगया था। अंग्रेज़ी पढ़ा लिखा, बी० ए० पास। 'कप्तान साहब' को इसकी विद्या, जवानी, और चुस्ती का भरोसा था। पुलिस में आए बहुत दिन नहीं हुए थे, परन्तु उसने नाम कमा लिया था। 'कप्तान साहब' को एक भरोसा और था—पढ़े लिखे कांग्रेसियों का यह आदमी अच्छा मुक़ाबिला कर सकेगा—कंटकेनैवकंटकम्।

महायुद्धों ने इंगलैंड और एमेरिका को जो कुछ भी दिया हो युक्त-प्रान्त की पुलिस को दो वरदान दिए—एक टैंक और दूसरा हवाई जहाज़। टैंक—आदमी की गठरी बनाकर उसको लुढ़काना; हवाई जहाज—आदमी को हवाई जहाज़ बनाकर तान देना। पठान और मुग़ल शासन से पुलिस ने मुर्ग़ा बनाना इत्यादि पाया था, वर्तमान वैज्ञानिक युग से उसने ये दो यन्त्र पाए! पठान-मुग़ल शासन में यह नौबत ज़रा देर में आती थी, और सो भी राजधानी में या बहुत बड़े शहरों में, क्योंकि गांवटी पञ्चायतों के बाहर मामले नहीं जाने पाते थे, परन्तु अब तो पञ्चायत, किसी मनुष्य की आकस्मिक मृत्यु का कारण लिखने----काग़ज का नाम पञ्चनामा—के लिए रह गई थी!

थानेदार गांव के बाहर ठहरा हुआ था। वह एक चारपाई पर बैठा था। दूसरे पर उसका साफ़ा रक्खा हुआ था। कुछ लोग मुर्ग़े बने हुए थे, कुछ टैंक, कुछ हवाई-जहाज़। स्त्रियां एक ओर बांधकर बिठला ली गई थीं। फटे कपड़ों में होकर उनके सूजे हुए अंग दिख रहे थे।

जैसे ही ये तीनों वहां पहुँचे थानेदार ज़रा सकपकाया। मुर्ग़े और हवाई जहाज़ मिट गए—अपने अवैज्ञानिक रूप में आगए।

थानेदार ग्रेजुएट था—ग्रेजुएट थानेदार था! उसने अपने सकपकाहट को एक अस्पष्ट 'हुं' में दबोच दिया! थोबन को चारपाई मंगाने के लिए इशारा किया। वह एक आदमी को लेकर चला गया। थानेदार ज्यों का त्यों बैठा रहा।

बोला, 'आइए। आप लोगों ने कैसे तकलीफ़ की?'

अचल सबसे आगे था। उसने उत्तर दिया,

'तकलीफ़ नहीं की है जनाब, महज़ एक फ़र्ज़ अदा करने आए हैं हमलोग। यूनीवर्सिटी का इम्तिहान देने के बाद अब और कुछ काम हम लोगों के पास नहीं है। यह क्या हो रहा है, जनाब?'

पुलिस के साथ बातचीत करने में हिन्दी भाषा का व्यवहार उतना ही निषिद्ध समझा जाता है जितना मछली बाज़ार में वेद की ऋचा का उच्चारण या किसी मन्दिर में मरी हुई चिड़िया का लेजाना। उर्दू हाकिमों की भाषा रही है, प्रजा की नहीं; इसलिए, अचल हाकिम से हकूमत की भाषा में बोला।

परन्तु वह हाकिम उर्दू को दलालों की भाषा ख़याल करता था, इस लिए उसने अंग्रेज़ी में रौब कसा।

'आपलोग क्या पुलिस की क़ानूनी काररवाई में हस्तक्षेप करने आए हैं? मैं आपको इसके नतीजे से सावधान करता हूँ।'

अंग्रेज़ी ही में अचल ने उत्तर दिया, 'हमलोग हस्तात्तेप करने नहीं आए हैं। आपकी काररवाई को देखने भर के लिए आए हैं। क़ानून में इसकी कोई मनाई नहीं है।'

लोगों की यह कल्पना शायद ग़लत है कि अन्यायी के भीतर साहस नहीं होता। क्योंकि, थानेदार ने उन लोगों से बैठने के लिये नहीं कहा। अकड़ के साथ ही बातचीत करता रहा। परन्तु उन लोगों को धूप की अपेक्षा छाया अधिक रुची और वे पेड़ की छाया में आगए जहां एक ओर स्त्रियां बँधी बैठी थीं। उन स्त्रियों के बहुत निकट कुन्ती जाकर खड़ी होगई। स्त्रियां कुछ साधन पाकर बिलखने लगीं।

उदयचन्द की जेब में फ़ोटो का केमरा था। उसने जेब पर हाथ डाला। थानेदार की बग़ल में तमञ्चा पड़ा हुआ था। उस पर थानेदार की आंख गई और फिर नज़दीक बैठे हुए सिपाहियों पर। थानेदार ने समझा पिस्तौल तमंचे लेकर क्रांतिकारी आ गए!!!

अचल की उर्दू या अंग्रेज़ी का वह प्रभाव थानेदार पर नहीं पड़ा जो उदयचन्द के हाथ का जेब में पड़े हुए केमरे पर जाने का हुआ। उदय हाथ रक्खे रहा, उसने केमरा बाहर नहीं निकाला। थानेदार की हिम्मत या हेकड़ी ने दूसरी सूरत अंगेजी।

बात चीत अंग्रेज़ी में ही चलती रही।

थानेदार—'आप लोगों ने कौन सी परीक्षा दी है? आइए, बैठिए इस चारपाई पर। तब तक दूसरी आई जाती है। ये देवी जी कौन हैं?'

वे तीनों चारपाई पर बेतकल्लुफ़ी के साथ बैठ गए। कुन्ती का चेहरा सूखा हुआ था। उन स्त्रियों की दशा देख कर उसकी आंखें जल रही थीं।

अचल ने उत्तर दिया, 'मैं एम० ए० की परीक्षा में बैठा हूँ, ये दोनों बी० ए० की परीक्षा में। हम लोग आपका कुछ और परिचय चाहते हैं। आप शिक्षित जान पड़ते हैं। साधारण पुलिस वालों से ऊपर।'

थानेदार—'मैं ग्रेजुएट हूं। आई० सी० एस० के इम्तहान में बैठा, कुछ नम्बरों से फ़ेल हो गया; डिप्टी कलक्टरी और डिप्टी सुपरिनटेनडैन्ट की परीक्षाओं के दाखिले के लिए बैठा, थोड़े थोड़े नम्बरों से उनमें भी चूक गया, थानेदारी में—'

अचल—'इसमें भी आप चूकेंगे और शायद बहुत ज्यादा नम्बरों से।'

थानेदार—'मैं थानेदारी के इम्तिहान में प्रथम आया था।'

अचल—'जिस दिन थानेदार और जनता, कोई भी सरकारी नौकर और जनता, के बीच की, खाई पुर जायगी, उसी दिन आप सौ में सौ नम्बर से हारेंगे।'

थानेदार—'आप सोचते होंगे जब कांग्रेस का राज हो जावेगा तब ये सब महात्मा या साधू सन्त हो जावेंगे और पुलिस का काम अपराधियों को केवल पुचकारने से चल जाया करेगा। कांग्रेस के राज में भी पुलिस की ज़रूरत पड़ेगी और बदमाशों की हुकूमत सत्यनारायण की कथा सुना सुनाकर नहीं हो सकेगी।'

अचल—'कांग्रेस राज की भी पुलिस यदि ऐसी ही रही तो कांग्रेस को अलग कर दिया जायगा और उसकी जगह ऐसी पार्टी राज करने के लिए उठ खड़ी होगी जिसमें जानवर को आदमी बनाने का सामर्थ्य होगा।

थोबन चारपाई लिवा कर आ गया।

अचल और उदयचन्द दूसरी चारपाई पर बैठ गए। थानेदार सन्देह की दृष्टि से उदयचन्द की जेब को चुराई हुई निगाहों देखता रहा। कुन्ती चुपचाप उठी और स्त्रियों के बन्धन खोलने में लग गई।

बोली, 'अपने घर जाओ। तुम्हारे साथ कोई अत्याचार नहीं कर सकेगा।'

थानेदार ने कड़क कर कहा, 'यह क्या कर रही हो ?'

कुन्ती अकड़कर खड़ी हो गई

'अपना कर्तव्य पालन कर रही हूं। आपको पकड़ना हो तो मुझको पकड़िए। आप इन ग़रीब स्त्रियों का और अधिक अपमान नहीं कर सकेंगे।'

उदयचन्द बोला, 'देवी जी ज़रा ठहरिए।'

उसने अपनी जेब में हाथ डाला। थानेदार कांप गया। उसकी हिम्मत अपने तमंचे पर हाथ डालने की नहीं पड़ी।

उदयचन्द ने कहा, 'पहले मुझको इन लोगों का फ़ोटो ले लेने दीजिए। ज़रा थानेदार साहब को भी मालूम पड़े कि अत्याचारों का क्या फल होता है।'

उदयचन्द ने कैमरा निकाल कर कई चित्र ले लिए। खटखट—कुछ देर ही नहीं लगी।

थानेदार की देह संकट से तो निवृत्त हो गई—इन लोगों के पास पिस्तौल तमंचे नहीं हैं। परन्तु नौकरी-संकट तुरन्त प्राणों पर सवार हो गया।

उसको मालूम था पुलिस थोड़े से सबूत के ही भरोसे किसी भी हिन्दुस्थानी को धूल में मिला सकती है—ज़िला मैजिस्ट्रेट, 'कप्तान साहब' सब उसका यक़ीन करेंगे, लेकिन पुलिस के खिलाफ़ अच्छा प्रमाण होने पर भी अपर्याप्त समझा जायगा। पर यह फ़ोटो! मुक़दमा तो नहीं चल सकता—नौकरी का अड्डा अवश्य साफ़ करवा सकता है, क्योंकि राष्ट्रीय पत्रों में उन फ़ोटो का छपना: सम्पादकों की टीका-टिप्पणियां; उन टीकाओं का हिन्दुस्थान के बाहर प्रभाव—यह सब 'कप्तान साहब' या किसी बड़े साहब को अच्छा नहीं लगता था।

उदयचन्द जब फ़ोटो ले चुका तब उसने कुन्ती को संकेत किया। थानेदार मना करता ही रह गया। कुन्ती ने अपना काम कर डाला। परन्तु वे स्त्रियां वहां से नहीं हटीं। उनके पुरुष तो अभी वहीं मुसीबत में थे।

कुन्ती के इस व्यापार को देखकर अचल मुग्ध हो गया।

कुन्ती ने थानेदार को चिनोती दी, 'पकड़ लीजिए मुझको।'

थानेदार ने शान झाड़ते हुए कहा, 'बैठिए, देवी जी, बैठिए। मैं आपके साथ कोई ज्यादती नहीं करना चाहता।'

'पकड़ लीजिए', कुन्ती ने दुहराया; 'अभी तो उनके केमरे में और भी फ़िल्म है।'

थानेदार ने अपने प्रलयपूर्ण क्रोध को हँसी में बिखेरा। दूसरी ओर मुँह फेर कर हँसते हुए बोला, 'मैं भी कॉलेज जीवन में रहा हूँ। आपकी गिरफ्तारी की यह जगह नहीं है।'

'चुप बेहया।' कुन्ती के मुंह से निकला।

उदयचन्द ने कहा, 'आपके घर में तो मां बहिन होगी नहीं?'

अचल बोला, 'आप किस यूनिवर्सिटी और किस कुल के कलंक हैं?'

अचल खड़ा हो गया।

उसने अपना निश्चय प्रकट किया, 'आप इन लोगों को खोलते हैं या कोई और उपाय करूं? यदि ये अपराधी हैं तो इनको ले जाकर जेल में बन्द कर दीजिए और इन पर मुक़द्दमा चलाइए। नहीं तो मैं इनको खोलता हूँ—फ़ोटो तो ले ही लिए गए हैं।'

थानेदार बिलकुल ढीला पड़ गया।

उसने कहा, 'खोल दो सिपाहियो, इनको।'

सिपाहियों द्वारा खोले जाने के समय उदयचन्द ने फिर केमरे का प्रयोग किया।

सिपाहियों की आकृतियां बिगड़ गईं।

थानेदार बोला, 'आप चाहे जितने फ़ोटो ले लीजिए। मेरा कुछ नहीं जायगा। ये लोग मेरे दुश्मन तो हैं नहीं, सरकार के दुश्मन हैं। सरकार इन फ़ोटों को क्या महत्व देगी, यह आप नहीं जानते। मैं जनता हूं।'

'खैर, यह आगे की बात है,' अचल ने कहा, और वह उन लोगों को लेकर गांव की ओर जाने को हुआ।

'आप कहां ठहरे हैं?' थानेदार ने पूछा और साथ ही कहा, 'मैं आपके पास थोड़ी देर में आऊँगा।'

'पञ्चम के घर पर मिलूंगा' कहते हुए अचल उन सब लोगों के साथ चला गया।

स्त्रियां अब भी रो रही थीं।

× × × ×

पञ्चम की पौर उन सब लोगों से भर गई थी। एक पीढ़ी पर कुन्ती अलग बैठी थी।

पञ्चम दो बार जिस बात को कह चुका था, उसने तिहराई, 'इस जानवर के थानेदार को गोली के घाट ही उतारना पड़ेगा। थाने को खाक में।'

अचल ने फिर समझाया, 'सत्याग्रह की लड़ाई का हथियार बन्दूक तलवार नहीं है। अपनी सची बात पर अटल होकर डटे रहो, बस यही एक सीधा हथियार है।'

गिरधारी—'बाबूजी, आप लोग न आए होते तो हमारा सत्याग्रह कौड़ी मोल भी न चलता।'

कुन्ती—'पर हम लोगों ने तो कोई हथियार नहीं चलाए।'

पञ्चम—'अंग्रेज़ी बोली तो चलाई, बहिन जी। वह क्या हम लोगों की हिन्दी बोली को मान जाता ?'

गिरधारी—'बहिन जी ने जब अंग्रेज़ी में फटकारा, और उन बाबूजी ने फोटो लिया तब उसके होश गुम हुए।'

पञ्चम—'बाबूजी, आप लोग भले ही कहो, परन्तु हम देहाती लोग जानते हैं कि जब स्यार पागल होजाता है, तब उसको पत्थरों और लाठियों से ही ठिकाने लगाया जा सकता है। बन्दूक हो तो और भी अच्छा।'

× × × ×

थाने को वापिस जाने के पहले थानेदार उन लोगों के पास आया। अंग्रेज़ी या उर्दू—किसी में भी—वह नहीं बोला। सीधी हिन्दी में बातचीत हुई।

थानेदार—'हम लोग क्या करें बाबू साहब ? हम तो कुल्हाड़ी के बेंट भर हैं। अफ़सर हुकुम देते हैं, हमको करना पड़ता है। पहले थानेदार की बदली इसी झंझट में हुई।'

अचल—'स्तीफ़ा दे दीजिए। दुनियां में बहुत काम मिल जायंगे।'

थानेदार—'अपनी रहन के मुआफ़िक़ बहुत ढूंढ़े। नहीं मिले, तब इस मुहक़में में आना पड़ा।'

अचल—'रहन सहन को सुधारिए। किसान और मज़दूर किस तरह अपना जीवन चलाते हैं ?

थानेदार—'ख़ैर, अब यह सब तो नहीं हो सकता। मैं आपसे एक अर्ज़ करने आया हूँ। आप उन फ़ोटों को काम में मत लाइए। मैं मुकद्दमा नहीं चलाऊँगा। इन लोगों से कह दीजिए कि हथियार बथियार न रक्खें। सरकार जलूसों झण्डा से इतना नहीं डरती जितना हथियारों के नाम से डरती है। दूसरे, इन लोगों को समझा दीजिए कि दल-बन्दी में न पड़ें, थोबन को तंग न करें, नहीं तो मुझको किसी दिन शान्ति क़ायम रखने के सिलसिले में ज़मानत मुचलके की कारवाई करनी पड़ेगी।'

अचल—'हम लोग दल-बन्दी पसन्द नहीं करते, समझाने की कोशिश करूंगा। परन्तु आपने एक काम बहुत बुरा किया—स्त्रियों की मारपीट नहीं करनी चाहिए थी।'

थानेदार—'मैंने नहीं की, और न करवाई। इसकी ज़िम्मेदारी थोबन और उसके दल पर ज्यादा है।'

थानेदार चला गया।

× × × ×

संध्या के समय कुन्ती और अचल थोड़ी देर के लिए अकेले रह गए।

अचल ने कहा, 'आज जो रूप मैंने तुम्हारा देखा वह है नारी का वास्तविक सौन्दर्य । जो अक्षय है और अमिट है ।'

कुन्ती उत्साह के साथ बोली, 'उस समय मैं मरने से बिलकुल नहीं डर रही थी । कोई गोली चला देता तो मरते समय भी प्रसन्न रहती ।'

'कुन्ती के मरने के पहले अचल गोली खाता । अपनी आंखों के सामने अचल कुन्ती को मरते देखे ! असंभव है ।'

'क्या कहते हो अचल बाबू ? आपके पहले कुन्ती संसार से चली जायगी ।'

'आज से पहले अपने हृदय में तुम्हारे लिए इतना महान, इतना विशाल प्रेम कभी अनुभव नहीं किया । यदि किसी प्रकर फिर वे पुराने दिन लौट आते ।'

'अचल बाबू मैं यह सब नहीं सुनना चाहती ।'

× × × ×

खाना खाने के बाद पञ्चम के आंगन में वे सब लोग बैठे । हवा में कुछ टंडक आगई और दिन भर की थकावट पर सभी के मन में कुछ खुमारी । खास खास लोग ही बैठे थे, उनमें तिजुआ न था ।'

कुन्ती ने जमुहाई लेते हुए कहा, 'तिजुआ नहीं दिखलाई पड़ता ?'

पञ्चम ने बिना किसी ढिठाई के उत्तर दिया, 'घर चला गया है । औरतों की सूजी हुई पीठों पर उसका नाच नहीं हो सकता है, बहिन जी ।'

कुन्ती धीरे से बोली, 'मैंने वैसे ही पूछा था नाच का कोई अवसर भी तो नहीं है ।'

पञ्चम ने फफकते हुए स्वर में कहा, 'किसी दिन भगवान हमारे दिन लौटायंगे । जब हम थोबन सरीखे उठाईगीरों, थानेदार सरीखे दुष्टों और थानेदारों की नकेल पकड़ने वाले क्रूरों की अकल ठिकाने लगादेंगे तब समझेंगे हम को आज़ादी मिली और तभी तिजुआ का नाच रंग होगा । वैसे पेट भरने के लिए हम लोग हल चला लेते हैं और थकान

दूर करने के लिए तिजुआ नाच भी लेता है, पर यह तो मसान की 'राम राम सत्य' सरीखी बात है। जब हम लोग जोड़ की बाकी और गुणा का भाग कर डालेंगे, तब समझेंगे कुछ हुआ।'

अचल उत्साह के साथ बोला, 'पञ्चम, आज़ादी आयगी, और फिर आयगी। ऐसी आयगी कि संभाले न संभलेगी। जोड़ की बाकी गुणा का भाग तो ज़माना ही कर रहा है।'

एक आह को दबाकर पञ्चम ने कहा, 'बाबू जी, वह आज़ादी आप लोगों की होगी। हमारी और आपकी आज़ादी में अन्तर है।'

अचल के मन में यह बात गड़गई।

उसने विषयान्तर किया, 'हमारी सलाह है कि तुम हथियारों का प्रयोग मत करना। नुक़सान उठाओगे। हमारे आन्दोलन को इससे ठेस लगेगी।'

पञ्चम ने पूछा, 'आप कहें तो हम लोग उनको किसी जंगली कुएँ में डालदें? आपकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं चलना चाहते हम लोग।'

अचल ने थोड़ी देर विचार किया।

बोला, 'नहीं हम यह नहीं कहते। उनको कहीं सुरक्षित रखदो। शायद कभी दूर भविष्य में उनका काम पड़–जाय। स्त्रियों की आज की हालत देखकर मेरा हृदय और विश्वास, दोनों, हिल गए हैं।'

फिर अचल को बापू का चेहरा याद आगया, और विपत्तियों का सामना करने वाली वह अमर मुस्कराहट।

साथ ही स्त्रियों की सूजी हुई पीठें।

मनुष्य की दानवीय बर्बरता का सामना कौन करेगा? कौन करेगा? यह प्रश्न बार बार उस युवक के हृदय में उठा।

साधुता करेगी? पुरुषार्थ का सुधरा हुआ, परिष्कृत रूप करेगा? क्या नर विज्ञान भी इस प्रश्न का कोई उत्तर दे सकता है? मनुष्य की प्रकृति के भीतर जो परम्परागत लक्षण न्यस्त हैं उनका दमन नहीं किया

जा सकता। उनके रूप विकृत होकर केवल बदल सकते हैं। ये देहाती साधु नहीं हो सकते। साधुओं का बाना पहिनने पर ये क्या हो जायंगे सो स्पष्ट है।

अचल ने कहा, 'भाई पञ्चम, मैं यह नहीं कहता कि हथियारों को कहीं फेकफाक दो। किसी किसी क्रूर निर्मम अत्याचारी का दमन शायद हथियार से ही हो सकता है, परन्तु उनको काम में लाना तब जब हम लोगों से सलाह लेलो। आपस में तो उनको कभी चलाना मत।'

'बहुत अच्छा', 'पञ्चम ने हर्ष स्वीकृति दी। परन्तु उसके मन ने प्रतिवाद किया, ' जिस समय बात अनी पर आ अटकेगी, तब इनसे पूछने जाओगे!'

अचल ने अपनी बात का विश्लेषण किया, 'सशस्त्र क्रान्ति का कारण इसी प्रकार का अत्याचार होता है और उसका आधार मेरा जैसा समर्थन।'

दूसरे दिन मोटर आई और वे लोग चले गए। न तो थानेदार ने कोई मुक़द्दमा बना कर खड़ा कर पाया और न उदयचन्द के चित्र कहीं प्रकाशित हुए।'

पञ्चम इत्यादि के मन में थांबन, थानेदार और स्त्रियों की पीठ की सूजन हमेशा कसकती रही।'

[२५]

कुन्ती ने केशों में गुलाब के फूल सजाए, और गुलाब के फूलों को बेला के फूलों से संवारा। उस समय सुधाकर काम पर नहीं गया था। वह मुस्कराती हुई उसके सामने आई। सुधाकर ने कुन्ती के पीले चेहरे दृढ़ ठोड़ी और बड़ी आंखों पर गुलाब और बेले की शोखी को अपनी यात्रा का बाधक समझा। परन्तु उसने अपने भाव को ऊपर नहीं आने दिया। रुक गया।

'क्या गुलाब और बेले की कलियां आज प्रातः काल के पहले ही खिलगईं ? सुधाकर ने शिष्टाचार में स्नेह को घोलने की चेष्टा करते करते हुए कहा।

कुन्ती ने व्यङ्ग किया, 'कलियां तो सदा ही प्रातः काल के पहले खिलती हैं। कोई उनका देखने परखने वाला भी तो हो।'

सुधाकर ने इसको किसी अभिनय की भाषा समझा।

अभिनय को छोड़ कर बोला,

'तो अब चार बजे सबेरे उठकर उसी समय से चार बजे शाम तक कलियां को ही निहारता रहा करूँगा।'

वह हँसा।

हँसते हुए ही कुन्ती ने उसी क्रम में कहा, 'चार बजे तक कलियां, फूल सब मुर्झा जायंगे।'

सुधाकर ने सीधे तौर पर पूछा, 'आज मेरे साथ काम पर चलोगी ? हवा खोरी हो जायगी। अभी लौट आना।'

उसने भी सीधा उत्तर दिया, 'तो यह कहिए कि आप को काम पर जाने की जल्दी पड़ रही है।'

हताश सा होकर सुधाकर बोला, 'कुछ देर हो जायगी तो कुछ बात चीत ही करेंगे।'

रीती आंखों सुधाकर देखने लगा, परन्तु ध्यान में कोई विषय बात करने के लायक़ नहीं आया। शून्य को मिटाने के लिए उसने कहा—

आज कुछ बिल बनवाकर चुकावरा लेना है। सोचता हूं तुम्हारे लिए एक वैसा हार ले आऊँ जैसा परसों के फ़िल्म में वह तारिका पहिने दिखलाई पड़ी थी। तुमने उसको पसन्द भी किया था।'

'मैंने उसको सराहा भर था, कुन्ती बोलीः आजायगा तो पहिन भी लूँगी, परन्तु कोई विशेष इच्छा नहीं है।'

'और कुछ ले आऊँ?'

'मुझको तो कुछ नहीं चाहिए। अब तुम्हें देर हो रही है, जाओ न! पर दफ़्तरों के खुलने में तो अभी विलम्ब है।'

'हां, हां काफ़ी देर है। पहले थोड़ी देर के लिए काम पर ठहरूँगा, मेरे पहुंच जाने से मज़दूर काम चोरी नहीं कर पाते हैं, फिर दफ्तर का समय होने पर बिलों के चुकावरे के लिए वहीं से चला जाऊँगा, पर कोई विशेष जल्दी नहीं है।'

मज़दूरों के जिकर पर कुन्ती को उस गांव के पञ्चम गिरधारी इत्यादि का स्मरण हो आया। बिलों के चुकावरे और हार की अन्तर्वासना ने उस स्मृति को मन में गाड़ दिया।'

कुन्ती ने हठ के स्वर में अनुरोध किया, 'तो अब जाओ। काम देखो, मैं व्यर्थ नहीं रोकना चाहती।'

सुधाकर रुकना नहीं चाहता था, परन्तु उसने मचल कर अहसान लेने की कोशिश की, 'अब तो थोड़ी देर रुकूँगा, तुम्हारे फूलों को चुपचाप देखता रहूँगा।'

'मुझको जब दिखलाने हों,' कुन्ती ने मुस्कराते हुए और गर्दन को एक हलकी मरोड़ देकर फूलों को लहराते हुए कहा, 'आप जाइए, नहीं तो मैं चली।'

सुधाकर तो जाना ही चाहता था; परन्तु उसने कुन्ती पर थोड़ा और अहसान लादने के लिए पैर फैलाए,

'मैं तो बैठूँगा। तुमको कहीं जाना है क्या ?'

कुन्ती को कहीं नहीं जाना था, लेकिन उसको सुधाकर का यह प्रश्न अच्छा नहीं लगा। फिर भी उसने कोई क्षोभ व्यक्त नहीं किया।

'मुझको कहीं नहीं जाना है। इस समय मैं कहीं भी तो नहीं जाती।'

'तो मेरे साथ चलो।'

'साथ भी नहीं जाऊँगी। हठ मत करो। जाओ।'

सुधाकर ने कुन्ती पर और अहसान नहीं लादा। वह अपने काम पर चला गया।

× × × ×

परीक्षाओं का फल आ गया। अचल प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण, निशा तीसरी श्रेणी में और कुन्ती फ़ेल।

जब कुन्ती निशा के घर उसको बधाई देने गई, तब उसको कोई रञ्ज न था और निशा को सफल होने की कोई विशेष ख़ुशी न थी।

निशा कुन्ती की आंखों में किसी विषाद को खोज रही थी और कुन्ती निशा की आंखों में किसी मोद को।

निशा ने गम्भीरता के साथ कहा, 'परीक्षकों में भी एक सनक होती है। मुझको कोई आशा न थी। पर पास फ़ेल का हम लोगों के लिए कोई बड़ा अर्थ नहीं है। तुम पास हो जातीं तो मुझको बड़ी प्रसन्नता होती। ख़ैर कोई बात नहीं। अगले साल देखा जायगा।'

कुन्ती बोली, 'बात तो कुछ भी नहीं है, क्योंकि हम लोगों को किसी की नौकरी तो करनी नहीं है। बात की बात ही है। दो अक्षर नाम के जुड़ जाने से पुरुषों की बराबरी की ध्वनि निकलने लगती है। और उसमें कुछ नहीं है। यदि अगले साल बैठी तो बहुत अच्छे दर्जे में निकलने की चेष्टा करूँगी।'

'यदि क्यों ?' कुन्ती ने पूछा: 'समय तुम्हारे पास काफ़ी है ही। अचल बाबू क़ानून की परीक्षा के लिए बैठेंगे जिसमें घंटे आध घंटे रोज़ से अधिक कुछ पढ़ना नहीं पड़ता। काफ़ी समय दे सकेंगे। देंगे न ?'

'मैं उनसे नहीं पढ़ना चाहती', कुन्ती ने कहा।

'क्यों ! ऐसी क्या बात हुई है ? वे तो बड़े सज्जन हैं।'

'बात तो कुछ नहीं हुई, परन्तु उनका इतना समय क्यों ख़राब करूँ ?'

'अबतो उनके पास समय ही समय है। मनमुटाव का कोई कारण हो गया है क्या ?'

'सो तो उनका जैसा संसार में बिरला ही कोई और होगा। सोचती हूँ, किसी अच्छी अध्यापिका को लगा लूंगी।'

'परन्तु संगीत इत्यादि सब विषयों की शिक्षा देने वाली कोई ऐसी अध्यापिका नहीं दिखती और अचल की जानकारी तो मानो सर्वतोमुखी है। ताल का ज्ञान तो उनके समान किसी भी अध्यापिका को न होगा।'

कुन्ती का हृदय कुछ धसका। आधे क्षण के लिए उसको कुछ ऐसा भान हुआ जैसे किसी अत्यन्त सुनसान स्थान में डाल दी गई हो।

'मेरा उन पर कोई अधिकार नहीं है', कुन्ती ने कहा।

'पहले क्या अधिकार था ?' निशा के मुँह से निकल गया। परन्तु वह पछताई नहीं।

कुन्ती ने उत्तर दिया, 'पहले विवाह नहीं हुआ था। कोई लड़का या लड़की आवाज़ कसती तो में परवाह नहीं करती थी। हँसी में उड़ा देती थी या क्रोध में। परन्तु अब नहीं सह सकूँगी, शायद कोई कुछ कह उठे।

'सुधाकर तो कुछ कहते न होंगे ! कुछ कहेंगे भी नहीं।'

'हां सो तो है---उनको तो आजकल बात करने की भी फ़ुरसत नहीं। सिनेमा तक देखने नहीं जापाते। मेरी ही इच्छा में बल पड़ गया है। फिर भी देखूँगी। मन ने मनाई न की तो अचल जैसा सिखलाने वाला दूसरा सचमुच कोई नहीं है।'

× × × ×

बुआजी अपने ठाकुर जी पर जितने फूल चढ़ाती थीं, कुन्ती उससे कम ही अपने लिए काम में लाती थी। तो भी बुआजी को उसके सुमन-गुम्फित-केश नहीं सुहाते थे। कभी फूलों के ऊपर से, कभी साड़ियों के ऊपर से, कभी गायन पर से और कभी नौकरानी पर होकर बातचीत हो ही पड़ती थी। उन दोनों का उस बड़ी कोठी में निस्तार अलग अलग था, तो भी समक्षता के अनेक अवसर आ जाते थे, और बहुधा कुरस पैदा हो जाता था। सुधाकर को कुन्ती तो कुछ नहीं सुनाती थी—क्योंकि, वह लगभग सभी गार्हस्थिक और बाहरी परस्थितियों के नियंत्रण में अपने को समर्थ समझती थी, परन्तु बुआजी को चैन नहीं पड़ता था जब तक वे पूरी सनूची आपबीती सुधाकर को न सुनादें। बुढ़िया सोचती थी किसी न किसी दिन कुन्ती को सुधार कर ही रहूँगी। सुधाकर कुछ दिनों तो सुनी अनसुनी करता रहा, परन्तु थोड़े समय से उसको अखरने लगा। उसको भासने लगा कुन्ती बुआजी को थोड़ा बहुत जरूर परेशान करती है—क्योंकि कुंती स्वयं कोई शिकायत करती न थी।

सुधाकर काम पर से थका मांदा तो आया ही था, वह भी शाम को। बुआ ने सविस्तार अपने युद्ध की सूचना उसको दी। वह बैठक में चला गया और आराम-कुर्सी पर पड़ गया। कुछ क्षण उपरान्त कुन्ती आ गई।

'खाना खालो,' कुन्ती ने अनुरोध किया।

'काम पर चाय वाय पीली थी,' अनमने स्वर में सुधाकर ने कहा।

कुन्ती ने प्रश्न किया, 'उदास क्यों हो? क्या बहुत थक गए हो?'

सुधाकर चुप पड़ा रहा।

कुन्ती ने पूछा, 'क्या बात है?'

'क्या कहूँ कुछ समझ में नहीं आता,' सुधाकर ने शरीर को मोड़कर बैठते हुए कहा, 'सोचता हूं बुआजी क्या कउये खाकर चलो थीं भगवान के घर से। कितनी उमर पाई है, कुछ ठिकाना नहीं।'

'मैं चाहती हूं वे सौ बरस और जिएं।'

'तो मैं सौ दिन भी मुश्किल से जी पाऊँगा।'

'दूर से ये निशाने मत चलाओ। वे बढ़ाबढ़ाकर बातें सुनाती हैं और मैं शिकायतें करना, उलहने देना समझती हूं तुच्छ। एकतरफ़ की सुनकर तुम नाहक़ अपने को भर लेते हो। मेरा कोई दोष नहीं है। मुझसे पूछते जाओ मैं बतलाती चलूंगी।'

'तुम घर की स्वामिन हो, मुझको क्या पूछना। चाहे जो करो। इतना ज़रूर खयाल रक्खो कि बुआजी मेरे बाप की बहिन हैं और उन्होंने ही मुझको पालपोस कर बड़ा किया है।'

'बुआजी ने क्या क्या कहा है तुमसे ?'

'कोई खास बात नहीं कही। रोती थीं।'

'मैं अगर रोने लगूं तो बुआजी से कुछ कहोगे या यों ही बरबरा उठोगे ?'

'मैंने बरबराया तो कुछ भी नहीं है।'

सुधाकर यकायक हँस पड़ा। गंभीर भी तुरन्त हो गया। बोला, 'तुम में पुरुषों के गुण अधिक हैं।' इसलिए तुमसे बात करना भी कठिन है।'

'अर्थात मैं सैक्सलैस, नारीत्व—विहीन, हो गई हूं,' कुन्ती ने अपने ही विश्लेषण पर खीझ कर कहा: 'इसलिए तुमको मुझसे डर लगता है। इस पर भी मनमानी कह डालने में कभी नहीं हिचकते।'

कुन्ती की खीझ पर सुधाकर को सन्तोष हुआ।

'मैंने क्या कहा ?'

''मैं सौ दिन भी मुश्किल से जी पाऊंगा ! यह किसने कहा था ! यानी मैं इतनी दुखदायिनी हूँ अब ! क्यों ? यही न ?

बिलकुल ढीले पड़कर सुधाकर ने कहा, 'मैंने माना, तुम्हारा ज़रा भी कसूर नहीं। पर क्या हम लोगों का यह कर्तव्य नहीं कि उस बुढ़िया

की ऊलजलूल भी सहते रहें और किसी प्रकार उसको सुखी करें ? संसार हम लोगों को ही दोषी ठहरावेगा।'

कुन्ती ने अब बतलाया, 'दो चार फूल बालों में खोंस लिए, दिन में दो एक बार साड़ी बदल ली कि देखते ही बुआजी न जानें क्यों आग बबूला हो जाती हैं। कहने लगती हैं, कहां थिरकने मटकने जारही हो ?' मैं क्या थिरकती मटकती हूँ ? सिगरिट क्यों नहीं पीती ? मैं क्या नारीत्व विहीन हूँ जो सिगरिट पीने लगूँ ?'

सुधाकर ने निर्णय दिया, 'यह उनकी बकवास है, बुढ़ापे की झक। मैं अगर कुछ कहूं तो शायद वे सिर दे दे पटकें। अच्छा यही है कि सुनी अनसुनी करदो। उनको यदि सिगरिट का पिया जाना बुरा लगता है तो छोड़ दूँगा। तुमसे क्यों वे ऐसी वाहियात बात कहती हैं ?'

कुन्ती हँसी और उसने सुधाकर को हँसाने की कोशिश की।

जिस हँसी पर उसको मादकता सवार होजाती थी उसने केवल एक निश्चय प्रकट करवा पाया: सुधाकर ने कहा, 'चलो खाना खालूँ।'

कुन्ती ने प्रस्ताव किया, 'दूसरे शो में सिनेमा देखने चलोगे ?'

सुधाकर ने थकावट के कारण असमर्थता प्रकट की।

[२६]

हिन्दू और मुसलमानों में दंगे हुए। ग़रीब हिन्दू और मुसलमान ही अधिकांश हताहत। कुछ थोड़े से बड़े कहलाने वाले लोग भी मारे गए। सुधाकर के शहर में भी फ़साद की कुछ हवा थी ख़ास तौर पर स्त्रियों के अपमान के समाचारों पर। दूसरे शहरों में मारकाट अधिक हो गई थी। अफ़वाह यही थी।

इस पर भी कुन्ती का इधर उधर जाना बन्द नहीं हुआ था। सुधाकर को उसके रोकने का कारण मिल गया।

'तुम्हारा इतना इधर उधर जाना आना मुझको पसन्द नहीं है,' सुधाकर ने कहा: 'मालूम नहीं बुद्धि से काम क्यों नहीं लेतीं! दंगे फ़साद हो रहे हैं, न जानें किस घड़ी हमारे ही शहर में कुछ उत्पात हो पड़े।'

कुन्ती ने प्रतिवाद किया, 'पुरुषों को स्त्रियों का भरोसा नहीं है, इस लिए इस तरह के डरपोकपने की बात करते हैं। जो स्त्रियां अपनी रक्षा का दम रखती हैं उनका कोई कुछ नहीं कर सकता। उस दिन थानेदार तमञ्चा लगाए बैठा था और उसके आस पास सिपाही थे। मैंने हिम्मत करके बंधी हुई स्त्रियों को खोल दिया और थानेदार के सामने खड़ी हो गई। उसको चिनौती दी मैंने—पकड़लो हिम्मत हो तो, परन्तु वह झेंपकर रह गया।'

'परन्तु तुम्हारे साथ और लोग भी तो थे?'

'केवल दो। गांव भर थानेदार के अत्याचार का समर्थन कर रहा था यानी ज़िमीदार के दल के सब लोग। किसान मज़दूर अपनी स्त्रियों के साथ ही बंधे पड़े थे।'

'लेकिन आपेसे बाहर वाले बलवाई लोग न तो थानेदार और सिपाहियों के बराबर के पशु होते हैं और न उनके बराबर के आदमी। वे तो आग भखने वाले जन्तु ही और किस्म के होते हैं।'

'इसीलिए तो इनसे डरना नहीं चाहिए। इनकी अक़ल भी आसानी के साथ ठिकाने लगाई जा सकती है।'

'करो जो मन में आवे, क्योंकि कहना मानना तो तुमने सीखा नहीं है। सुना है निशा के पति का क्या हुआ है ?'

'क्या हुआ है ? मैंने तो कुछ नहीं सुना है। दो तीन दिन से उसके पास गई ही नहीं।'

'तो फिर कहां गई थीं ?'

'माता जी के पास घर गई। सहेलियों के घरों पर गई और एक दिन अचल कुमार के घर गई थी।'

'हुं ! निशा का पति बलवे में मारा गया है।'

'ओफ़ !'

भरभरा कर कुन्ती कुर्सी पर बैठ गई। उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं, मानो सामने निशा के पति का वध हो रहा हो और वह उस हत्या को देखना न चाहती हो।

सुधाकर कहता गया, 'वह बलवे बन्द करने कराने के लिए स्वयं-सेवकों के साथ घूमा करता था। साथ में उसके कुछ स्वयंसेवक भी थे। वे घायल हो गए और उस बिचारे का तो प्राणान्त ही हो गया। आज ही खबर आई है। शहर में कुहराम मच गया है। तुम समझती हो हम बड़ी सूरमा हैं। अब तो मेरा कहना मानोगी ? न मानो, मैं तुम्हारे साथ छाया की तरह रहा करूँगा—कहीं भी जाओ संग रहा करूँगा।'

उसी क्षण सुधाकर की नजरों में उसका विस्तृत काम काज फिर गया। उसको कुन्ती के संग निरन्तर नहीं घूमना। केवल धमकी थी। कुन्ती के मुँह से फिर 'ओफ़' निकला।

बोली, 'मैं निशा के पास जाऊँगी। उस बिचारी की कितनी बुरी हालत हो रही होगी।'

'मैं मोटर से लिए चलता हूँ।'

'मोटर से नहीं जाऊँगी जिस प्रकार सदा जाया करती हूं उसी प्रकार जाऊँगी।'

'मुझको भी तो समवेदना के लिए जाना है।'

'ओफ़! निशा का क्या होगा?'

'क्या बतलाऊं—परन्तु उसकी ससुराल और मायका दोनों सम्पन्न हैं, कोई कष्ट नहीं हो सकता है।'

'तुम बहुत निर्मम हो। पतिविहीन स्त्री क्या सिर्फ़ खाने पीने के ही लिए जीवन धारण किए रहना चाहेगी? तुम स्त्री के हृदय को समझने की बुद्धि ही नहीं रखते हो।'

'खैर, जैसी कुछ बुद्धि है सो उससे तुमको और अन्य स्त्रियों को भी समझने की कोशिश करता रहता हूँ। इस समय सवाल जियाराम जी के यहां चलने का है, पर तुम्हारी तो आदत ही ज़रा ज़रा सी बात पर झंझट कर उठने की है। चलो मेरे साथ।'

'अच्छा बाबा साथ तो तुम्हारे चलूँगी, पर आऊंगी लौटकर अकेली ही।'

'क्यों क्या कहीं और भी जाना है?'

'अभी तो कोई निश्चय नहीं है, शायद जाऊं। पर निशा से ही बात करने में तो काफ़ी समय लगेगा।'

'हुँ।' सुधाकर ने कहा।

[२७]

एक कुटी कुटाई पिसी पिसाई कहावत है, समय सब घावों को पूर देता है। निशा को पति की स्मृति अतीत के पटल पर लिख छोड़ने के सिवाय और कुछ करने को था भी क्या? पिता चिन्ता में जर्जर था। सोचता था अब कोई पढ़ा लिखा साधारण घर का ही युवक मिल–जाय तो निशा का विधवा विवाह करदूं। वह सुधारवादी था और निशा को इनकार नहीं था। जियाराम जानता था कि कुंआरी लड़कियों के लिए ही अच्छे वरों का मिलना दुष्कर हो जाता है, विधवा के लिए सुधारवादियों में भी योग्य वर का मिलना कुछ सौभाग्य की बात समझी जानी चाहिए।'

कुन्ती ने भी कुछ सोचा। जियाराम से उसने बात चीत की।

जियाराम ने कहा, 'हो जाय तो इससे बढ़कर और कुछ हो ही नहीं सकता। परन्तु सम्भव नहीं जान पड़ता।'

निशा से सलाह की। निशा लाज सकोच भविष्य, साहस और अपने वातावरण की सीढ़ियां पर चढ़ी उतरी।

अन्त में बोली, 'आकाश के तारे तोड़ने का प्रयास करोगी क्या?'

× × × ×

बरसात समाप्ति पर आगई थी। बदली नहीं थी, हवा ठंडी। अचल अपनी बैठक में बेला बजा रहा था। कुन्ती के आते ही उसने बेला एक ओर रख दिया।

कुन्ती की आंखों में एक दीप्ति थी, ओठों के कोनों पर निश्चय। जिसने अचल को दबी हुई मुस्कान का भ्रम दिया।

अचल ने स्वागत किया।

कुन्ती ने बैठते ही कहा, 'आज गाना सुनाऊंगी। इसके लिए आई हूं। आपका सुनने को नहीं।'

कुन्ती के ओज को उसने सनक समझा। बोला, 'तो बेला तैयार है। आरम्भ करो, परन्तु कारुणिक राग या गीत न होना चाहिए।'

अचल ने हँसते हुए बेला को हाथ में ले लिया।

कुन्ती भी हँसी।

'आप भूले नहीं उस नादानी को!'

'वह नादानी नहीं थी। न मालूम क्या था। खैर।'

अचल ने बेले पर गज फेरा।

'ठहरिए, कुन्ती ने कहा, 'किसी भी नाते सही मैं आपके ऊपर अपना कुछ अधिकार समझती हूँ। पहले एक बात सुनिए, फिर गाना बाना होगा।'

अचल ने बेले को गोद में रख लिया, गज को हाथ में लिए रहा। उसकी आंखों में अचरज था।

मुस्कराकर बोला, 'मैंने कभी इनकार किया उस अधिकार से!'

'सुनिए, मैं एक प्रण करके आई हूँ।'

'तुम्हारे किसी भी प्रण को तोड़ने की शायद ही हिम्मत कर सकूँ, परन्तु वह तुमको नुक़सान पहुँचाने वाला न हो।'

कुन्ती हँस पड़ी। चेहरे पर उसके तेज बिखर गया।

'मैं प्रण करके आई हूं कि आपका प्रण तोड़ूंगी और फिर तोड़ूंगी,' कुन्ती ने कहा।

अचल का कलेजा ज़रा धड़का और फिर अपनी गति पर हो गया। उसने आंख मिला कर पूछा,—

'क्या? कैसा?' अचल के स्वर में कम्प था।

कुन्ती ने उस कम्प को पहिचान लिया। वह और हँसी। उसकी हँसी पर अचल सिकुड़ा।

कुन्ती बोली, 'आपने प्रण किया था कि जब तक जीवन में स्थिर नहीं हो जाऊँगा विवाह नहीं करूँगा।'

अचल ने चैन की सांस ली। मुस्कराया। उत्तर दिया, 'किया था, उसकी याद दिलाने का उद्देश्य?'

कुन्ती ने मुस्कान के साथ, परन्तु, दृढ़ स्वर में पूछा, 'आपको क्या प्रेम करने से भी इनकार है ?'

अचल की आंख नीची पड़ गई। पसीना सा छूटने को हुआ। वह उत्तर दे सकता था, परन्तु किन शब्दों में उस उत्तर को बिठलावे, यह सोचने लगा।

कुन्ती ने उसको सोचने का अवसर नहीं दिया। बोली, 'आप कुछ त्याग करने को तैयार हैं ?'

अचल ने उत्तर दिया, 'अवश्य, परन्तु मेरे त्याग से किसी की हानि न हो।'

'आप निशा के साथ प्रेम करिए, उसके साथ ब्याह करके उसको अपनाइए। केवल यही त्याग, और यही प्रण का विसर्जन'। कमरे में कुन्ती के खनकते हुए स्वर गूँज गए।

अचल नीचा सिर करके कुछ सोचने लगा।

गोद में से बेला कुछ खिसका और गज हाथ से छूट गया। शायद उसने गज को अलग कर दिया हो।

कुन्ती ने एक क्षण ठहर कर कहा, 'मेरे लिए आपके हृदय में आदर था—या—', कुन्ती रो पड़ी; हिलकी लेते हुए कहती गई, 'कुछ था, शायद रहा है। अब भी हो। उसी के नाते आंचल पसार कर भीख मांगती हूँ। आगे कभी और कुछ नहीं मांगूगी। मुझको परम सुख होगा। निशा को पाकर आप दुःखी नहीं रह सकेंगे। वह मुझसे बहुत अच्छी है—'

अचल ने गला साफ़ किया। सिर उठाया। गंभीर स्वर में बोला, 'मैं चाहता था तुमको सुखी बनाकर सुखी रहता। वह न हो सका। ब्याह तो मुझको करना ही है। किसी भी सुपात्र के साथ सही। निशा जानी हुई है। मैं विधवा विवाह का पक्षपाती हूँ। पर मैं तुम से यह नहीं छिपाना चाहता कि निशा के साथ विवाह करने से वास्तव में, मैं कुछ

त्याग तो कर ही रहा हूँ। मैं निशा के साथ विवाह करूंगा। शायद तुम कुछ तै करके फिर मेरे पास आई हो?'

कुन्ती ने आंसू नहीं पोंछे। उन आंसुओं में होकर एक मुस्कान फूट निकली जैसे बरसते हुए बादलों में से चन्द्रिका झांक जाय।

गले को स्थिर करके कुन्ती ने कहा, 'मैं अब सचमुच मुर्ख हूँ। लगता है जैसे आपके बहुत बहुत निकट आगई होऊँ।'

कुन्ती ने आंसू पोंछ डाले। गला भी स्थिर कर लिया। बोली, 'आपने एक दिन वह कौन सा विज्ञान या शास्त्र है जिसका ज़िकर किया था? —हां नर शास्त्र, नहीं नर–विज्ञान। आपने उसका हवाला देकर कहा था कि प्राचीन समाज या समूह का एक अज्ञात अवशेष हमारे देश में अब भी वर्तमान है—जब किसी लड़की का विवाह होता है तब उसकी बहिन या सखी सहेली वर को जीजा कहने लगती हैं। मैं आपसे जीजा कहा करूंगी, क्योंकि निशा मेरे लिए बहिन के बराबर है।'

कुन्ती की हँसी फूट पड़ी। अचल भी उस हँसी की संक्रामकता से न बच सका। जब हँसी का तूफान कुछ कम हुआ, तब अचल ने कहा,

'नर–विज्ञान का तुमने खूब प्रयोग किया!'

'एक प्रयोग और करूंगी,' कुन्ती बोली: 'बस आज से, अभी से आप, आप नहीं कहा करूंगी। सीधा 'तुम' 'जीजा जी' और 'तुम'।'

कुन्ती फिर हँसी।

अचल ने कहा, 'अवश्य, मैं तो इस 'आपको' बहुत पहले छुड़वा देना चाहता था, परन्तु डर लगता था तुमको कुछ खटके नहीं।'

'अब तो डर नहीं लगता तुम्हें?'

'बिलकुल नहीं।'

'बहुत अच्छा हुआ। मैं अब यह समाचार उन लोगों को भी देदूं?'

'हां दे दो। मैं अब अपना बेला बजाऊँगा, पर तुमने कुछ गाने की बात कही थी, निभाओ न उसको।'

'फिर कभी, अभी नहीं।'

कुन्ती चली गई। अचल बेला बजाने लगा। कुन्ती थोड़ी देर के लिए बैठक के बाहर और मकान के दरवाजे के बीच वाली गैल में कुछ क्षण के लिए रुकी। उसके आंसू आ गए थे। दृढ़ता के साथ उनको पोंछ कर वह चली गई।

[२८]

बिना किसी धूमधाम के अचल के साथ निशा का विवाह हो गया। बहुत से लोगों ने नाक भौंह सिकोड़ी, कुछ ने वाह वाह की—अधिकांश के मन में उठा, पहले दर्जे में एम० ए० पास, ऐसा कलाकार और कुआंरा, विधवा ही मिली इसको ब्याह करने के लिए !

सुधाकर ने सोचा, 'पहले से प्रेम रहा होगा दोनों के बीच में।'

पञ्चम और गिरधारी ने आपस में कहा, 'हम तो जानते थे, इन दोनों में से एक न एक के साथ अचल बाबू का प्रेम ज़रूर है। पर विधवा होने की ही नौबत न आती यदि इनके साथ पहले ही विवाह कर लिया होता।'

परन्तु निशा और अचल दोनों सुखी थे—अर्थात् एक दूसरे के विरुद्ध अपने मन में भ्रम को नहीं आने देते थे।

निशा ने अचल से एक दिन पूछा, 'कुन्ती न जाने क्यों उदास सी बनी रहती है। सुधाकर और उसमें कुछ अनबन सी बनी रहती है। कुन्ती कारण बतलाती नहीं। क्या हो सकता है कारण ?'

'मैं क्या बतला सकता हूं ! साधारण सी बात है। पति पत्नी में कुछ अनबन का हो जाना कुछ आश्चर्य की बात तो है नहीं। मेरे तुम्हारे बीच में भी हो सकती है।'

'असंभव।'

'क्यों ? असम्भव क्यों ?'

'कैसे ?'

'देखो, ऐसे—देह की मांग को पूरा करने के लिए आरम्भ में प्यार दुलार की झड़ी लगा दी, फिर हुआ कुपच। या, देह की मांग का आरम्भ से ही निरोध कर उठे। विद्रोह प्रेम की उपासना में—जो भाग्य से कुछ कम संभव है। बस गृह-कलह छिड़ी। देह की मांगों का और उन मांगों के निग्रह का समन्वय ही उस अनबन को असम्भव बना सकता

है। साथ ही एक दूसरे का विश्वास और रक्तगत कमज़ोरियों की परस्पर माफ़ी के लिए सबल हृदय की शक्ति।'

'तुमको सुधाकर और कुन्ती—दोनों—मानते हैं। क्या तुम उन्हें समझा नहीं सकोगे?'

'जब बच्चों को अक्षराभ्यास कराया जाता है और व्याकरण सिखलाई जाती है तब उनको एक एक मात्रा को सही तौर पर लिखने और एक एक वाक्य को व्याकरण की आज्ञा मनवाने में कितनी मुश्किल पड़ती है। परन्तु अभ्यास हो जाने के बाद ये ही बच्चे बड़े बड़े लेखक और कवि बन जाते हैं और उनको लिखते समय मात्रा और व्याकरण की याद भी नहीं आती—अनजानें और सहज ही लिखते चले जाते हैं। व्याकरण के नियमों का निषेध एक बड़ी भारी बाधा है, परन्तु उन नियमों को भूल जाने पर भी वे ग़लती नहीं करते और व्याकरण रचने वालों के उदाहरण तक बन जाते हैं। ग़लती भी कर गए तो उनका प्रयोग आर्ष प्रयोग कहलाने लगता है। सुधाकर और कुन्ती बालक नहीं हैं। उनको अनबन का जो अभ्यास पड़ गया है वह एक आर्ष प्रयोग भले ही कोई मान ले, परन्तु उसके सुधारने की पात्रता पुरुष में तो हो नहीं सकती। तुम सरीखी स्त्री कुछ कर सके तो करले।'

'व्याख्यान तो तुमने लम्बा दे डाला—कोशिश करूंगी। कुन्ती से ही कह सकती हूँ।'

'कह देखो, इसमें कुन्ती का दोष कम है, सुधाकर का अधिक। क्यों उसने शुरू से ही ग़लत व्याकरण और अक्षर सीखे और सिखलाए?'

'जी!'

'अच्छा, ठठोली पर आ गईं। मैं कोरे विदेह प्रेम का उपासक नहीं हूँ।'

'मैं तुमको अकेला छोड़ कर घर चली जाऊंगी।'

'और मैं तुमको अकेला छोड़कर बेला और पुस्तकों के पीछे पड़ जाऊंगा। जब उकता जाऊंगा तब तुमको मना लूंगा। या, तुम अकुला उठीं तो तुम मुझको मना लोगी।'

'बस झगड़ा खतम।' दोनों हँस पड़े।

× × × ×

एक दिन निशा ने कहा, 'तुमने मेरे लिए बहुत त्याग किया। तुमको कहीं अच्छी स्त्री मिल सकती थी।'

अचल ने आश्चर्य प्रकट किया, 'मैंने त्याग किया! झूठ मत बोला करो।'

'मैं सच कहती हूँ।'

'बकती हो। असली त्याग तुम्हारा है। हमारा समाज अब भी पिछड़ा हुआ है। उसी समाज के लाज-संकोच में विधवाएं अपने हाड़ मांस को गला गला कर और जला जला कर जीवन बिताती हैं। पाखंडियों और धूर्तों की पूजा होती है पर इन यातना ग्रस्त तपस्विनियों को कोई पूछता है? पहले मैं सोचता था मैंने वास्तव में त्याग किया है। परन्तु तुमको पाने के कुछ दिन बाद ही समझ में आगया कि त्याग मैंने नहीं, तुमने किया है। अनेक स्त्री-पुरुष तुम्हारी कितनी उपेक्षा न करते होंगे? वैसे ही अपने को चिता पर जन्म भर जलाती रहतीं तो ये स्त्री-पुरुष कुछ मौखिक आदर दे देते, परन्तु उनकी निश्शब्द ग्लानि को कितनी विधवाएं सह सकती हैं! इस पर भी कहती हो मैंने त्याग किया!'

'तुमको यदि कुन्ती जीवन-संगिनी मिल जाती तो तुम बहुत सुखी रहते।'

'संभव है। मैं उसको चाहता भी रहा हूँ। तुमसे छिपाऊंगा नहीं। शायद तुमको मालूम भी हो। कह नहीं सकता मेरे और उसके समन्वय का क्या रूप होता। तुमको पाकर अब और कुछ पाने की इच्छा नहीं रही। मैं बहुत सुखी हूँ।'

'तुम, बहुत बात कर लेते हो, मैं इतनी बातें करना नहीं जानती।'

'सोचना तो बहुत जानती हो।'

'क्या गुमसुम रहने को तुम सोचने की उपाधि दे रहे हो?'

चिल्ला चिल्लाकर सोच विचार तो वे ही स्त्री पुरुष करते हैं जिनको दूसरों का शोरगुल तो अच्छा नहीं लगता और अपना शोर बहुत पसन्द। तुम कैसी ग्रेजुएट हो?

'तो क्या स्त्री ग्रेजुएटों को ढोल पीटते फिरना चाहिए और क्या उनको अन्य स्त्रियों से अपना वर्ग भिन्न समझना चाहिए? पुरुष करें तो भले ही करें।'

'तो नम्बर एक की बात तो यह सीखी मैंने तुमसे।'

'नम्बर दो की फिर कभी।'

× × × ×

बैठक में जब उदयचन्द आया अचल को अधिक हृष्टपुष्ट देखकर बोला, 'यार, किस चक्की का पिसा खाते हो?'

'मौज की चक्की का, जो मन और विचार के पाटों में बारीक पीसी जाती है,' अचल ने हँसते हुए उत्तर दिया।

निशा उसी समय नाश्ते की तश्तरी लेकर आई थी, क्यों कि वे दोनों यथा शक्ति नौकरानी से इस प्रकार के काम नहीं लिया करते थे। उसने भी सुन लिया। उसको अच्छा नहीं लगा। जी चाहा एकाध फबती उदयचन्द पर कसूँ, परन्तु उसने अपने को रोक लिया।

सोचा, 'यदि इस तरह की कोई बात अचल के लिए मेरे मुँह से निकल जाय तो मुझको क्या उत्तर मिले?'

अचल के मन में आया, 'यदि निशा इस तरह की कोई दिल्लगी मुझसे करे तो? तो मैं सुन लूंगा, और कहूँगा तुम जानो और तुम्हारी चक्की जाने।'

उदयचन्द ने अनुरोध किया, 'थोड़ा सा गाना हो जाय।'

निशा ने कहा, 'इनका गाना सुनिए जो इस गुण के गुरू हैं। मुझ को तो अवकाश नहीं है। भीतर काम पड़ा हुआ है। खाने को कहें तो और लेती आऊँ?'

किसी ने कुछ नहीं चाहा। निशा चली गई।

उदयचन्द बोला, 'तुमसे प्रस्ताव करता तो शायद मैं सफल हो जाता।'

'कैसे मूर्ख हो!' अचल ने हँसते हुए कहा; 'निशा मेरी दासी थोड़ी ही है। मुझ से ही गाने को कहो और मेरा मन न चाहे तो क्या मैं गा दूंगा?'

× × × ×

'तुम्हारा चित्र बनाऊंगा, अचल ने निशा से कहा: 'पेन्सिल से बनाऊंगा।'

'अर्थात् काग़ज़ पर निशा का जो मुँह पेन्सिल खींचेगी वह बिलकुल अंधेरी रात बनेगा जिसमें कुछ पहिचान में ही न आने पावे।'

'ऐसा बनेगा कि खुद निशा चकित हो जायगी। अपनी शरारती चितवन को देख कर खास तौर पर।'

'संसार भर जिसे सीधा कहे उसे तुम टेढ़ा कहोगे! पेन्सिल काग़ज़ हाथ में चाहे जिसको चाहे जैसा गोद दो।'

'तुम्हारे शरीर की भांति भांति की स्थितियों के नमूने लूंगा।'

'रसोई जिमाने के समय के भी!'

'हां, हां ज़रूर।'

'और किसी के भी नमूने लोगे?'

'क्यों नहीं? जिस किसी की अंग-स्थिति निगाह की पकड़ में आजाय उसी को नमूना बना लूंगा।'

'कुन्ती की भी?'

'कोई डर नहीं। हिचकूंगा नहीं।'

'और जो वह हिचकी तो ?'

'तो मनाऊँगा थोड़े ही ।'

'उसके चित्रों का क्या करोगे ?'

'उसी को दे दूँगा या सुधाकर को दे दूंगा यदि उसने इच्छा प्रकट की तो । और सहज ही मिल गया तो —बहुत दिन से मिला नहीं—'

'और मेरे चित्र ?'

'कुछ तुमको दे दूंगा और कुछ अपने पास रख लूंगा । बटवारा हो जायगा ।'

'और यदि एक ही चित्र को हम दोनों ने पसन्द किया तो क्या चुनाव के लिए चिट्ठी डालोगे ?'

'न । तुम्हारा चुनाव पहले, मेरा पीछे । तुम्हारी बात पहले, मेरी उसके बाद ।'

'अच्छा अपना यह हक़ मैं तुमको दे दूंगी ।'

[२९]

'मैं आज जल्दी सोऊँगा', सुधाकर ने कुन्ती से कहा।

'मुझको तो नींद आ ही नहीं रही है', कुन्ती बोली।

'इतनी चलती फिरती रहती हो, देह को इतना थकाती हो तो भी तुमको नींद की कमी ही रहती है।' सुधाकर ने जमुहाई लेते हुए आश्चर्य प्रकट किया।

कुन्ती ने सोचा, 'पहले ये कितना मनाया करते थे ! अब जब तक मैं कोई तूफ़ान न खड़ा करूँ तब तक इनके कान पर जूँ तक न रेंगेगी।'

'मेरा आज माथा फटा जा रहा है', कुन्ती ने कराह लेकर कहा।

सुधाकर ने पूछा, 'अलमारी में से शीशी उठाऊँ ?'

कुन्ती के मन को आंसा: 'अब इनको इस बात के लिए भी पूछना पड़ता है !'

कुन्ती ने उत्तर दिया, 'नहीं। दवा कदापि न लूंगी।'

सो जाओ, दो एक घंटे में अपने आप अच्छा हो जायगा।'

सुधाकर यह राय देकर चुप हो गया, 'धूप में घूमने का कारण है।'

× × × ×

दूसरे दिन कुन्ती पतिगृह ज़रा देर से पहुँची। सुधाकर उसकी बाट देख रहा था।

सुधाकर ने पूछा, 'आज इतनी देर कहां लगा दी ?'

कुन्ती ने झूठ बोला, 'मां के पास थी। फिर निशा से बातें करती रही। क्यों ? क्या हो गया ?'

सुधाकर ने ज़रा आंख गड़ाकर कहा, 'मां जी ने तो तलाश करने के लिए यहां नौकर भेजा था।'

कुन्ती ने झूठ को और अधिक दृढ़ किया, 'वह उस समय की बात होगी जब मैं निशा के पास थी। निशा के घर ज़रा देर तक रही। सीधी वहीं से आरही हूं।'

'निशा के घर, यानी उसके मायके में या अचल के यहां ? 'सुधाकर ने नरम स्वर में प्रश्न किया।

'अचल के यहां,' कुन्ती ने उत्तर दिया 'क्या बात है ? मेरे बिना कौन सा काम अटक गया था ?'

'मैं आज सिनेमा देखने जाऊँगा,' सुधाकर बोलाः और तुमको अवश्य ले जाऊँगा। कुछ उदास सी दिखती हो।'

'बस इतने ही के लिए अटके हुए थे ?'

'यह कम नहीं है। चलो।'

'मेरे सिर में दर्द है परन्तु चली चलूँगी।'

'वे दोनों चित्रपट देखने के लिए गए लौटने पर दोनों चित्रों, अभिनयों इत्यादि पर बात चीत करते रहे।

मन में कुन्ती के एक क्षोभ था—सुधाकर ने इतने सवाल क्यों किए थे ? वह बराबर अचल के मकान पर ही रही थी, परन्तु झूठ बोलने पर उसको क्षोभ नहीं था—।

× × × ×

कुन्ती घर के बाहर जाने को ही थी कि सुधाकर उस दिन काम पर से समय के पहले आगया। कुन्ती ठम ठमाई। बोली, 'चाय का प्रबन्ध करके ज़रा घूमने जाऊँगी।'

सुधाकर ने कहा, ' मोटर लिए जाओ। लौटने का समय ड्राइवर को बतला देना, वह लिवा लायगा।'

कुन्ती—'मुझको कई जगह जाना है। वैसे भी मुझको पैदल जाने आने का ही अभ्यास है।'

सुधाकर—ड्राइवर पहुंचा आवेगा।'

कुन्ती—'तुम भी तो कहीं जाओगे न।'

सुधाकर—'अभी तो कहीं नहीं जाऊँगी। सांझ को देखा जावेगा।'

कुन्ती—'मुझको काफ़ी समय लग जायगा। कहो तो न जाऊँ ?'

'मैं कब रोकता हूँ !' रोकने की इच्छा होते हुए भी सुधाकर ने कहा 'तुम जाओ। मोटर कहां भेजूँ और कब।'

सोचकर कुन्ती बोली, कुछ नहीं कह सकती कौन कब मिले।'

चाय का प्रबन्ध करके कुन्ती चली गई।

वह सोचती थी, 'क्या ड्राइवर मेरी इत्तिला करने के लिए पीछे लगाया जा रहा था ? स्त्री की स्वतन्त्रता का स्वांग समाप्त करके पति के स्वामित्व का शासन स्थापित किया जा रहा है !'

पति ने सोचा, 'मेरी कुछ भी परवाह नहीं ! जितनी ढील देता जाता हूं मामला उतना ही आगे बढ़ता जारहा है !'

उसके लौटने पर जो बात सुधाकर नहीं पूछना चाहता वह उसके मुँह से निकल पड़ी।

'कहां कहां गई थीं ?'

जो बात कुन्ती के मन पर उतरा रही थी और जिसको वह फिर किसी समय कहने का निश्चय कर चुकी थी उसने कह डाली,

'तो अब एक हाज़िरी का रजिस्टर रख लूँगी। इतने बजे घर से गई, कहां कहां कितनी देर ठहरी, इतने बजे लौटकर आई, यह सब उसमें टीप दिया करूँगी।'

'सुधाकर हँसने लगा। हँसते हुए ही बोला, 'रजिस्टर तो तुम रक्खो मेरा। गृह-स्वामिनी जो ठहरीं। मैं तो महज़ मज़दूर हूं।'

× × × ×

कुन्ती ने एक दिन निश्चय किया, 'मैं न केवल इस साल अच्छी श्रेणी में बी० ए० पास करूँगी बल्कि इसके बाद एम० ए० की भी परीक्षा दूंगी।' इस निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए वह अचल के घर पर और अधिक जाने लगी।

उस दिन निशा अपने मायके गई हुई थी और बैठक में अचल के साथ उसका मित्र उदयचन्द बैठा हुआ था। पहले तो बैठक में जाने से

उसका पैर ज़रा सा ठिठका, फिर उसने दृढ़तापूर्वक प्रवेश किया। दोनों ने उसका स्वागत किया। पढ़ने लिखने की वार्ता के बाद गायन–वादन की चर्चा हुई।

अचल ने अपने मित्र से कहा, 'तुमने कभी इनका तबला सुना?'

उसने उत्तर दिया, 'गाना सुना है, तबला नहीं सुना'

अचल के अनुरोध पर भी कुन्ती ने गाने से नाहीं करदी।

तबला बजाने से इनकार नहीं किया।

अचल ने मधुर स्वर में गाना आरम्भ कर दिया। कुन्ती ने मीठे हाथ से उसके गाने का साथ दिया। ताल में उसकी कांच और सोने की दो दो चूड़ियां कभी कभी खनक पिरो देती थीं। अचल ने गाते गाते चित्र बनाने की भी सोची।

गायन की समाप्ति पर उसने कहा, 'तुम्हारा एक रेखा–चित्र तो मैं अभी बना सकता हूँ।'

'न', कुन्ती ने प्रतिवाद किया, 'मैं चित्र-वित्र खिंचवाने के लिये नहीं बैठूँगी। निशा कब आवेगी?'

'कल दोपहर बाद', अचल ने उत्तर दिया: 'मायके में मिल जायगी। हो आओ।'

'न, देर हो गई है। कल आकर मिल लूँगी। अब तो जाती हूं', कुन्ती ने कहा।

कुन्ती चली गई।

× × × ×

सुधाकर कुढ़ रहा था, झुँझला रहा था। जैसे ही कुन्ती आई बोला, 'बड़ी देर से बाट देख रहा हूँ। माता जी के यहां पुछवाया तो पता नहीं; निशा के मायके में दिखवाया तो पता नहीं। कहां थीं?'

कुन्ती ने लापरवाही के साथ उत्तर दिया, 'योंही। कुछ काम ही था—परीक्षा की तैयारी पक्के ढंग पर शुरू करदी है।'

'यानी ?' सुधाकर ने ज़रा डरते डरते पूछा ।

'यानी', कुन्नी ने निश्चिन्तता के साथ जवाब दिया, 'अचल के यहां तबला सीख रही थी और किताबों की बात कर रही थी ।'

सुधाकर ने सोचा, 'दार्शनिक और तबला !'

ज़रा रुखाई के साथ बोला, 'परन्तु विलम्ब बहुत हो गया ।'

'क्या विलम्ब हो गया ? घण्टे आध घंटे की देर, कुछ देर में देर है ?'

'मैं तो एक पहर से इन्तज़ार कर रहा हूँ ।'

'तो जल्दी आकर ही यहां क्या कर लेती ?'

'घर पर कोई काम ही नहीं है ?'

'बहीखाते–बहीखाते लिख लिखाकर ही तो गई थी ।'

'इतनी चला फिरी तो अच्छी नहीं लगती ।'

'तो किसी जगह कहीं लिखकर टांग दो न कि इतनी चलूं और इतनी फिरूं ।'

'मुझ ही से इतने सवाल ?'

'क्यों ? तब फिर किससे सवाल करूं ? तुम चाहे जो कुछ कह जाओ और मैं जवाब भी न दूँ ?'

सुधाकर एक क्षण चुप रहा । मुलायम पड़ कर बोला, 'खूब आज़ादी के साथ रहो, पर थोड़ा सा समय मेरे आमोद–प्रमोद के लिए भी तो चाहिए । अगर मैं ऐरीग़ैरी जगह जाने लगूं तो क्या तुमको अच्छा लगेगा ?'

'मैं कब रोकती हूँ ? ऐरीग़ैरी जगह तो मुझको नहीं जाना चाहिए । केवल दो चार घंटे के लिए बाहर चली जाती हूँ; सो भी, जब यहां बैठे बैठे, कमरों के चक्कर काटते काटते, बुआजी के वार सहते सहते, बहीखातों को लौटते पलटते, नौकर नौकरानियों को हुकुम देते देते उकता जाती हूँ, तब । वह भी तुम्हें नहीं रुचता, और, उस पर भी आज़ादी आज़ादी कहते नहीं अघाते !'

मेल जोल क़ायम करने के प्रयोजन से सुधाकर ने प्रस्ताव किया, 'आज सिनेमा देखने चलोगी ?'

'क्या भांडों का नाच ?' कुन्ती ने व्यङ्ग किया।

सुधाकर भी व्यङ्ग में ही उत्तर देना चाहता था, परन्तु उसने अपना दमन कर लिया। बोला, 'नहीं। अच्छा है। पौराणिक खेल है।'

सिनेमा देखने के प्रस्ताव को दण्ड प्रदान की सी आज्ञा समझकर कुन्ती ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मैं नहीं जाऊँगी। देखते देखते आंख पथरा जाती है और सिर में दर्द हो उठता है। संगीत का सर्वनाश होते हुए देखकर जी अलग मतलाने लगता है।'

'तो मैं अकेला ही चला जाऊँगा, सुधाकर ने निश्चय प्रकट किया"।

कुन्ती ने हठ को ढीला करते हुए कहा, 'मारे धकेले कहो तो मैं भी चली चलूं। जी तो नहीं चाहता।'

'कदापि नहीं,' सुधाकर बरबस हंसते हुए बोला: 'मैं अकेला ही जाऊंगा।'

सुधाकर चला गया। कुन्ती ने खाना खाकर एक पुस्तक उठाली। थोड़ी देर पढ़कर रखदी और जा लेटी। थोड़ी देर छटपटाती रही। फिर सो गई। सुधाकर ने लौट आने के बाद उसको जगाने की चेष्टा की, परन्तु वह सफल न हो सका।

[३०]

सुधाकर ने काम पर जाने के लिए मोटर संभाली। थोड़ी दूर चलाकर रुख अचल के घर की ओर कर दिया। मोटर को अचल के दरवाज़े न रोककर, कुछ डग पहिले ही थाम लिया। भोंपू पर हाथ डाला और खींच लिया। फिर बिजली और पैट्रौल को बन्द करके गाड़ी पर से उतर पड़ा। जाकर देखा, दरवाज़ा बन्द था। न तो कुन्डी खटखटाई और न पुकार लगाई। एक क्षण खड़े होकर इधर उधर देखा और लौट पड़ा। गया धीरे धीरे था। लौटा तेज़ी के साथ। मोटर को मोड़ा और काम पर चला गया।

जब संध्या समय अपने घर आने को हुआ, तब मोटर में बैठते ही तुरन्त नहीं चला। कुछ क्षण यों ही बैठकर पैरों से गियर और ब्रेक को दबाता छुटकाता रहा और संचालक पहिए पर हाथ की उंगलियों से ताल सी देता रहा। कुछ क्षण बाद चल पड़ा। घर के लिए सीधा मार्ग नहीं पकड़ा, एक चक्करदार एकान्त वाली सड़क से गया।

संध्या हो चुकी थी। उजाला कम, अंधेरा अधिक। मोटर की बत्तियों के प्रकाश में दूर से ही उसने सामने से आते अचल को पहिचान लिया। मोटर धीमी की, फिर तेज़ करके निकल जाने का विचार किया। आधे क्षण में ही एक पैर क्लच पर और दूसरा ब्रेक पर जा पड़ा। मोटर बहुत थोड़ी दूर चलकर रुक गई। सुधाकर को अचरज हुआ। वह मोटर को आगे न बढ़ा सका—अचल बहुत निकट आगया था। उसने मोटर को बन्द कर दिया और बत्तियां बुझा दीं। अचल नहीं देख पाया कि सुधाकर की भौंहें थोड़ी सी सिकुड़ गई थीं।

गाड़ी से उतरते ही उसने कहा, 'बहुत दिनों में मिले अचल—सो भी अकस्मात!'

सुधाकर ने मुस्कराने की चेष्टा की—ओठों के एक कोने से ही।

अचल को इस स्थल पर उससे भेंट करने की कोई आशा नहीं थी। उसके ओठों के दोनों कोनों पर मुस्कराहट आई जैसे गम्भीरता के दोनों किनारों को फोड़कर बाहर निकलने का प्रयास कर रही हो।

अचल बोला, 'हां, बहुत दिनों से नहीं मिले। मैं बहुत व्यस्त रहा और तुम भी।'

उसके कंठ तक एक सवाल आया, 'खूब सुखी हो न?' परन्तु वहीं अटक कर भीतर लौट गया।

सुधाकर ने कहा, 'मुझको काम के मारे अवकाश ही नहीं मिला।'

उसने अपनी कुछ बीधनें गिनाईं। अचल चुप चाप सुनता रहा। अब उसके भीतर या ओठों पर गम्भीरता की कोई जकड़ न रही थी।

सुधाकर अपने क्लब की उससे कोई चर्चा नहीं करना चाहता था; वहां का जाना अचल ने छोड़ ही दिया था। किस काम में व्यस्त रहता है, सुधाकर उससे यह भी नहीं पूछना चाहता था। जल्दी घर पहुँचने की इच्छा थी, परन्तु वह उसे तुरन्त नहीं छोड़ सकता था।

उसने अचल से यों ही पूछा, 'क्या करते रहते हो आज कल?'

अचल ने पूरे कार्य-क्रम को न बतला कर केवल यह उत्तर दे पाया,—'चित्र बनाने की धुन में रहता हूँ। चित्रकारी सीख रहा हूँ। बड़ा मनोरञ्जक विषय है। काव्य, संगीत और चित्रकारी—तीनों—बहिनें बहिनें हैं। तीनों का उद्गम स्थान एक ही है—'

'काम वासना, सैक्स, नारी, इन तीनों का उद्गम-स्थान है' सुधाकर के जीभ तक आगया, परन्तु कुन्ती के आतङ्क भरे नेत्रों और बुआजी की करुण चौखलाहट की कल्पना ने जो अचानक ध्यान में आगई थी, उस भाव को खुला रूप न देने दिया।

सुधाकर ने जबरदस्ती हँसने का प्रयत्न करते हुए उसको बीच में ही टोक दिया,—'अरे भाई, दिन भर के थके हुए को कला पर व्याख्यान सुनने की भूख बिलकुल नहीं होती। मुझको तो इस समय रोटी की भूख अधिक लग रही है।'

सुधाकर की बात का यह अंश झूठा था। पेट खाली था, परन्तु इस समय और इस स्थान पर उसको भूख नहीं लग रही थी। उसने क्षीण-स्वर में अचल से अनुरोध किया,

'चलो न मेरे साथ, बुआजी की परोसी रसोई तुमने बहुत दिनों से नहीं खाई है।'

अचल को सुधाकर के क्षीण स्वर में कोई आग्रह नहीं जान पड़ा। वैसे भी उसकी इच्छा अपने ही घर पर भोजन करने की थी।

बोला, 'नहीं भाई, फिर कभी देखा जायगा। अभी तो टहलने जा रहा हूँ।'

सुधाकर ने आग्रह नहीं किया।

विदा लेकर, मोटर में बैठने की बात उसके मन में आई ही थी कि अचल ने प्रश्न किया, 'आज इस सड़क पर से कैसे निकल पड़े?'

सुधाकर ने साधारण स्वर में उत्तर दिया, 'यों ही, कोई विशेष कारण न था।'

अचल को भी विश्वास था कि वह मुझसे भेंट करने के प्रयोजन से इस सड़क पर नहीं आया होगा।

सुधाकर चला गया। अचल मुड़कर कुछ क्षण जाती हुई मोटर को देखता रहा। फिर नीचा सिर किए हुए वह भी धीरे धीरे टहलता हुआ बढ़ गया।

[३१]

कुन्ती की सहेली ने एक दिन बातों बातों में उससे कहा, 'बहिन माफ़ करो तो कहूँ ?'

'ज़रूर कहो, कुन्ती बोली 'मुझको साफ़ बात कहनी सुननी बहुत अच्छी लगती है। क़सम है छिपाना मत।'

'सहेली ने सहमते सहमते कहा, 'कुछ लोग तुम्हारा अचल बाबू के यहां इतना अधिक जाना आना पसन्द नहीं करते। कुछ कम करदो तो क्या हर्ज़ ?'

'निशा के पास भी जो मेरी जन्म सखी है ?'

'नहीं, जब निशा मायके होती है तब।'

'समाज यदि इतना गन्दा है कि उसको फूलों में भी दुर्गन्धि आती है तो हमको उसकी ज़रा भी परवाह नहीं।'

'समाज में रहकर ही तो चलना है न ? सोचो बहिन।'

'क्या सोचूँ ?'

'शिक्षित स्त्रियों को अपना आदर्श पेश करना है। अपनी कम पढ़ी लिखी बहिनों को साथ लेकर चलना है न ? हम लोगों को उनके हित का भी तो विचार रखना है।'

'तो मैं ऐसा क्या करती हूं ?'

'जैसे पुरुषों के सामने का नाच गान।'

'वह त मैंने कभी का छोड़ दिया।'

'लोग अचल के सामने नाचने के प्रसंग पर उँगली उठाते हैं।'

'पर निशा भी तो वहां होती है।'

'लोग तो देखने नहीं जाते।'

'कौन लोग हैं ये ?'

'मानलो मैं ही सही। और भी हैं अपने ही में से।'

'तो समझ से काम क्यों नहीं लेते ये ?'

'पहले समाज में समझ पैदा करो, समाज को उठाओ।'

'स्वयं चाहे कहीं खप जाओ!'

'समाज सुधार त्याग तो पहले चाहता है।'

'तुम लोग करो, मेरे बसका नहीं।'

'लोग कहते हैं ऐसी पढ़ी लिखी स्त्रियों की ज़रूरत ही क्या जो न अपने को कुछ लाभ पहुंचा पावें और न समाज को कुछ दे सकें!'

× × × ×

सुधाकर काम पर गया और शीघ्र ही लौट आया। कुन्ती घर पर नहीं मिली। बड़ी खीझ हुई। मन लगाने के लिए कई काम ढूढ़े ढकोरे बही खाते, तक़ाज़े, इधर उधर बिखरी हुई पुस्तकों का चुनकर रखना। जब यह सब कर चुका तो सन्दूकों के कपड़े देखे—कौन से हैं और कैसी हालत में हैं। फिर ज्यों के त्यों रख दिए। शायद कुन्ती के नाम आई हुई कोई चिट्ठी कहीं पड़ी मिल जाय। थोड़ी देर इस प्रयास का पीछा करके फिर छोड़ दिया। क्षोभ का एक ज्वार उठा:

'मैंने किस विपत्ति के साथ अपना ब्याह किया!'

फिर आराम कुर्सी पर जा लेटा। सोचने लगा।

'सखी सहेलियों के पास जाती है सो तो ख़ैर ठीक ही है। पर पैदल क्यों जाती है? मोटर से क्यों परहेज़ करती है? हवा खोरी के लिए मोटर से घृणा नहीं है फिर सहेलियों के ही घर जाने के लिए मोटर क्यों नहीं चाहती? अचल इतना क्या पढ़ाता है? कहता था विवाह नहीं करूंगा। अब भले एक विधवा के साथ विवाह कर लिया अचल कुन्ती को कौन सी अनुभूति देता है!'

वह कुर्सी को छोड़कर कमरे में टहलने लगा। कुछ क्षण उपरान्त उसने कपड़े पहिने। निश्चय किया,

'मैं खुद ढूं ढूं कहां है और क्या कर रही है और आज दो दो बातें अचल से भी करलूँ—उस दार्शनिक से! जो जेल की दीवारों के

भीतर नाच सकता है वह दूसरों की इज्ज़त भी ले सकता है !! परन्तु अभी तक कुन्ती पतित नहीं हुई है······ ।'

दरवाज़े तक जाकर सुधाकर लौट पड़ा और उसने कपड़े उतार दिए।

'ऐसा दुष्ट विचार मुझको अपने मन में नहीं लाना चाहिए। अचल मूर्ख हो सकता है, परन्तु वह भ्रष्ट नहीं है और कुन्ती महज़ सनकीली है और कोई बात नहीं।'

सुधाकर फिर कुर्सी पर बैठ गया।

'तो भी पता तो लगाना चाहिए कहां है और क्या कर रही है। बस इस अनुसन्धान के उपरान्त फिर मुझको और कुछ नहीं करना है। यदि सन्देह की कोई बात न निकली तो फिर कभी भी ढूँढ़ खोज नहीं करूँगा और न कभी कुन्ती से पूछूंगा—कहां गई थीं ? क्या करने गई थीं ? चाहे वह कहीं जाया करे, और कुछ भी किया करे।'

सुधाकर ने फूला नौकरानी को बुलाया। उसने बहुत संभाल कर सावधानी के साथ फूला से कहा, 'देखो बहूरानी कहां गई हैं।' उनसे कोई बात मत करना। अपने को दिखलाना भी मत मुझको आकर बतला देना। फिर मैं उनके पास जाऊंगा। कुछ काम है।'

फूला को उद्देश्य की वास्तविकता समझने में ज़रा भी कठिनाई नहीं हुई। समझ गई—मुझको जासूसी पर नियुक्त किया गया है। फूला ज़रा थमी। कुछ और समझना चाहती थी, सुधाकर का थोड़ा सा विश्वास और अर्जित करना चाहती थी।

सुधाकर ने कहा, 'जा न, कोई और खास बात नहीं है।' फूला चली गई।

सुधाकर ने फिर कुछ ढूँढ़ खोज शुरू की। अबकी बार एक दराज़ में हाथ के बनाए हुए कुछ चित्र मिले। कुन्ती के और अपने भी। कुन्ती की कई अंगस्थितियों के, मुस्कानों के, हठों के, क्षोभ के। अपने चित्र भी कई प्रकार के। परन्तु अश्लील कोई भी नहीं। कुन्ती और अचल का भी कोई चित्र नहीं मिला।

कुन्ती ने ये चित्र खींचने ही क्यों दिए ? भिन्न भिन्न अंगस्थितियों के लिए तो काफ़ी समय के लिए बैठना पड़ा होगा। चित्र हैं तो निर्दोष। मेरे भी हैं, और मैं कभी अचल के सामने चित्र खिचवाने को बैठा नहीं। स्मरण मात्र के आधार पर चित्र खीचे गए हैं क्या ? कुन्ती के भी ? संभव है। परन्तु वह अचल के घर आती जाती है और ये चित्र उसको भेंट किए गए हैं इसीलिए वह चित्र खिचवाने के लिए बैठती रही होगी। नहीं तो, ये चित्र उसने मुझको क्यों नहीं दिखलाए ? परीक्षा की पक्की तैयारी की क्या यही बानगी है ? हुं !

सुधाकर के मन में ईर्ष्या ने पूरा डेरा डाल लिया।

फूला लौटी। सुधाकर उस समय कमरे में बैठा हुआ था। फूला ने कमरे में आकर पहले चतुरता के साथ सब ओर देखा—सुधाकर ने भी उसकी इस क्रिया को परखा। फिर, वह एक हाथ की उँगलियों से दूसरे हाथ की उंगलियों के नाखून रेतने सी लगी। ज़रा चुप रही। फिर बोली,

'बाबू जी—' फूला को खांसी आई।

सुधाकर का क्षोभ सीमा उल्लंघन करने को हुआ, परन्तु उसने नियंत्रण कर लिया।

उपेक्षा के साथ प्रश्न किया, 'मिलगईं थीं न ?'

उत्तर मिला, 'हां देख आई हूं, बाबू जी,'

स्वर को संयत रखने का प्रयत्न करने पर भी सुधाकर के गले में कड़ाई आ गई।

बोला, 'कहती क्यों नहीं कहां हैं ?'

नौकरानी ने उत्तर दिया, 'उनके मायके के पड़ोस में जो एक बाबू मोटे ताज़े से रहते हैं, जिन्होंने विधवा के साथ कराव किया है, उनके घर में गाना बजाना हो रहा है। एकाध बाबू और बैठे थे। मालिकिन तबला बजा रही थीं।'

जो लोग सोचते हैं कि अकेले मालिक नौकरों पर अत्याचार करते हैं, वे भूलते हैं—मालिक को भी कभी कभी नौकर का अत्याचार सहना

पड़ता है और इसी अत्याचार के सहारे नौकर की नौकरी को दीर्घजीवन मिल पाता है।

सुधाकर ने आदेश दिया, 'जाओ काम करो। ये सब मेरे मित्र हैं, जाने हुए लोग हैं।'

जैसे मानो फूला ने कोई ब्योरा मांगा हो। वह 'जी' कह कर चली गई। जाते समय उसके ओठों पर एक सूक्ष्म मुस्कराहट थी—मानो कह रही हो तुमने जो सफ़ाई दी है वह बिलकुल लचर है और तुम निरे बुद्धू हो। सुधाकर ने इस मुस्कराहट की एक झलक को देख लिया। कलेजे में छेद करने के लिए काफ़ी थी।

सन्ध्या के लगभग कुन्ती आई। सुधाकर का उतरा हुआ चेहरा देख कर चिन्तित हुई।

कारण जानने के लिए उसने पूछा, 'आज क्या बहुत परिश्रम करना पड़ा है?'

सुधाकर ने रुखाई के साथ उत्तर दिया, 'नहीं तो। आज तो मैंने कोई काम नहीं किया। घंटे भर के भीतर ही लौट आया था।'

'तो उदास क्यों हो? क्या बात है?'

'उदास बुदास कुछ नहीं हूं। खीझ रहा हूं।'

'क्यों?'

'घंटों हो गए। घर में कोई था नहीं। मन नहीं लगा। तड़पता रहा। तुम कहां गई थीं।'

कुन्ती ने बिना किसी पूर्व निश्चय के ही झूठ कह डाला, 'मायके गई थी। अब निशा के यहां से आ रही हूं।'

सुधाकर ने बरबस मुस्कराहट और प्रच्छन्न बर्बरता के साथ कहा, 'और भी कहीं?'

कुन्ती बोली, 'क्या मतलब है? और कहीं सही, फिर?'

'ठीक है,' कह कर सुधाकर बाहर चला गया।

कुन्ती झुंझला गई। मेज़ पर रक्खी हुई कुछ पुस्तकों को उठा कर और वहीं पटक कर रसोई घर में चली गई। थोड़ी देर में सुधाकर फिर आ गया और भीतर के कमरे में जाकर पलंग पर लेट गया।

'अपनी पत्नी का ही शासन न कर पाया तो धिक्कार है। पर करूँगा सभ्य उपाय द्वारा,' सुधाकर ने सोचा।

[३२]

बिना कुछ खाए पिए ही कुन्ती थोड़े समय के बाद रसोईघर से लौट आई। उसने सुधाकर से भोजन करने का अनुरोध किया।

सुधाकर बोला, 'भूख नहीं है।'

कुन्ती ने भी कहा, 'मैं भी नहीं खाऊंगी।'

'मैंने कह तो रक्खा है कि मैं एक आवारा आदमी हूं, कब आता हूँ कब जाता हूँ इसका कुछ ठीक नहीं, इसलिए मेरी प्रतीक्षा न करके खाना खा लिया करो।'

'आज तो यहीं हो।'

'सो क्या हुआ? भूख नहीं है—और आगे भी शायद ही कभी लगे।

कुन्ती घबरा गई। पूछा, 'क्यों?'

सुधाकर ने ठंडे, सधे हुए, बारीक स्वर में उत्तर दिया, 'अब सवालों की ज़रूरत नहीं है। खाना खाओ और सो जाओ। सवेरे से फिर वही ग्रन्थ, अध्ययन, संगीत, तबला, मृदंग, ढोलकी की खबर लेना।'

'ढोलकी !!! ढोलकी तो मैं नहीं बजाती। आज तुमको क्या हो गया है?'

'अजी मैं ठहरा दो कौड़ी का आदमी मुझे हो ही क्या सकता है?'

'दो कौड़ी के आदमी! आवारा!! यह सब आज क्या सुन रही हूँ?'

'सच तो कहा।'

'तबतो मैं दो कौड़ी की हूँ! आवारा भी!!'

'ज़्यादा बात मत करो। मैं अस्वस्थ हूं।'

'आज इतनी बड़ी बात कैसे कहली?'

'तुम चाहे जो कुछ कहलो और करती जाओ! मैं चुपचाप सुनता सहता चला जाऊँ?'

इसी समय चौखट की बग़ल से फूला ने ज़रा सा घूँघट खींचकर कहा, 'बहूजी।'

कुन्ती ने तेज़ होकर पूछा, 'कब से खड़ी है ?'

'अभी अभी तो आई हूँ। खाना खा लीजिए, ठंडा हो रहा है', नौकरानी ने कहा।

कुन्ती को विश्वास था कि खड़ी खड़ी सब सुन रही थी। कड़ककर बोली, 'जा यहां से बेहूदी। किसी को भूख नहीं है। रसोई उठवादे और चौकीदार से किवाड़ बन्द करवादे।'

फूला चली गई। कुन्ती अलग जा लेटी। पति पत्नी में से किसी ने किसी को नहीं मनाया। क्रोध के आतङ्क से कुन्ती जलती रही, परन्तु उस रात उसको नीद आई ही न हो ऐसा नहीं हुआ। उसके अन्तस्तल से एक कल्पना उठी।

'अचल गारहा है और वह तबला बजा रही है—पति–गृह की बैठक में। गाना समाप्त होते ही वह अचल की गोद में जा बैठी और लिपट गई। उसी समय फूला पान बनाकर ले आई। अचल ने नौकरानी के सामने कहा, 'तुम मेरे जीवन की संगीत और चित्रकारी की शिल्प हो'। वे दोनों अलग नहीं हुए। फूला ने कहा, 'बाबू जी उधर से यह सब देख रहे हैं'। 'मैं उनको अभी देखती हूँ', कुन्ती ने कहा। तुरन्त अचल की बाहों को छोड़कर अलमारी के पास गई। बन्दूक़ उठाई। कारतूस डाला और जिस ओर सुधाकर के छिपकर देखने का सन्देह था, धड़ाम से दाग़ दी। एक आह का शब्द हुआ',—और कुन्ती की कल्पना टूट गई। घबराकर उठ बैठी। सवेरा हो चुका था। सुधाकर बिस्तरों में न था। कुन्ती ने अलमारी को खोलकर बन्दूक़ और कारतूस पहले देखे। ज्यों के त्यों रक्खे थे। परन्तु उस कल्पना पर उसको बहुत संताप न था।

नहा धोकर चाय की तैयारी के लिए रसोई घर में गई। इस काम की देख भाल वह स्वयं किया करती थी। उस कल्पना पर एकाध बार ध्यान गया। उसमें मिठास, ग्लानि, रौद्र और बीभत्स सब एक साथ थे।

एक को दूसरे से अलग नहीं करपाती थी। विस्मृत करने का प्रयास कर रही थी, परन्तु सफल नहीं हो पारही थी।

सोचती थी, यह कल्पना उठी ही क्यों ? कैसे ?

कुन्ती चाय ले आई। सुधाकर पलंग पर लेटा हुआ मिला।

'चाय लो' कुन्ती ने अनुरोध किया।

'नहीं पिऊंगा', सुधाकर ने अनुरोध को ठुकराया।

उस कल्पना की स्मृति ने कुन्ती के उखड़ते हुए क्रोध को दबा दिया।

बोली, 'रात को खाना नहीं खाया ! अस्वस्थ हो तो अकेली चाय पीलो, जी ठीक हो जाय तो काम पर चले जाना, वरना—'

'वरना तबला मृदङ्ग बजाने के लिए मैं कहीं न कहीं चलदूंगी। ठीक है न ?' सुधाकर ने फीकी मुस्कान के साथ कर्कश स्वर में टोका।

कुन्ती ने चाय का प्याला मेज़ पर पटक सा दिया।

क्षुब्ध स्वर में बोली, 'आज मैं तुमसे दो बातें कर लेनी चाहती हूँ।'

सुधाकर ने ठंडक के साथ कहा, 'मैं भी सब संकोच छोड़कर कुछ कहना चाहता हूँ।'

'शुरू करदो।'

'तुम अपनी दो बातें करलो, मुझको शायद ज्यादा कहना है।'

'अच्छा यही सही। मेरी समझ में आज की बात से आ गया है कि पारसाल मेरे ही नृत्य को तुमने रंडियों जैसा बतलाया था। पहली बात जो मुझको कहनी है वह यह है कि तुम क्या मुझको अपने पैर की जूती समझते हो ? यदि ऐसा है तो वैसी ही बर्तने की कोशिश करूँगी।'

'ऐसा नहीं है।'

'तब यह सब व्यङ्गबाज़ी क्यों ? अवारा ! मृदङ्ग, ढोलकी !! आज़ादी वाली आपकी वह सब डींग क्या हुई ?'

'मैं स्त्रियों की स्वतन्त्रता का अब भी वैसा ही पक्षपाती हूं। परन्तु उसकी एक सीमा है।'

'स्वतन्त्रता की परिभाषा या सीमा भी सुनलूं ।'

'मुझको नहीं मालूम, पर मैं यह चाहता हूँ कि मेरे साथ रहकर या मेरी अनुमति से चाहे जो कुछ करो, मेरी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कुछ मत करो ।'

'तुम्हारी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ !!! क्या किया है मैंने ?

'कल अचल के यहां गई थीं ?'

'नहीं तो ।'

'झूठ बोलती हो ।'

'किसने कहा ?'

'फूला ने । मैंने उसको ढूंढ़ने के लिए भेजा था ।'

'यह कहो । मेरे पीछे जासूस लगाया था ! मेरे चरित्र पर शंका है !! है न ! इसीलिए दो कौड़ी की हूं ! आवारा हूँ !! सड़कों पर मारी मारी फिरने वाली औरतों की तरह ढोलकी बजाती फिरती हूं !!! हां, अब एक जासूस घर पर भी मेरे ऊपर रक्खो ।'

'मुझको ज्यादा नहीं कहना है । स्त्री के लिए उसका घर ही राज्य और रनवास है ।'

'और बाहर कुछ नहीं ?'

'है और नहीं भी—तबले सारंगी के लिए कुछ नहीं ।'

'यानी—यानी मैं—'

'यानी व्यानी कुछ नहीं ।'

कुन्ती दांत भींचकर रह गई । उसको वह कल्पना फिर याद आई । बड़ी नम्रता के साथ बोली, 'चाय पीलो, फिर बातचीत करो । जो कुछ कहना हो कह लेना, सब कुछ सह लूँगी ।'

'मैं सिवाय पानी के और कुछ भी नहीं खाऊंगा पियूंगा । मैंने प्रण कर लिया है ।'

साधारण उत्सुकता से कुन्ती ने पूछा, 'क्या ?'

'आमरण अनशन।' सुधाकर ने पैने स्वर में उत्तर दिया। वह विस्तरों में ज़रा उठ पड़ा था जब उसने यह उत्तर दिया।

कुन्ती के गले में जैसे कुछ अटक गया। नियन्त्रण करके एक क्षण पीछे बोली,

'सत्याग्रह का यह रूप समझ में आया तुम्हारे!'

सुधाकर को अपने ऊपर कोई सन्देह या अविश्वास नहीं था। अपने प्रण पर उसको हर्ष था—उन्माद था। उसको अब आगा पीछा कुछ नहीं सोचना था। तुलसीदास की एक चौपाई को उसने उत्तर में उद्धृत किया—

'जाके जिय भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।'

वह इसके सही या ग़लत प्रयोग पर प्रसन्न था।

'चादर भई झीनी, भई झीनी' कुन्ती को याद आया। एक क्षण के लिए कोई पुराना दृश्य भी आंखों के सामने घूम गया—परन्तु एक ही क्षण के लिए।

सुधाकर ने अपने प्रण की प्रसन्नता में कहा,

'तुम्हारी प्रकृति उग्र है। वैसे तुम सुधरने की नहीं। जब तक मुझको विश्वास नहीं हुआ कि तुम सुधार मार्ग के लिए दृढ़ हो गई हो, मैं प्रण पर अटल रहूँगा।'

कुन्ती ने तीक्ष्ण स्वर में कहा, 'और यदि पुरुषों के स्पष्ट कदाचार और अत्याचार के कारण स्त्रियां ऐसे प्रण करने लगें तब!'

सुधाकर बोला, 'मैं तो ऐसा नहीं हूँ। तुमको किसी बात की कमी नहीं रही। फिर भी तुम्हारा यह ढंग! आश्चर्य होता है!!'

कुन्ती को स्मरण आ गया, इन्होंने आवारा मेरे लिए कहा था—और—और—

'आवारा तुमने मेरे ही लिए कहा था। अब कोई सन्देह नहीं रहा। कह दो न साफ़ साफ़,' कुन्ती ने कहा।

सुधाकर दांत पीसकर रह गया। उसने कुछ नहीं कहा।

कुन्ती का शरीर जल उठा। झमकों के मारे हृदय उठने बैठने लगा। घोर कठिनाई के साथ उसने अपना दमन किया। शिथिलता भासित हुई। उसने अपने को फिर संभाला। दृढ़ हुई। कुछ कहना चाहा। परन्तु कंठ को बेक़ाबू पाकर रह गई। कुछ क्षण उपरान्त जब आत्म-निर्भरता अवगत की तब बोली, 'तुमको कोई शिकायत नहीं रहेगी। तुम्हारी पूजा अर्चा में ही समय बिताया करूंगी—जब बाहर चले जाया करोगे, तब तुम्हारे चित्र की पूजा किया करूंगी।'

सुधाकर ने तिनक कर कहा, 'मुझको पूजा अर्चा की ज़रूरत नहीं है। जब तुम घूमने घामने चली जाया करोगी, तब तुम्हारे चित्र की पूजा मैं किया करूंगा, उसी चित्र की जिसको अचल ने बनाया है।'

कुन्ती की स्मृति पर फिर उस स्वप्न की एक बिजली सी कौंध गई।

कुन्ती फटे हुए स्वर में बोली, 'अचल ने तुम्हारा भी तो चित्र बनाया है। क्यों इतने तुच्छ हुए जा रहे हो ? इतने—'

सुधाकर ने टोका, 'कहलो जो कुछ और कहना हो। मैं बिलकुल बुरा नहीं मानूगा। मुझको क्रोध नहीं आने का। मैं अपने प्रण पर अटल हूं।'

कुन्ती ने फिर घोर नियन्त्रण किया। उसके मुँह से शब्द निकले,

'मैं वचन देती हूँ।—'

सुधाकर ने कहा, 'मैंने तुमको अपना प्रण सुना दिया है। मैं सहज ही नहीं फुसलाया जा सकता। एक दो दिन तुम्हारा रहन सहन देखलूँ फिर प्रण तोड़ दूंगा। मैं अपने प्राण मुफ्त ही में थोड़े ही छोड़ना चाहता हूं।'

कुन्ती क्षीण स्वर में बोली, 'लोग तुम्हारे इस प्रण को सुनकर मुझे कितना कलंक न लगावेंगे ?

'अभी लोग क्या क्या न कहते होंगे, सुधाकर ने अपना हठ जारी रक्खा।

और भी क्षीण स्वर में कुन्ती ने कहा, 'भगवान जानते हैं, मैं बिलकुल निर्दोष हूँ।'

'भगवान को झगड़ा करने के लिए मत बुलाओ; आवारगी छोड़ने के लिए उनकी सहायता मांगो,' सुधाकर बोला।

अच्छा! जोर से कहकर कुन्ती ने अपने सिर को दोनों हाथों से जकड़ लिया।

जब उसने सिर उठाया, आंखें लाल थीं-उनमें आंसू एक न था,—और चेहरा तमक गया था।

सुधाकर के ओठों पर फीकी मुस्कराहट आई। पीने के लिए उसने पानी मांगा। अपने प्रण के शिकार को चौकड़ी भूला हुआ देखकर वह सन्तुष्ट था।

'थोड़ा पानी पिऊँगा। केवल पानी और कुछ मत लाना।'

'हूँ' कहकर कुन्ती ऊँचा सिर किए हुए चली गई।

पानी लाने में ज़रा विलम्ब हुआ। सुधाकर के मन के नीचे स्तर ने सुझाव दिया,

'कहीं बाहर चली गई। फूला पानी लायगी। मन के ऊँचे स्तर ने उत्तर दिया, 'इतने नीचे मत बनो।'

कुछ क्षण उपरान्त दूसरे कमरे से आवाज़ आई 'धड़ाम! जैसे बन्दूक़ चली हो। और फिर, जैसे कोई गिरा हो।

सुधाकर हड़बड़ा कर उठा। उस कमरे की ओर गया। वहां जो कुछ देखा वह अत्यन्त भीषण था!

कुन्ती के सिर को फोड़ कर गोली उस पार हो गई थी। वह छटपटा भी नहीं रही थी बन्दूक़ एक ओर पड़ी थी।

सुधाकर ने धूमिल नेत्रों से मेज़ पर एक काग़ज़ देखा।

उस पर केवल इतना लिखा था :—

अचल मेरा कोई~~~~~—

आगे हाथ कांप गया था, केवल एक बिगड़ी हुई लकीर थी।



वर्मा जी की कृतियों पर

कुछ सम्मतियां

डा० अमरनाथ झा—वाइस चान्सलर काशी विश्वविद्यालय—'वर्मा जी की कृति प्रशंसा की अपेक्षा नहीं रखती। आजके सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार वे हैं।'

डा० धीरेन्द्र वर्मा—यह निश्चित है कि हिन्दी के यह सर्वश्रेष्ठ मौलिक लेखक हैं।

डा० श्री बाबूराम सक्सेना—हिन्दी साहित्यकारों में वर्मा जी का स्थान बहुत ऊँचा है। उपन्यासकार तो उनकी तुलना का कोई है ही नहीं।

श्री वियोगी हरि—साहित्यकार वृन्दावनलाल वर्मा को पाकर हमारे भारत राष्ट्र का मस्तक ऊँचा हुआ है।

माननीय श्री पंतजी–प्रधान मंत्री, यू० पी०–वृन्दावनलाल जी वर्मा का ऐतिहासिक उपन्यासकारों में विशिष्ट स्थान है।

N. C. MEHTA, I. C. S., Chief Commissioner, Himachal Pradesh, Simla writes :— "I have read some of the books by Shri Brindaban Lal Varma with great pleasure I have always found complete mastery of the language and unusual power of vivid description. His knowledge of Bundelkhand, its people and its folklore is unique and he deserves the warmest congratulations for putting before the public this exceptional knowledge so efficiently and vividly......"

वृन्दावनलाल वर्मा-साहित्य

प्रकाशित

उपन्यास

लक्ष्मीबाई	६)
कचनार	४॥)
मुसाहिबजू	१॥)
अचल मेरा कोई	३॥।)
गढ़कुंडार	४॥)
विराटा की पद्मिनी	५)
कुण्डली चक्र	२)
कभी न कभी	२॥)
प्रेम की भेंट	१॥)
प्रत्यागत	१॥।)
हृदय की हिलोर	१)

नाटक

राखी की लाज	१।)
झांसी की रानी	२)
काश्मीर का कांटा	१)
फूलों की बोली	१।)
बांस की फांस	१)
लो भाई पंचो लो	॥।)

प्रेस में

उपन्यास

माधवजी सिंधिया

सत्रह सौ उन्तीस

आनंदघन

टूटे कांटे

कहानी

हरसिंगार

दबे पांव

कलाकार का दण्ड

नाटक

हंस-मयूर

मंगलसूत्र

कब तक

नील कण्ठ

पीले हाथ

पायल

हमारा आगामी प्रकाशन—

"हंस मयूर"

अद्वितीय रोचक और कलात्मक नाटक

मयूर-प्रकाशन, मानिक चौक, झांसी।